सर्वोदय पद-यात्रा

दामोदरदास मूँदड़ा

अखिल भारत सर्व-सेवा-संघ-प्रकाशन
राजघाट, काशी

स्वर्गीय बापूकाका

—श्री किशोरलालजी मश्रुवाला—

को

जिनकी प्रेरणा और प्रोत्साहन के कारण ही ये
लेख उन दिनों 'हरिजन-सेवक' के लिए लिखे
गये थे—जिन्होंने स्वयं परिश्रमपूर्वक इनका
सम्पादन भी किया था, और आज
पग पग पर जिनकी स्मृतियों से
हृदय भर आता है।

अनुक्रम

सर्वोदय पद-यात्रा

पद-यात्रा का संकल्प : १ :

सेवाग्राम
६-३-'५१

उन दिनों विनोबाजी एक हफ्ते के लिए सेवाग्राम गये हुए थे। बापूजी के निर्वाण के बाद, वर्ष में एक बार प्रायः वे सेवाग्राम-आश्रम रह आते। इस बार तालीमी संघ का सातवाँ अधिवेशन भी था। दूर-दूर से लोग आये थे, जिनमें सर्वोदय-समाज के सेवक भी थे। गत वर्ष सर्वोदय-समाज के अनुगुल-अधिवेशन में विनोबाजी उपस्थित नहीं थे। लोग सहसा पूछ लेते कि आप हैदराबाद तो आ रहे हैं न? तो विनोबाजी 'ना' कह देते। परन्तु उनके इस जवाब से हैदराबाद-सम्मेलन के संयोजकों को एवं अन्य अनेक कार्यकर्ताओं को बड़ी निराशा हो जाती।

इसलिए जब सेवाग्राम में ता० ६ मार्च को सर्व-सेवा-संघ की एक जरूरी सभा के लिए सब लोग इकट्ठे हुए, तो सबने ही उनके हैदराबाद न जाने के विचार का एकमत से विरोध किया। कार्यसमिति की ओर से श्री शंकररावजी देव ने तथा स्वागत-समिति की ओर से श्री रामकृष्णजी धूत ने विरोध का प्रतिनिधित्व भी पुरजोर किया। प्रेम और उत्कटता के सामने विनोबा को हार माननी पड़ी।

शाम की प्रार्थना में अपना संकल्प प्रकट करते हुए उन्होंने कहा :

"आज यह तय हुआ है कि आगामी सर्वोदय-सम्मेलन के लिए मुझे हैदराबाद जाना है। कल सवेरे यहाँ से पवनार जाऊँगा।

"परसों पवनार से हैदराबाद के लिए पैदल निकलूँगा। रोज करीब पंद्रह मील चलने की कल्पना है। वाहन में न बैठने का व्रत मैंने नहीं लिया है, क्योंकि व्रत तो सत्य, अहिंसा आदि का लिया जाता है। वित्तविच्छेद की बात मैं कर रहा हूँ, तो उसका यह अर्थ भी नहीं है कि मुझे प्रवास छोड़ देना है। पैसे के छेद के मुझे कई पहलू दीख पड़ते हैं। उन पहलुओं के अनुकूल समाज हमें बनाना है। परमेश्वर चाहेगा, तो इस काम में हमें जरूर यश देगा।"

पैदल चलने का विनोबाजी का निर्णय सुनकर मित्र लोग पुनः चिंतित हो गये। आग्रह करने में हमारी भूल तो नहीं हुई, ऐसी शंका भी उनके मन को छूए बिना नहीं रही। कुछ लोगों ने उनसे कहा भी कि "यदि यह मालूम होता कि आप पैदल चलने का निर्णय लेंगे, तो हम ऐसा आग्रह ही न करते।"

विनोबाजी का स्वास्थ्य अच्छा नहीं रहता था। पेट में अलसर (व्रण) की तकलीफ थी। डॉक्टरों ने पूर्ण विश्राम की आवश्यकता भी बतायी थी। इन सब कारणों से मित्रों की चिंता कुछ बढ़ गयी थी। क्या विनोबाजी पर दबाव लाया जाय कि वे अपनी पैदल यात्रा का विचार स्थगित कर दें ? मित्र लोग सोचने लगे। सबको निर्भय करते हुए विनोबाजी ने कहा : "आप लोग संकल्प तोड़ने-तुड़वाने की बात न सोचें। प्रवास की योजना बनाने में मदद दें। पूरा होने के पहले कोई शुभ संकल्प तोड़ना ही नहीं चाहिए। और शुरू में ही अपवाद की त भी सोचनी नहीं चाहिए। इससे न संकल्प-शक्ति बढ़ती न प्रतिभा ही।"

'देखेरी मैंने'

सवेरे सेवाग्राम से पवनार के लिए चलना था। बापू की आखिरी निवासवाली कुटिया के पास जहाँ विनोबा ठहरे हुए थे, तालीमी संघ के छात्र और कार्यकर्त्ता जमा हो गये। तालीमी संघ की छात्राओं ने भक्ति-भाव से मधुर स्वर में गाया : "सुनेरी मैंने निर्बल के बल राम।"

बिदा होते समय विनोबाजी ने कहा : "मेरे इस नये कार्य को आशीर्वाद देने के लिए आप सब लोग इतने सवेरे यहाँ आये हैं। आपने जो भजन सुनाया, उसने मुझे बहुत बल पहुँचाया है। "सुनेरी मैंने निर्बल के बल राम।" सूरदास ने तो रामजी के बल के बारे में सुन ही रखा था; लेकिन मैंने उसे देखा है। इसलिए अपने अनुभव के निचोड़ को मैं तो इन शब्दों में गाऊँगा— "देखेरी मैंने निर्बल के बल राम।" ऐसे भी मैं निर्बल तो पहले से हूँ ही, लेकिन सब तरफ से प्राप्त होनेवाले प्रेम-बल ने मुझे सबल बनाया है। और आज भी आपने वैसा ही किया है, जिसके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ और प्रार्थना करता हूँ कि परमेश्वर आपके काम में जस दें।"

भक्ति का नमूना

ऊपर जिस काम के जस के बारे में उल्लेख है, वह नयी तालीम के बारे में है, यानी जिस काम के लिए आशादेवी और आर्यनायकमजी ने अपना जीवन समर्पित कर दिया है। उन दोनों का जिक्र करके विनोबाजी ने आगे कहा : "दोनों के लिए मेरे हृदय में शुरू से प्रेम रहा है, जिसे मैं आज कृतज्ञतापूर्वक प्रकट करना चाहता हूँ। नयी तालीम के काम में उन्होंने अपने को जिस कदर पूरी तरह लगा दिया है, वह परमेश्वर की भक्ति का

हूँ। अपने यहाँ जो कार्य चल रहा है, उस संबंध मे मै कई बार आपके सामने बोल चुका हूँ। यह काम यदि ठीक ढंग से रूप पकड़ लेगा, तो उससे हम सबकी चित्तशुद्धि होगी और समाज को भी कुछ शक्ति प्राप्त होगी। इस तरह दोनो का काम बनेगा। इसलिए इच्छा थी कि इस काम का कुछ रूप आने तक मैं यहीं रहूँ। वैसे मेरी तबीयत भी बहुत अच्छी हो गयी है, ऐसा नहीं कह सकते। लेकिन यह चीज गौण है। मुख्यत. विचार यही था कि यहाँ के काम का कुछ आकार आने के बाद ही, और यदि जरूरत पड़ी तो ही, मैं बाहर जाऊँ। हो सकता है, शायद बाद मे बाहर जाने की जरूरत भी न पड़ती। लेकिन बीच मे यह जाने का तय हुआ है, तो वह भी परमेश्वर की इच्छा से ही प्रेरित हुआ है, ऐसा मैं देख रहा हूँ। क्योंकि यह सारा अनपेक्षित-सा हो गया और इस खबर से सबको आनंद भी हुआ है।

पैदल यात्रा क्यों ?

"सर्वोदय-सम्मेलन मे सब लोग जिस तरीके से जा सकते हैं, उसी तरीके से जाना अच्छा है। जो इस तरह नहीं जा सकते हैं, वे रेलगाड़ी से आयेंगे, तो भी उसमें दोष नहीं है। लेकिन हो सके तो पैदल ही जाना अच्छा है। उससे देश का दर्शन होता है, जनता के साथ सपर्क सधता है और उसके पास सर्वोदय का संदेश पहुँचा सकते हैं। वह संदेश सुनने और उसमे से सान्त्वना प्राप्त करने के लिए लोग आज बहुत उत्सुक हैं। लोगों को इस समय सांत्वना की सख्त जरूरत है। किसीका मन अगर त्रस्त हुआ है और उसमें से मुक्त होने का कुछ रास्ता उसे मिल जाता है, तो उसको शान्ति मिलती है। यही हाल आज जनता का हुआ है। इसमें किसी एक का दोष है, ऐसी बात नहीं है। दोष है, तो सबका मिलकर है। लेकिन दोषों की चर्चा भी किस काम की ?

जरूरत है दोष-निरसन की। उसका उपाय भी है, सीधा-सादा सबके करने योग्य और असरकारक भी, जिसका प्रयोग हमने यहाँ परंधाम मे किया है। यद्यपि अभी तक जैसा हम चाहते हैं, वैसा रूप उस प्रयोग को नहीं मिला है, फिर भी शुभ भावना से तपस्या हो रही है और व्यथित मन को उतना भी संतोष दे सकती है।

यात्रा का ढाँचा नहीं बनाया है

"इस प्रवास मे मै अपनी कुछ भी कल्पना लेकर नही जा रहा हूँ। सहजता से जो होगा, वह होने दूँगा। फलाने ढंग से सफर करना है, फलाना काम करवा लेना है, ऐसा कुछ भी मेरे मन मे नहीं है। जगह-जगह जो भी भले लोग मिलेंगे, उनसे मिलना और लोगों की जो कठिनाइयाँ होंगी, उनको हल करने का कुछ रास्ता बता सकूँ तो बताना, इतना ही मन मे है। अब समय कम रहा है, इसलिए निश्चित रास्ते से ही जाना पड़ेगा। इधर-उधर हो आने की गुंजाइश नहीं है। वापस आते समय ऐसी कोई पाबन्दी न होने के कारण अपनी इच्छा के मुताबिक घूमा जा सकेगा। लेकिन आगे का विचार अभी नहीं किया है। वह हैदराबाद पहुँचने के बाद होगा।

मेरा मन यहीं है

"जो लोग यहाँ इस काम मे लगे हुए है, उनके साथ मेरा शरीर यद्यपि नहीं दिखाई देगा, तो भी मेरा मन यहीं है, ऐसा अनुभव आपको होगा। शरीर से यहाँ रहते हुए जितनी तीव्रता से मेरा मन यहाँ था, उससे कम तीव्रता से वह नहीं रहेगा। मुझे उम्मीद है कि जिन नवयुवकों ने यह काम पूरा करने की शपथ ली है, वे यदि यह काम ईश्वर का है, इस भावना से इसे निरहंकारपूर्वक करते रहेंगे, तो उन्हें यहाँ की मेरी गैरहाजिरी *उत्साह देनेवाली ही साबित होगी।"*

मेरा मन यहीं है

: २ :

पवनार
७-३-'५१

सेवाग्राम से परंधाम पगडंडी के रास्ते चार ही मील है, लेकिन विनोबाजी ने वर्धा होकर जाना पसंद किया। बजाजवाड़ी में वे श्री किशोरलाल भाई से मिले। जाजूजी से भेंट की। वर्धा के अन्य मित्र भी मिले। महिलाश्रम, गोपुरी आदि संस्थावालों से भी बातचीत की। हर जगह कुछ ऐसा भाव प्रकट हो रहा था, मानो बड़ी लम्बी सफर पर निकल रहे हों। करीब दस बजे तक परंधाम पहुँच सके। चार के बजाय नौ मील की यात्रा हुई।

पवनार तथा आसपास के देहातों में भी बात फैल गयी। वर्धा से भी कई लोग मिलने आये। दिनभर सत्संग में किधर निकल गया, पता ही न चला।

परंधाम में इस समय कांचन-मुक्ति का महान् प्रयोग चल रहा था। दुनिया की आँखें उस प्रयोग ने अपनी ओर आकर्षित कर ली थीं। उस प्रयोग द्वारा एक नयी आर्थिक क्रांति की नींव डाली जा रही थी। रचनात्मक कार्य, जो कुछ मुरझाया-सा दीख रहा था, उस प्रयोग के कारण पुनः एक बार हरा-भरा हो जाने की आशा थी। कुछ नौजवानों ने इस प्रयोग को सफल बनाने में अपना जीवन समर्पित कर दिया था। विनोबाजी का मार्ग-दर्शन उनके लिए आवश्यक था।

सायंकाल के प्रवचन में उन्होंने कहा :

"कल से मैं पैदल चलकर हैदराबाद के सर्वोदय-सम्मेलन के लिए जा रहा हूँ। अचानक ही यह तय हुआ है, और अब केवल तीस दिन ही बचे हैं। इसलिए मैं कल ही कूच कर रहा

हूँ। अपने यहाँ जो कार्य चल रहा है, उस संबंध मे मैं कई वार आपके सामने वोल चुका हूँ। यह काम यदि ठीक ढंग से रूप पकड़ लेगा, तो उससे हम सवकी चित्तशुद्धि होगी और समाज को भी कुछ शक्ति प्राप्त होगी। इस तरह दोनों का काम बनेगा। इसलिए इच्छा थी कि इस काम का कुछ रूप आने तक मैं यहीं रहूँ। वैसे मेरी तवीयत भी बहुत अच्छी हो गयी है, ऐसा नहीं कह सकते। लेकिन यह चीज गौण है। मुख्यतः विचार यही था कि यहाँ के काम का कुछ आकार आने के बाद ही, और यदि जरूरत पड़ी तो ही, मैं वाहर जाऊँ। हो सकता है, शायद बाद मे बाहर जाने की जरूरत भी न पड़ती। लेकिन बीच में यह जाने का तय हुआ है, तो वह भी परमेश्वर की इच्छा से ही प्रेरित हुआ है, ऐसा मैं देख रहा हूँ। क्योंकि यह सारा अनपेक्षित-सा हो गया और इस खवर से सबको आनंद भी हुआ है।

पैदल यात्रा क्यों ?

"सर्वोदय-सम्मेलन मे सब लोग जिस तरीके से जा सकते हैं, उसी तरीके से जाना अच्छा है। जो इस तरह नहीं जा सकते हैं, वे रेलगाड़ी से आयेंगे, तो भी उसमें दोष नहीं है। लेकिन हो सके तो पैदल ही जाना अच्छा है। उससे देश का दर्शन होता है, जनता के साथ संपर्क सधता है और उसके पास सर्वोदय का संदेश पहुँचा सकते हैं। वह संदेश सुनने और उसमें से सान्त्वना प्राप्त करने के लिए लोग आज बहुत उत्सुक हैं। लोगों को इस समय सांत्वना की सख्त जरूरत है। किसीका मन अगर त्रस्त हुआ है और उसमें से मुक्त होने का कुछ रास्ता उसे मिल जाता है, तो उसको शान्ति मिलती है। यही हाल आज जनता का हुआ है। इसमें किसी एक का दोष है, ऐसी बात नहीं है। दोष है, तो सबका मिलकर है। लेकिन दोषों की चर्चा भी किस काम की ?

जरूरत है दोष-निरसन की। उसका उपाय भी है, सीधा-सादा सबके करने योग्य और असरकारक भी, जिसका प्रयोग हमने यहाँ परंधाम मे किया है। यद्यपि अभी तक जैसा हम चाहते हैं, वैसा रूप उस प्रयोग को नहीं मिला है, फिर भी शुभ भावना से तपस्या हो रही है और व्यथित मन को उतना भी संतोष दे सकती है।

यात्रा का ढाँचा नहीं बनाया है

"इस प्रवास में मैं अपनी कुछ भी कल्पना लेकर नहीं जा रहा हूँ। सहजता से जो होगा, वह होने दूँगा। फलाने ढंग से सफर करना है, फलाना काम करवा लेना है, ऐसा कुछ भी मेरे मन में नहीं है। जगह-जगह जो भी भले लोग मिलेंगे, उनसे मिलना और लोगों की जो कठिनाइयाँ होंगी, उनको हल करने का कुछ रास्ता बता सकूँ तो बताना, इतना ही मन में है। अब समय कम रहा है, इसलिए निश्चित रास्ते से ही जाना पड़ेगा। इधर-उधर हो आने की गुंजाइश नहीं है। वापस आते समय ऐसी कोई पाबन्दी न होने के कारण अपनी इच्छा के मुताबिक घूमा जा सकेगा। लेकिन आगे का विचार अभी नहीं किया है। वह हैदराबाद पहुँचने के बाद होगा।

मेरा मन यहाँ है

"जो लोग यहाँ इस काम मे लगे हुए हैं, उनके साथ मेरा शरीर यद्यपि नहीं दिखाई देगा, तो भी मेरा मन यहीं है, ऐसा अनुभव आपको होगा। शरीर से यहाँ रहते हुए जितनी तीव्रता से मेरा मन यहाँ था, उससे कम तीव्रता से वह नहीं रहेगा। मुझे उम्मीद है कि जिन नवयुवकों ने यह काम पूरा करने की शपथ ली है, वे यदि यह काम ईश्वर का है, इस भावना से इसे निरहंकारपूर्वक करते रहेंगे, तो उन्हें यहाँ की मेरी गैरहाजिरी उत्साह देनेवाली ही साबित होगी।"

रामराज्य का स्वावलंबी मार्ग : ३ :

वायगाँव
८-३-'५१

दूसरे दिन सवेरे पाँच बजे परंधाम से कूच हुआ। बिदाई के प्रसंग का वर्णन कैसे किया जाय? सबके हृदय भावाभिभूत थे। "जेथे जातो तेथे तू माझा सांगाती"—जहाँ जाता हूँ, वहाँ तुम मेरे संगाती हो—तुकाराम की इस भावना को मधुर ध्वनि में आश्रमवासियों ने गा सुनाया। दूर तक ग्रामवासी विदा करने आये।

पहला मुकाम १३ मील वायगाँव पर करना था। वर्धा होकर ही जाना पड़ता है। साथियों को पता था कि लक्ष्मीनारायण मंदिर होकर विनोबाजी आगे जायँगे। मित्र लोग बड़े सवेरे से वहाँ जमा हो गये थे। विनोबाजी आये। "वैष्णव जन" और "रामधुन" गायी गयी और कुछ क्षण वातावरण निःस्तब्ध रहा। सहसा जानकीदेवीजी खड़ी हो गयीं—कंठ कुछ रुँधा हुआ था। उस मनस्थिति में भी उनके सहज विनोद और समय-सूचकता ने उनका साथ नहीं छोड़ा। साहसपूर्वक बोलीं : "बापूजी और जमनालालजी के बाद अब हम लोग विनोबाजी से कुछ सांत्वना पाने लगे थे, बल भी मिलने लगा था। पर सर्वोदय-सम्मेलन की बारात बिना वर के कैसे चढ़े? विनोबाजी बालहठी तो हैं ही—समझाने से माननेवाले भी नहीं। क्या उनका स्वास्थ्य पैदल यात्रा करने योग्य है? पेट का व्रण तो अभी तक दुरुस्त हुआ ही नहीं। पर उन्हें कौन रोक सकता है? संभव है, वे हैदराबाद से आगे भी बढ़ें। परंतु हम लोग आशा

करते हैं कि वे अपनी पैदल यात्रा शीघ्र ही पूरी करके पुनः अपने वर्धावासी साथियों और संस्थाओं की सुध लेंगे।"

आखिरी मुलाकात

जानकीदेवीजी ने अपने भाषण से विनोबाजी को भी बोलने के लिए प्रेरित किया। बोले "जैसा कि अभी श्री जानकीदेवी ने कहा, संभव है, हैदराबाद जाने के बाद मैं आगे भी बढ़ूं। इसलिए साधकों को तो यही मानना चाहिए कि जो क्षण अपने हाथ में है, वही योग्य है। अब मैं यहाँ से विदा ले रहा हूँ। मैं नहीं जानता कि हम लोग फिर कब मिलेंगे। यानी हम लोगों की यह मुलाकात आखिरी माननी चाहिए।"

"तीन पावन नाम"

वर्धावालों को अपनी जिम्मेदारी का अहसास कराते हुए विनोबाजी ने उन्हें दो पावन नामों का स्मरण दिलाया, एक था बापू का, दूसरा उनके अनन्य भक्त जमनालालजी का, जिनके कारण वर्धा नगरी को राष्ट्रनिर्माणकारी कार्यों की प्रयोगशाला बनने का भाग्य मिला था। तीसरा था 'वर्धा योजना' का। इस संबंध में उन्होंने कहा . "हमारी शिक्षण योजना का नाम हमने तो "सेवाग्राम-पद्धति" ही रखा था, परंतु लोगों ने वह नाम नहीं अपनाया और "वर्धा-योजना" नाम चल पड़ा। इन दोनों कारणों से वर्धा को जागतिक महत्त्व प्राप्त हुआ है। ऐसे पावन नामों का आधार होने पर काम क्यों नहीं होगा? श्रद्धापूर्वक काम किये जाने की ही जरूरत होती है।"

इन चंद शब्दों से वर्धावालों की श्रद्धा को बल देकर विनोबाजी आगे बढ़े।

रास्ते में सेतु (घाटे) पर रुग्णशय्याधीन भाई सत्यनारायणजी बजाज को भी देखा, वहीं जलपान भी किया और उन्हें स्वास्थ्य-

संबंधी आवश्यक हिदायतें देकर आगे बढ़े। करीब ग्यारह बजे वायगॉव पहुँचे।

पड़ाव एक धर्मशाला मे था। यात्रा का पहला ही दिवस था। गॉववालों ने काफी प्रबंध कर रखा था। फिर भी सफाई की दृष्टि से आवश्यक सुविधाएँ कर लेने में सहयात्रियों को कुछ समय बिताना पड़ा। इसका असर गॉववालों पर अच्छा रहा। वह उस गॉव के लिए एक छोटी-सी संस्कार-दीक्षा ही हो गयी। पॉच बजे कार्यकर्ताओं से चर्चा हुई। चर्चा मे मजदूरों को पैसे के बजाय अनाज में पारिश्रमिक देने की बात तय हुई। प्रार्थना-प्रवचन मे विनोबाजी ने विस्तार से सारी घटना का उल्लेख किया :

"यहाँ से तेरह मील पर पवनार है। वहॉ परंधाम आश्रम है। उस आश्रम मे मैं रहता हूँ और आप सबकी चिंता करता रहता हूँ। किसान कैसे जीयेगा, देहात का सुधार कैसे होगा, लोगों को सुख कैसे मिलेगा, दीनता, दरिद्रता और दुःख कैसे दूर होंगे, प्रेम का राज्य कैसे फैलेगा, इसका विचार किया करता हूँ। वहॉ हम लोग और हमारे साथ कुछ बहुत पढ़े-लिखे लोग भी है—सब कुदाली से खेती करते हैं। रहँट से खुद ही पानी खींचते और सींचते हैं, सूत कातते हैं, कपड़ा बुनते हैं, बढ़ई का काम करते हैं और इन सब कामों का विकास कैसे होगा, इसका चिंतन भी किया करते हैं।

पैदल यात्रा का खब्त

"अब मैं वहाँ से यहाँ आपके गॉव आया हूँ और चलते-चलते तीन सौ मील हैदराबाद जानेवाला हूँ। वहाँ सज्जनों का एक सम्मेलन होनेवाला है, जिसे सर्वोदय-सम्मेलन कहते हैं। यहाँ हम ८-१० आदमी पैदल जानेवाले हैं। कुछ बहनें भी साथ हैं। कोई बैलगाड़ी में भी बैठेंगे। एक लड़का कह रहा था—"रेल-

गाड़ी से जाने में देर लगती है, अब तो जल्दी ले जानेवाले हवाई जहाज निकले है, इन दिनों पैदल चलना यह तो एक खब्त ही है ?" लेकिन यह पागलपन इसीलिए है कि आप लोगों से मिल सकूँ, आपके सुख-दुःख सुन सकूँ, आपसे संपर्क प्राप्त कर सकूँ, संबंध कायम कर सकूँ। इसीलिए मैं आया हूँ। अब कल रालेगॉव जाना है। सबेरे ५ बजे चलेंगे। दोपहर ११ बजे तक पहुँचेंगे; फिर खाना-पीना होगा। हमें कुछ लिखना होता है, वह उसके बाद लिखेंगे और शाम को ५ बजे गॉव के लोगो से बात करेंगे। शाम को प्रार्थना करेंगे। सब मिलकर ईश्वर का नाम लेंगे और सबको ईश्वर का नाम लेना सिखायेंगे। रात को भगवान् की गोद मे सोयेंगे और परसों फिर अगले मुकाम को जायेंगे। ऐसा हमारा कार्यक्रम है।

तेरी जिम्मेवारी तुझी पर

"आज भी यहॉ के लोग दोपहर को मिलने आये थे। उनसे बहुत-सी बाते हुईं। उन्होंने किसानों की अड़चनें बतलायीं। वे बोले कि आगे चलकर ऐसी स्थिति आने का डर है कि मजदूरों को खाने के लिए ज्वार भी न मिले। और पूछने लगे कि अब हमारे गॉव के और दूसरे गॉवों के मजदूरों का क्या होगा ? मैंने उनसे जो कहा, वह संक्षेप मे बतलाता हूँ। तुकाराम महाराज ने हमको सिखाया है कि "तुझें आहे तुजपाशीं, परि तूं जागा चुकलासी।" तेरा जो कुछ है वह तेरे ही पास है, लेकिन तू स्थान भूल गया है और दूसरी ही तरफ खोज रहा है। कहता है कि सरकार मेरे लिए क्या करेगी, और डिप्टी कमिश्नर क्या करेगा, और मंत्री क्या करेगा ? परन्तु तेरे लिए तू ही करेगा। तुझे जब थकावट होगी, तब तू ही सोयेगा, दूसरा नहीं सोयेगा; तुझे जब भूख लगेगी, तब तू ही खायेगा, दूसरा नहीं खायेगा;

और जब तू आया था, तब अकेला ही आया था तथा जब जायगा, तो अकेला ही जायगा। इसलिए तेरी जिम्मेवारी तुझी पर है और उसे निवाहने की चाबी भी तेरे हाथ में है। तू समझता है कि बाहर से कोई उससे छुटकारा दिलायेगा। अरे पागल, ईश्वर ने कैसी युक्ति की, जो हरएक को दो हाथ दिये, दो कान दिये, दो पैर दिये। और हरएक को बुद्धि भी दे दी। यह सब क्यों किया? इसलिए कि हरएक अपने को सँभाले। हरएक अपने पैरों पर खड़ा रहे और फिर एक-दूसरे की मदद करे। इस प्रकार देहात-देहात में अपना छुटकारा हमीं को करना है और वह हो सकता है। ५ लाख देहात है। तुम अगर कहो कि उनका उद्धार दिल्ली में जो सरकार बैठी है वह करेगी, तो वह सरकार कितनी भी बुद्धिमान क्यों न हो, फिर भी इतने दुःखों का निवारण वह अकेली कैसे कर सकेगी?

अनाज में मजदूरी

"इसलिए उपाय तुम्हारे हाथों में है। वह कौन-सा? पैसा का भाव घटता बढता रहता है। आज एक रुपये में चार पायली (पाँच सेर) ज्वार मिलती है। कल कहते हैं कि दो पायली हो गयीं। वह भी कभी मिलती है और कभी नहीं मिलती। मैंने उनसे कहा कि तुम सालदार (सालभर काम करनेवाले मजदूर) को ६ खुड्य (८ पायली का माप १ पायली=१०० तोला) देना तय कर लेते हो। उसमें फर्क नहीं करते। फर्क पैसों में करते हो। किसीको ४०, किसीको ५०, किसीको ६० रुपये, इस प्रकार हरएक की योग्यता देखकर उसे पैसे देते हो। परन्तु ज्वार ६ खुड्य दे देते हो। इस वैर्धा जिले में मैं २५-३० वर्ष से सुनता आया हूँ कि सालदार को महाने में ६ खुड्य ज्वार मिलती है। यह मात्रा निश्चित होने के कारण वह कभी भूखा नहीं रहता। उसी तरह

तुमको मजदूरों के लिए भी करना चाहिए। मजदूर को रोज नियत परिमाण में ज्वार देना निश्चित कर दो। मैंने कहा कि हरएक मजदूर को आधी पायली ज्वार रोज दो और ऊपर से पैसे दो। स्त्री को और पुरुष को आधी पायली ज्वार दो, इन दिनों में भी दो और बरसात में भी दो, और फिर ऊपर से अपनी-अपनी रीति के अनुसार कुछ पैसे दो। लेकिन, आधी पायली ज्वार रोज दोगे; तो तुम्हारे गाँव में मजदूर भूखा नहीं रहेगा। गाँवों में प्रेम का राज्य रहेगा, द्वेष नहीं रहेगा। यह मैंने उनको समझाया। बड़ी देर तक चर्चा हुई और अन्त में वह बात उनके गले उतरी।" फिर मैंने उनसे कहा, "मेरे सामने विचार किया है, इसलिए अभी प्रस्ताव पास करो। वहाँ सब बड़े आदमी इकट्ठा हुए थे। उन्होंने एक प्रस्ताव उस तरह का पास किया। वे अब उसे आप लोगों को पढ़कर सुनायेंगे। उस प्रस्ताव के अनुसार अगर आप चलेंगे, तो इस गाँव में सब लोग भरपेट खायेंगे और इस गाँव का उदाहरण दूसरे गाँवों के लिए उपयोगी होगा तथा सबका उद्धार होगा।

पाँच उँगलियों से प्रेम का सबक

"एक बात और बतलाता हूँ। हम सब इन पाँच उँगलियों की तरह हैं। हमारे हाथ की एक उँगली छोटी है, एक उँगली बड़ी है। सब उँगलियाँ एक-सी नहीं हैं। परंतु कोई काम करना हो, तो सारी उँगलियाँ मिलकर उसे करती हैं। लोटा उठाना हो, तो सारी उँगलियाँ और अँगूठा मिलकर उसे उठाते हैं। इतनी छोटी उँगलियाँ हैं, लेकिन उनसे कितना काम होता है? ये पाँचों उँग-लियाँ अगर लड़ती रहतीं, आपस में झगड़ा करतीं, यह उँगली उस उँगली की मदद नहीं करती, अँगूठा चार उँगलियों की मदद नहीं करता, चार उँगलियाँ अँगूठे की मदद नहीं करतीं, तो क्या कोई

काम होता ? उँगलियाँ एक-दूसरे की मदद करती हैं, इसलिए काम होता है । उसी प्रकार हम लोगों को प्रेम से रहना चाहिए । कोई छोटा, कोई बड़ा, यह तो संसार मे रहने ही वाला है। परंतु सबको प्रेम से रहना चाहिए । सबके हृदय एक होने चाहिए । यह सबक पाँच उँगलियों से सीखो । उसी तरह चलने में भलाई है।

प्रार्थना की पुकार

"मुझे आप लोगों का ज्यादा वक्त नहीं लेना है। सिर्फ जो मैं कहता हूँ, वह करो। केवल सुनने से काम नहीं होगा। रामदास स्वामी का वचन है : "समजले आणि वर्तले, तेचि भाग्यपुरुष झाले, येर ते बोलतचि राहिले, करंटे जन !" जो अभागे होते हैं, वे सिर्फ बोलते ही रहते हैं और सुनते ही रहते हैं। जिन्होंने किसी बात को समझ लिया और उसके अनुसार बर्ताव किया, वे भाग्यवान् होते हैं। इसलिए मैं कहूँगा थोड़ा ही, किन्तु आप लोग उस पर अमल अवश्य करो। कल्याण हुए बिना नहीं रहेगा। मैं कहनेवाला था कि आप लोग भगवान् की प्रार्थना करने के लिए एकत्र होते रहो। मैंने सुना है कि इस गाँव में प्रार्थना हुआ करती है। पूछा कि कितने आदमी आते हैं, तो मालूम हुआ कि १५-२० आते हैं। फिर बालकों से पूछा कि बालक कितने होते हैं, तो कहने लगे कि बालक ही ज्यादा होते हैं। बड़े आदमी दो-तीन ही होते हैं। ऐसा मत करो। ज्यादा आदमी आया करो। कोई भी एक समय मुकर्रर कर लो और प्रेम से भगवान् का नाम लो। आखिर इस मनुष्य-देह में आकर क्या करना है, किसलिए आना है ? एक-दूसरे की मदद करें, एक-दूसरे से प्रेम करें और सब मिलकर ईश्वर का नाम लें। उसने हमें वाणी दी है। इसलिए मेरा आप लोगों से निवेदन है कि जितने अधिक लोग इकट्ठे हो सको, उतने हो और भगवान् का स्मरण करो।" ...

संकट में दुर्जन में भी सज्जनता का उद्‌भव : ४ :

राळेगाँव
९-३-'५१

सत्रह मील का सफर था। गिरोली, आंवोड़ा, खानगॉव, पोढ़ी होते हुए बारह बजे राळेगाँव पहुँचे। लोगों को खबर अभी-अभी मिली थी कि हम लोग पहुँचे। एकाएक ही तो यात्रा पर निकल पड़े थे। फिर भी जगह-जगह लोगों ने हार्दिक स्वागत किया। जाहिर है कि वे सान्त्वना पाने के लिए उत्सुक हैं। रास्ते में गिरोली पर कलेवे के लिए रुकना पड़ा। विनोबा ने पूछा : "जनसंख्या कितनी है ?"

"एक हजार।"

"पहले कितनी थी ?"

"एक हजार।"

"दस बरसों में बढ़ने के बजाय कायम रही—यानी घटी ?"

"जी हाँ। एक सौ तीस मजदूर-परिवार गाँव छोड़कर चले गये।"

विनोबाजी को अच्छा नहीं लगा। सहज सूचन कर देना उचित समझा : "आइन्दा ऐसी कोशिश करें कि मजदूर भाइयों का दिल न दुखे। उनके साथ प्रेम का व्यवहार करें।"

आगे भी एक-दो जगह जनसंख्या इसी तरह कम होने की रिपोर्ट मिली। "उद्योग नहीं, इसलिए लोग बाहर जाते हैं" ग्रामवासियों ने कहा

"आप लोगों के बदन पर यह जो कपड़ा है, वह सब बाहर से क्यों आता है? यहीं पर क्यों नहीं बनता? यह तो बड़ा भारी उद्योग है।"—इस तरह कहीं खादी की तो कहीं खाद की, कहीं प्रार्थना की तो कहीं प्रेम की बात कहते हुए हम राळेगाँव पहुँचे थे।

मजदूरी का बीमा

राळेगाँव में प्रश्नोत्तरी दिलचस्प रही। 'अनाज में मजदूरी' देने की चर्चा वहाँ भी निकली। कुछ काश्तकारों ने फौरन संकल्प जाहिर किया कि वे आइन्दा हर स्त्री-पुरुष मजदूर को ४० तोला ज्वार और कुछ पैसा देंगे। लेकिन एक भाई को शंका हुई कि इस पर अमल कैसे होगा। उन्होंने कहा : "लोग दस्तखत तो कर देंगे, पर अमल नहीं करेंगे। वे तो सरकार को भी धोखा देते हैं।"

"पर वे खुद को धोखा नहीं दे सकते" विनोबा ने कहा : "उनके भीतर भी परमेश्वर रहता है। वह परमेश्वर ये बातें समझता है। उसे उद्देश्य करके ही मैं यह कह रहा हूँ। काश्तकार इस बात को समझते हैं कि ज्वार में मजदूरी देने से मजदूर प्रेमपूर्वक काम करेगा। वह गाँव छोड़कर नहीं जायगा।"

"पर सरकार लेवी के रूप में ज्वार जो वसूल कर लेती है?"

"बिलकुल ठीक। किन्तु वह सालदारों के लिए जैसे आवश्यक ज्वार आपके पास छोड़ देती है, वैसे ही इन मजदूरों के लिए भी छोड़ देगी। उसे छोड़ना होगा। नतीजा यह होगा कि गाँव के मजदूर के लिए आवश्यक अनाज गाँव में ही रह सकेगा। उनके खाने-पीने का यह एक तरह से बीमा हो गया। इससे लूटमार अपने-आप रुकेगी।"

"हम कारतकार लोगों की नीयत साफ नहीं है। हमें बाहर अनाज बेचने से ज्यादा दाम मिलते हैं। पैसे में मजदूरी देना

हमारे लिए आसान है। हम आज आपके सामने 'हाँ' कह देंगे, परन्तु हम तो ईश्वर को भी धोखा दे सकते हैं।"

लंका में विभीषण

"क्या आप समझते हैं कि ईश्वर को धोखा देनेवाले को ईश्वर सजा नहीं देता? उसे रुलाता नहीं? लेकिन मुझे इसकी चिन्ता नहीं है कि ईश्वर को कौन धोखा देता है। रशिया में सत्रह लाख लोगों को कत्ल कर दिया गया। अगर इसीकी पुनरावृत्ति यहाँ होनेवाली होगी, तो कौन क्या करेगा? संकल्प पर दस्तखत करने-वाला भी अपने संकल्प को नहीं मानेगा, ऐसा अगर आप कहना चाहते हैं, तो उसका अर्थ होगा कि दुनिया से विश्वास ही उठ गया। लेकिन संकट के समय में दुर्जनों में भी 'सज्जनता प्रकट' होती है। लंका में भी विभीषण था। राळेगाँव को लंकानगरी मान लें, तो यहाँ एक भी विभीषण नहीं होगा, ऐसा न समझें और लंका में इतने राक्षस थे, परन्तु सीता का वे कुछ नहीं बिगाड सके।"

ग्रेन-बैंक

एक दूसरे भाई ने सवाल किया: "लेकिन विनोबाजी, जिनके घर ज्वार की फसल आयी ही न हो, वे क्या करें?"

"हर गाँव में सहयोगीग्रेन-बैंक रहेगा। वहाँ से ठीक दामों पर काश्तकार ज्वार खरीद सकेंगे।"

"बाजार-भाव कम ज्यादा होने से इस ज्वार के प्रमाण पर कोई असर होगा?"

"यही इसकी खूबी है कि बाजार-भाव का इस पचास तोला ज्वार पर कोई असर नहीं होगा। जो कुछ असर होता है, पैसों की तादाद पर होगा। पर हर मजदूर के लिए भोजन की हद तक मानो सीमा ही उतरा हुआ होगा।"

"आप लोगों के वदन पर यह जो कपड़ा है, वह सब बाहर से क्यों आता है ? यहीं पर क्यों नहीं बनता ? यह तो बड़ा भारी उद्योग है।"—इस तरह कहीं खादी की तो कहीं खाद की, कहीं प्रार्थना की तो कहीं प्रेम की बात कहते हुए हम राळेगाँव पहुँचे थे।

मजदूरी का बीमा

राळेगाँव में प्रश्नोत्तरी दिलचस्प रही। 'अनाज में मजदूरी' देने की चर्चा वहाँ भी निकली। कुछ काश्तकारों ने फौरन संकल्प जाहिर किया कि वे आइन्दा हर स्त्री-पुरुष मजदूर को ४० तोला ज्वार और कुछ पैसा देंगे। लेकिन एक भाई को शंका हुई कि इस पर अमल कैसे होगा। उन्होंने कहा : "लोग दस्तखत तो कर देंगे, पर अमल नहीं करेंगे। वे तो सरकार को भी धोखा देते हैं।"

"पर वे खुद को धोखा नहीं दे सकते" विनोबा ने कहा : "उनके भीतर भी परमेश्वर रहता है। वह परमेश्वर ये बातें समझता है। उसे उद्देश्य करके ही मैं यह कह रहा हूँ। काश्तकार इस बात को समझते हैं कि ज्वार में मजदूरी देने से मजदूर प्रेमपूर्वक काम करेगा। वह गाँव छोड़कर नहीं जायगा।"

"पर सरकार लेवी के रूप में ज्वार जो वसूल कर लेती है ?"

"बिलकुल ठीक। किन्तु वह सालदारों के लिए जैसे आवश्यक ज्वार आपके पास छोड़ देती है, वैसे ही इन मजदूरों के लिए भी छोड़ देगी। उसे छोड़ना होगा। नतीजा यह होगा कि गाँव के मजदूर के लिए आवश्यक अनाज गाँव में ही रह सकेगा। उनके खाने-पीने का यह एक तरह से बीमा हो गया। इससे लूटमार अपने-आप रुकेगी।"

"हम काश्तकार लोगों की नीयत साफ नहीं है। हमें बाहर अनाज बेचने से ज्यादा दाम मिलते हैं। पैसे में मजदूरी देना

हमारे लिए आसान है। हम आज आपके सामने 'हाँ' कह देंगे, परन्तु हम तो ईश्वर को भी धोखा दे सकते हैं।"

लंका में विभीषण

"क्या आप समझते हैं कि ईश्वर को धोखा देनेवाले को ईश्वर सजा नहीं देता? उसे रुलाता नहीं? लेकिन मुझे इसकी चिन्ता नहीं है कि ईश्वर को कौन धोखा देता है। रशिया में सत्रह लाख लोगों को कत्ल कर दिया गया। अगर इसीकी पुनरावृत्ति यहाँ होनेवाली होगी, तो कौन क्या करेगा? संकल्प पर दस्तखत करनेवाला भी अपने संकल्प को नहीं मानेगा, ऐसा अगर आप कहना चाहते हैं, तो उसका अर्थ होगा कि दुनिया से विश्वास ही उठ गया। लेकिन संकट के समय में दुर्जनों में भी सज्जनता प्रकट होती है। लंका में भी विभीषण था। राळेगाँव को लंकानगरी मान लें, तो यहाँ एक भी विभीषण नहीं होगा, ऐसा न समझें और लंका में इतने राक्षस थे, परन्तु सीता का वे कुछ नहीं बिगाड़ सके।"

ग्रेन-बैंक

एक दूसरे भाई ने सवाल किया: "लेकिन विनोबाजी, जिनके घर ज्वार की फसल आयी ही न हो, वे क्या करें?"

"हर गाँव में सहयोगीग्रेन-बैंक रहेगा। वहाँ से ठीक दामों पर काश्तकार ज्वार खरीद सकेंगे।"

"बाजार-भाव कम-ज्यादा होने से इस ज्वार के प्रमाण पर कोई असर होगा?"

"यही इसकी खूबी है कि बाजार-भाव का इस पचास तोला ज्वार पर कोई असर नहीं होगा। जो कुछ असर होता है, पैसों की तादाद पर होगा। पर हर मजदूर के लिए भोजन की हद तक मानो बीमा ही उतरा हुआ होगा।"

व्यक्तियों का आकर्षण

राळेगाँव की एक छोटी-सी, किन्तु मीठी घटना का उल्लेख करना चाहिए। ज्वार में मजदूरी देने का संकल्प करनेवालों में श्री हीराचन्द मुनोत भी थे। उनके आठ बरस के लड़के को बुखार था। उसका आग्रह था, कि विनोबाजी के डेरे पर जाकर उनसे मिलूँ। विनोबाजी को मालूम हुआ, तो वे ही उसे देखने पहुँच गये। बच्चा खुश-खुश हो गया। जब विनोबाजी चलने लगे, तो बच्चे के पिताजी ने पूछा: "आपके साहित्य के प्रचार में मैं पाँच सौ एक रुपया देता हूँ। आप जैसा ठीक समझें, उपयोग करें।"

"मैं लेकर क्या करूँगा? यहीं आप किताबें मँगवा लें और इस प्रदेश में आप ही प्रचार करें।"

रास्ते में कहने लगे: "मुझे सभाओं की अपेक्षा व्यक्तियों का ज्यादा आकर्षण है। जहाँ हम जाते हैं, वहाँ हमारा काम करनेवाले लोग मिल जायँ, तो काफी है।"

सोना देकर पीतल क्या ?

सखीकृष्णपुर
१०-३-'५१

राळेगाँव से प्रार्थना करके सवेरे ठीक पाँच बजे हम लोग सखीकृष्णपुर के लिए चल पड़े। चौदह मील चलना था। थोड़ी देर पक्की सड़क का रास्ता, फिर कच्चा रास्ता, फिर जंगल, फिर घना जंगल, ऊँचे-ऊँचे दरख्त, पलाश-पुष्पों की लालिमा, पतझड़, उसके कारण पगडंडियों पर बिछी हुई पीले पत्तों की फर्श—और सारे वातावरण को देखकर बीच-बीच में विनोबा के मुख से बहनेवाली वाग्गंगा! लंबी मंजिल भी सहज ही में तय हो गयी!

रेल से करीब पैंतीस मील दूर और मोटर की सड़क से पाँच मील के फासले पर 'सखी' एक छोटा-सा देहात है। पचीस से कम मकान। कुल १८४ लोग। स्त्री, पुरुष, बच्चे, सब-के-सब सभा में उपस्थित। इर्दगिर्द के देहातों से भी लोग आये थे। पाँच सौ के करीब जनसमुदाय था। गाँव के पड़ोस की सुन्दर अमराई में हमारा डेरा था। वहीं प्रार्थना-सभा का प्रबन्ध था। उत्कल की पैदल यात्रा में बापूजी जगह-जगह इस तरह आम के पेड़ों की छाया में ठहरा करते थे। देहात की सभा थी—बड़ी प्रभावी मालूम हुई। सब लोग बिलकुल शांत बैठे थे। एकाग्र! सभा के बाद प्रश्नों का नंबर आया :

प्रश्न : "इधर कच्छी और सेठ लोगों के यहाँ फसलें अच्छी होती हैं। लेकिन हमारे हिस्से में कुछ नहीं आता। ये लोग हमें कुछ उद्योग भी क्यों नहीं देते

उत्तर : "आप लोगों के बदन पर इतने कपड़े हैं। वे कहाँ से आये ? कपास तो आपके घर में ही होती है। फिर कपड़ा क्यों खरीदते हो ? सोना देकर बदले में पीतल लेते हो—इससे ज्यादा और क्या मूर्खता हो सकती है ? आपके पुरखा क्या करते थे ? क्या वे बिना कपड़े के रहते थे ? वह सारा उद्योग आप लोग खो बैठे—बिनौला आप नहीं निकालेंगे, धुनाई आप नहीं करेंगे, कातेंगे नहीं—बुनना नहीं चाहेंगे। फिर गाँवों में उद्योग-धंधे आयेंगे कैसे ? कितने रुपये लगते हैं हर साल कपड़े के लिए ?"

उत्तर मिला : "पचीस !"

विनोवा : "लो। मैं तो समझता था, दस-बारह रुपये खर्च करते होंगे आप लोग। ऐसी हालत है। और आजकल तो काला-बाजार भी जोरों से चल रहा है। इसलिए ज्यादा पैसे दिये बिना कपड़ा मिलता नहीं। और दिन-ब-दिन उत्पादन कम हो रहा है। फिर ये हड़तालें आदि ! ये मेरे बदन के कपड़े देखो। कपास से कपड़े तक की सारी क्रियाएँ आश्रम में हुई। पिछले पन्द्रह बरसों से बाजार में कपड़े के क्या भाव रहते हैं, मुझे मालूम नहीं, क्योंकि कभी खरीदना ही नहीं पड़ता। लेकिन आप लोग खरीदते हैं। इन बहनों को देखिये। सारी धोतियाँ खरीदी हुई। तो ऐसा कीजिये, अपने बच्चों को बेच दीजिये और दूसरे ज्यादा अच्छे खरीद लीजिये। अच्छे बैल खरीदते हैं न हम ? उसी तरह। फिर देखिये, संसार कैसे सुख से बीतता है। गाँवों के उद्योग-धंधे छलनी हो गये हैं। गांधीजी ने कई बार कहा। पर आप लोग आज नहीं सुनेंगे। गले में फाँसी लगेगी, तब सूझेगा। तभी सुनेंगे भी। इतना अच्छा है कि अभी इस गाँव में आटे की चक्की नहीं आयी है। लेकिन कल यदि आप लोग गेहूँ बेचकर रोटियाँ खरीदने लगें और कहने लगें कि उद्योग दीजिये, तो

कच्छी या मारवाड़ी लोग या स्वयं सरकार भी आप लोगों के लिए क्या काम ढूँढ़ेगी ? कौन-से नये धंधे ईजाद करेगी ? तिल तुम्हारा, तेल मोल का, सन तुम्हारा; रस्सी मोल की; कपास तुम्हारी, कपड़ा मोल का। कैसी दुर्दशा है यह !"

इस तरह और भी प्रश्नोत्तर हुए। लोग शांति के साथ सुनते जाते, और नयी नयी दिक्कतों को पेश करते जाते। एक भाई ने अपना और अपने गाँववालों का दुख जाहिर करने के इरादे से पूछा : "हमारे गाँव में कुआँ खोदने का प्रयत्न किया गया, पर काम ऐसा ही पड़ा है। और पानी की कमी है।",

विनोबा ने समझाया "आपमें से कोई जरा वर्धा चलकर देखे। जो लड़के किसी समय कॉलेज में पढ़ते थे, वे अब क्या कर रहे हैं ! उनके हाथ में कुदाली है। वे कह रहे हैं कि ताकत अपने हाथ में होती है। वे लोग अपनी सब्जी, अपने फल, अपना कपड़ा खुद पैदा कर लेते हैं। देहात के बालकों को क्या इन चीजों की जरूरत नहीं होती ? लेकिन आप लोग या तो ये चीजें पैदा नहीं करते और करते हैं, तो शहरों में जाकर बेच आते हैं। मथुरा से बाहर जानेवाले मक्खन को, उस कृष्ण ने जैसे अपने साथियों को लेकर लूटना शुरू किया, वैसे ही इन बच्चों को करना होगा।"

इतने ही में एक बहन ने कहा : "बाबाजी, यहाँ बच्चों की पढ़ाई का कोई प्रबंध नहीं है।"

"बहुत अच्छा है। वह मदरसे में पढ़ने जायगा, तो धीरे-धीरे यवतमाल या अमरावती रहने चला जायगा। फिर यहाँ नहीं रह सकेगा।"

सर्वोदय की दीक्षा

: ६ :

रूंभा
११-३-'५१

सखी से रामधुन गाते हुए सवेरे पाँच बजे रवाना हुए। आज की मंजिल कल से भी कम थी यानी ग्यारह मील। पहले दिन शाम को ही महोदा के लोगों ने आग्रह किया था कि रूंभा जाते हुए रास्ते में हमारे यहाँ रुकना होगा। उन्होंने कलेवे का प्रबंध भी किया था। कलेवे में ज्वार की रोटी और गुड़ या प्याज या चून या दोनों या तीनों। लोग आतिथ्यपूर्वक बड़े प्यार से सवेरे यह कलेवा हमें देते हैं। उस निमित्त से उस गाँव में आधा घंटा ठहरना हो जाता है। गाँव के सज्जनों से परिचय होता है। ऐसे ही एक सज्जन यहाँ भी मिले। वे पहले रोज सखीकृष्णपुर भी आये थे और शाम को रूंभा भी आये। वे सर्वोदय-साहित्य का मननपूर्वक अध्ययन करनेवालों में से एक हैं। 'कांचनमुक्ति' के प्रयोग के बारे में उन्होंने अधिक जानना चाहा। बातचीत के बाद, उनका नाम याद रह सके, इसलिए विनोबा ने पूछा तो उन्होंने बताया 'सरोदे'। विनोबा ने कहा : "आज से आपका नाम सरोदे के बजाय 'सर्वोदय' हो गया।"

रूंभा में एक मुसलमान किसान के घर प्रबंध हुआ था। उसकी गैरहाजिरी में ही मित्रों ने उसके घर प्रबंध किया था। जैसे ही उसे खबर मिली, हमारे पहुँचते-पहुँचते वह खुद भी आ पहुँचा। सिर्फ मराठी ही बोल सकता था। उर्दू सीखी ही नहीं थी। घर के बरतन भी महाराष्ट्रीय ढंग के थे। उन पर नाम भी नागरी में लिखा था। एक पटरी पर 'नवं जग' तथा अन्य मासिक पड़े हुए थे।

पाँच बजे से मुलाकातों का समय रहता है। एक शिक्षक

मिलने आये। कई बरसो से वे अध्यापक हैं। तीस रुपया मासिक वेतन, अठारह रुपया महँगाई। अब आजकल इतने कम वेतन मे जिंदगी का बसर होना कैसे सभव हो? 'सरकार' की तरफ ध्यान लगाये बैठे रहते है। मार्गदर्शन चाहा, तो विनोबा ने कहा "हर मदरसे के लिए एक एकड जमीन हो। पौन एकड बच्चो की, पाव एकड शिक्षक की। सब मिलकर सारी जमीन जोते। शिक्षक अपने पाव एकड मे से कुछ हिस्से मे कपडे के लिए कपास भी बोये। पॉच आदमियो के लिए सौ गज कपडा यानी सौ पौण्ड कपास। पाव एकड यानी १० गुठा जमीन में से ३ गुठा जमीन कपास के लिए काफी होगी। शेष जमीन म सब्जियाँ। बुनाई खुद शिक्षक कर ले या उतनी मदद सरकार करे। इससे जीवन-मान आज की अपेक्षा सहज ही बहुत सुधर सकता है, और सरकार को यह योजना पसद भी आ सकती है। लडके पौन एकड में काफी उत्पादन कर लेंगे। उनके कपडे के लिए कपास तो निकलेगी ही, कलेवे के लिए फल भी निकल आयेंगे।"

❀ ❀ ❀

शाम की सभा मे विनोबाजी के लिए तरत पर आसन का प्रबन्ध था। परन्तु लोगो के बैठने का कोई प्रबन्ध नहीं था। न पानी का छिडकाव किया गया था, न बिछायत ही की गयी थी। विनोबाजी ने खडे रहकर ही कीर्तन किया। एकनाथ का भजन चुना था 'हरी पीछे रे हरी आगे रे, हरी घर मे रे हरी दर मे रे।' सामने बच्चे खडे थे। उनसे पूछा "जब आप लोग भी हरि-स्वरूप हैं और हम सब भी हरि-स्वरूप हैं, तो यह कैसे उचित होगा कि मैं तो सिंहासन पर बैठूँ और आप धूलि मे?" उस रोज का प्रवचन याने सभा-सयोजन के बारे मे लोकशिक्षण का वर्ग ही हो गया।

सुख के दिन !

: ७ :

पाँढरकवड़ा
१२-३-'५१

नौजवानो के उत्साह से कताई-मंडल की स्थापना विनोबा के हाथों की गयी। बरार के निष्ठावान् कार्यकर्ता डॉ० मोरे यहाँ आकर विनोबाजी से मिले। दूसरे गाँवों की तरह यहाँ भी जन-सख्या मे कमी हुई है। पहले नौ हजार की बस्ती थी। इन दस बरसों में ज्यादा होने के बजाय आठ हजार की हो गयी। विनोबा ने कहा : "यहाँ से मजदूर लोग बाहर चले गये। क्यों? यहाँ उद्योग नहीं, इसलिए। लक्ष्मी का निवास वहीं होता है, जहाँ उद्योग होता है! स्वराज्य आने मात्र से लक्ष्मी बढ़नेवाली नहीं है। अब हमारे काम मे कोई रुकावटें नही रही हैं, इसलिए हर मनुष्य को चाहिए कि वह कुछ-न-कुछ उद्योग करे। तभी देश को सुख के दिन दिखाई देंगे।

"हमारे देश को स्वराज्य प्राप्त हुए अब तीन वर्ष हो चुके। सब तरफ स्वराज्य का उदय सूर्योदय की तरह माना गया है। सूर्योदय होने पर अंधेरा नहीं रह जाता। स्वराज्य आते ही जनता जिम्मेवार हो जाती है। सब लोग उत्साह से काम करते हैं, एक-दूसरे के कंधे से कंधा लगाते हैं और पारस्परिक सहयोग बढ़ता है। अधिक-से-अधिक लोग काम कैसे करेंगे, मेरे देश की लक्ष्मी कैसे बढ़ेगी, मेरे देश का सौभाग्य कैसे प्रकट होगा—इसकी चिन्ता सब लोग करते हैं। परन्तु दुःख की बात है कि अब तक वह अनुभव इस देश मे नहीं होता। फिर भी ऐसी स्थिति है तो सही।

मिलों का पराक्रम !

"इधर जो उठा, उसे मैं यही कहते पाता हूँ कि देश मे पैदावार बढ़नी चाहिए। खेती की पैदावार बढ़नी चाहिए, उद्योग-धन्धे बढ़ने चाहिए। लेकिन उद्योग-धन्धे बोलने से नहीं बढ़ते, खेती बोलने से नही बढ़ती। खेती करनी पड़ती है, उद्योग करने पड़ते है। आज आपके इस गॉव मे कताई-मंडल की स्थापना की गयी, उस मंडल मे मै गया था। दो-चार आदमी वहाँ कात रहे थे। इस शहर की जनसंख्या लगभग दस हजार है। इन सब लोगो को कपड़ा चाहिए। बच्चो को टोपियाँ चाहिए, कुर्ते चाहिए, पाजामे चाहिए। बूढ़ो को, स्त्रियो को, पुरुषो को, सभी को कपड़ा चाहिए। परन्तु ये सब लोग मिल का कपड़ा लेते है। मुझे इस बात का रह-रहकर आश्चर्य होता है कि जिन मिलो मे इतने आदमियो की बुद्धि का उपयोग होता है, इतनी पूँजी लगती है, उन मिलो मे से हिन्दुस्तान को कितना कपड़ा दिया जाता है, इसका भी क्या आप कभी विचार करते है ? महायुद्ध शुरू होने से पहले हिन्दुस्तान की मिलो से फी आदमी १७ गज कपड़ा निकलता था। अब युद्ध के बाद यानी १० वर्ष की अवधि के पश्चात् प्रति मनुष्य १२ गज कपडा मिले निकालती हैं और इस साल ऐसा कहा गया है कि मिलो का कपड़ा और भी थोड़ा कम होगा। क्योंकि पिछले वर्ष हड़तालें वगैरा हुई और दूसरे भी कारण पैदा हुए। १०-१२ सालो का मिलो का यह पराक्रम है ! १७ गज का १२ गज और १२ गज का ११। गज, इस तरह मिलें प्रगति कर रही हैं। लोग मुझसे विवाद करते हैं। कहते हैं : "अब स्वराज्य आया है, तो मिलों से कपड़ा क्यों न पूरा किया जाय ?" मैं बहस नहीं करता। मैं कहता हूँ : "क्या मिलें कपड़ा देती हैं ? आज आप देखते हैं कि साधारण धोती-

जोड़ा चोरबाजार मे १५-२० रुपये मे मिलता है। कपड़ा थोडा है। श्रीमान् लोग कपड़े के दाम चाहे जितने देते है और इसलिए कपड़े की कीमत स्पष्ट ही बढ़ जाती है। जो बिलकुल गरीब लोग हैं, उनके काम के लिए अधिक कपड़ा नहीं मिलता। ऐसी स्थिति मे लोग यदि स्वयं सूत कातें, और मान लीजिये कि हरएक आदमी यदि १ घण्टा समय दे, तो भी साल मे उसका पन्द्रह गज कपड़ा बनेगा।"

बिना उद्योग के समृद्धि नहीं

"आपका एक गॉव यदि अपना कपड़ा बनाने का संकल्प कर ले, तो कितना बड़ा काम होगा ? देश का धन कितना अधिक बढेगा ? जो कपड़े के लिए लागू है, वही दूसरी चीजों के लिए भी लागू है। मैं आशा करता हूँ कि आपने जो कताई-मंडल कायम किया है, उससे लोग हार नहीं मानेंगे। वे लोग स्वयं तो कातेंगे ही, किन्तु अपने मित्रों को भी सिखायेंगे और इस प्रकार इस मंडल को बढ़ाने की कोशिश करेंगे। लोग मुझसे कहते हैं कि इस जमाने मे अगर हम सूत कातने बैठेंगे, तो 'पुराने युग मे जायेंगे। मैं उनसे कहता हूँ कि पिछले युग और अगले युग की चर्चा ही क्यों करते हो ? आज तुम्हें कपड़ा चाहिए और वह जिस प्रकार मिल दे सकती है, उसी प्रकार चरखा भी दे सकता है। फिर तुम्हें चरखा चलाकर कपड़ा बनाने मे क्या हर्ज है ? मैंने सुना है कि आपके पॉढरकवड़ा की आबादी पहले नौ हजार थी, अब आठ हजार हो गयी है। एक हजार आबादी किस कारण कम हो गयी ? इसलिए कि यहॉ मजदूरी नहीं मिलती। मजदूर लोग यह गॉव छोड़कर शहर में काम के लिए गये हैं। लेकिन यहॉ से वहॉ जाने पर भी उन्हें कौन सा उद्योग मिलनेवाला है ? यदि हम

काम ही न करें, तो मजदूरी कहाँ से मिलेगी ? इसलिए जब तक उद्योग नहीं बढ़ेंगे, तब तक देश के बेकार लोगों को काम नहीं मिलेगा। स्वराज्य मिलने पर भी हम यदि आलसी ही रहे, तो हमारा स्वराज्य भी सुस्त ही रहेगा। हम उद्योगी रहेंगे, तभी हमारे स्वराज्य में लक्ष्मी रहेगी। स्वराज्य आया, इसका इतना ही मतलब है कि हममें काम करने का उत्साह आया और हमारे काम में रुकावटें नहीं रह गयीं। इसलिए मैं इतना ही कहना चाहता हूँ कि हरएक मनुष्य कुछ-न-कुछ उद्योग करेगा, तभी हमारा देश सुख के दिन देख सकेगा।''

...

खतरे की सूचना   : ८ :

पाटणबोरी
१३-३-'५१

नित्य की भाँति रामधुन गाते हुए हम लोगों ने बड़े सवेरे करीब पाँच बजे पाँढरकवड़ा के मित्रों से विदा ली। तीन मील पर चालबरड़ी नामक देहात में कलेवे के लिए रुकना था। विनोबाजी तो पहुँचते ही तकली चलाने बैठ गये। वहाँ उपस्थित लोगों से बात करने लगे! फिर उन्हें कपड़े के स्वावलम्बन के बारे में समझाया। स्त्रियाँ दरवाजे की आड़ से ही यह सब देख रही थीं। बाहर आज तक निकली ही नहीं थीं। फिर आज कैसे निकलतीं? घर के मालिक ने बहुत समझाया। "बार-बार संत-दर्शन होने के नहीं। यह परदा और झूठी लज्जा किसलिए?" लेकिन वे नहीं मानीं! हमारी श्री महादेवी बहन भीतर गयीं। उन्हें प्रेम से समझाया। जब वे नहीं समझीं, तो उन्हें प्रेम से डाँटा भी और सारे परिवार को बाहर ले आयीं। छोटी-बड़ी पंद्रह के करीब बहनें होंगी। चार-छह-सात कक्षा तक पढ़ी हुईं। पर संकोच और झूठी लज्जा! पुराने विचार की मारवाड़ी बहनें मुँह पर परदा करती हैं। ये लोग परदे के बिना परदा करती हैं। आज वहाँ क्रांति हो गयी। फिर तो बहनों ने तेलुगु में विनोबाजी से बातें भी कीं।

गाँव-गाँव में एक-एक दीपक

रास्ते में वांझरी नामक छोटे-से गाँव में श्री मारोतीराव के घर पाँच मिनट रुके। यहाँ भी सर्वोदय-साहित्य का दीप जल

रहा है। ये सज्जन आदतन खादीधारी, गांधी-विचारों में रंगे हुए, अत्यन्त नम्र और सर्वोदय-साहित्य के प्रचारक थे। घर मे चरखा और गो माता भी। एक-एक देहात मे एक-एक दीपक भी ऐसा हो, तो सारा देश रोशन हो जाय!

देहातों की बरबादी पर शहरों की आबादी

पाटणबोरी गॉव से दो फलांग दूर तक बाजे-गाजे और जय-जयकार के साथ लोग लिवाने आये। चार हजार की आबादी का गॉव, पर यहॉ की लोक-संख्या भी पिछले दस वर्षों मे नहीं बढ़ी। मजदूर गॉव छोड़कर चले जाते हैं। सब जगह वही शिकायत! जाते कहॉ हैं? नजदीक के शहरों मे—जहॉ कारखाने होते हैं। देहातो की बरबादी और शहरों की आबादी!

सरहद का गॉव था, इसलिए विनोबा ने हिन्दी मे भाषण किया। सभा मे बहनें तो थीं ही, लड़कियॉ भी काफी तादाद मे थीं। भाषण के बाद उन्होंने विनोबाजी को घेर लिया। "हमे मराठी मे सब समझाइये।" विनोबाजी ने टालने की कोशिश की, परंतु लड़कियाँ हारनेवाली नहीं थीं। विनोबाजी को मराठी मे उन लड़कियो के लिए दूसरी बार कहना पड़ा। लोग सभा समाप्त होने के कारण उठ ही रहे थे कि फिर बैठ गये। हिंदुस्तान टाइम्स के श्री कलहन ने मुझे कहा: "मुझे तो हिन्दी से भी यह मराठी भाषण ज्यादा पसंद आया।" अब वे मराठी समझने लग गये थे। तीन रोज मे हमारे साथ वे खूब घुल-मिल गये थे।

आँख की बराबरी चश्मा नहीं कर सकता

विनोबा ने पैदल यात्रा का उद्देश्य समझाया। वे हवाई जहाज के विरोधी नहीं हैं। बल्कि आज से भी अधिक गतिमान् हवाई जहाज के हामी हैं, ताकि एक घंटे मे दिल्ली पहुँच सके। परंतु

की ओर से बराबरी चश्मा नहीं कर सकता और पैदल यात्रा की बराबरी हवाई जहाज नहीं कर सकते। हमे देश का दर्शन करना है। देश से एकरूप होना है। यह काम पैदल यात्रा से ही सध सकता है।

हमारे रक्षक

देहातो के बारे मे कहा : "देहात ही हमारे आधार हैं। वहाँ आज भी हमारी संस्कृति का दर्शन होता है। वे ही हमारी रीढ़ है, हमारी आत्मा हैं। हमारे असली रूप है। पुराने ऋषि को आज के देहाती की पोशाक मे भले ही फर्क लगे, परतु उनकी आत्मा अब भी वैसी ही है। भावना मे कोई भंग नहीं हुआ है। आज खुद भूखा होते हुए भी वह किसी भी तरह अपने अतिथि को भोजन करवाने की फिक्र करता है। लेकिन आज इन्हीं देहातो की दौलत, बुद्धि, शक्ति, सब बाहर जा रही है। इसे रोकना होगा। खेती, गो-सेवा, बढ़ईगिरी, कपड़ा, तेलघानी आदि की मदद देनी होगी। तब देहात पनपेंगे, हमारे देश की रक्षा हो सकेगी। हिन्दुस्तानवाले अगर अपने देश की रक्षा के लिए शहरवालो पर निर्भर रहे, तो खतरे मे रहेंगे। देहातवाले ही देश की रक्षा कर सकते है। जमीन के लिए उन्हे इतना प्यार होता है और वे उससे ऐसे चिपके रहते हैं कि उसके लिए मर मिटते है। इसलिए उनकी सेवा द्वारा उन्हे बलवान् बनाना ही सर्वोदयवालो का काम है।"

आदिलाबाद
१४-३-'५१

पूर्ववत् पराधीन

पाटणवोरी से चलकर हमने पैनगगा पार की। यहाँ हैदराबाद की सरहद शुरू हुई। कार्यकर्ता हमें लिवा ले जाने के लिए उस पार हमारी प्रतीक्षा कर ही रहे थे। पंद्रह मील की मंजिल तय करके दस बजे तक आदिलाबाद पहुँचे। गाँव से करीब एक मील दूर ग्रामवासी तिरंगा झंडा लेकर विनोबाजी को लेने आये थे। राज्य के अफसर भी थे। एक जमाना था, जब तिरंगे और वंदेमातरम् के लिए बड़ी भारी कीमत यहाँ चुकानी पड़ती थी। आज लोग कुछ आज़ादी अनुभव कर रहे थे। परंतु फिर भी उनके चेहरों पर से चिन्ता की छाया दूर नहीं हुई थी। वे सुख का अनुभव नहीं कर रहे थे। विनोबाजी ने शाम की प्रार्थना में इस सम्बन्ध में खास तौर पर कहा : "जब तक मनुष्य की निज की आत्मा जाग्रत नहीं होती, तब तक एक दुःख मिटता है, तो दूसरा शुरू हो जाता है। पेशवाओं के राज्य में लोग दुःखी थे। उसके बाद अंग्रेजों का राज्य आया। माउण्ट एलफिंस्टन पहला गवर्नर बना। उसका इंतजाम देखकर हमारे लोगों ने शुरू में सुख का अनुभव-सा किया। काम वक्त पर होते थे। न्याय मिलता दिखाई देता था। कानून से काम चलता था। लोग खुश थे। लेकिन थोड़े ही अरसे में वे दुःखी हो उठे। डॉक्टरी इलाज से एक बीमारी हटती है, तो दूसरी शुरू होती

है। हिंसा का भी ऐसा ही है। रजाकारों से हमको किसने छुडाया? हिंसा ने! पुलिस ने और हथियारों ने!! उससे हम पराधीन ही रहे। जीवन में कुछ परिवर्तन ही नहीं हुआ। इस तरह जीवन कैसे सुखी हो सकता है?"

एकमात्र हल : राम-नाम

देश के सामने जो अनेक समस्याएँ आज उपस्थित हैं, उनका जिक्र करते हुए उन्होंने कहा "समस्याएँ देखकर मुझे आश्चर्य नहीं होता। हमारा देश भी तो बहुत बडा है। और फिर आजादी आये दिन भी कितने हुए? जिम्मेदारी भी हम पर एकाएक आ गयी। इसलिए हमारी देश की नैया गहरे पानी में पड गयी है। *पर इस सबका हल एक राम-नाम के सिवा किसी* मानवीय प्रयत्न में है, ऐसा मैं नहीं मानता।"

फिर राम-नाम का अर्थ समझाते हुए कहा "जो हरि-नाम लेगा, वह और कोई नाम ले ही कैसे सकता है? परमेश्वर की उपासना और पैसे की उपासना, दोनों साथ-साथ नहीं चल सकतीं! अगर आप अपने हृदय में परमेश्वर को स्थान देते हैं, तो और किसी चीज को स्थान दे ही नहीं सकते।" विनोबा ने आगे कहा. "हमारे यहाँ कितने भेद पडे हुए हैं। उन्होंने हमारा रास्ता रोक रखा है। अगर ये मिटते हैं, तो हमारा रास्ता साफ होता है और देश एक हो जाता है।"

हैदराबाद में कुल चार पाँच भाषाएँ चलती हैं—तेलुगु, मराठी, कन्नड और उर्दू-हिन्दी। विनोबा ने लोगों को एक-दूसरे की भाषाओं का अध्ययन करने की सलाह दी और कहा "हिन्दुस्तान में दुःख तो सब तरफ पडा है। जरूरत है सिर्फ सेवा में लग जाने की। पक्ष-भेद आदि से सुरक्षित रहने की तरकीब एक ही है—हरि-नाम! हम सब एक भगवान् के पुत्र हैं।

'अमृतस्य पुत्राः' । देह आखिर खाक होनेवाली है । फिर ब्राह्मण की खाक और हरिजन की खाक, ऐसी पहचान नहीं हो सकेगी । हम देह में इसीलिए आये हैं कि पडोसियों की, सबकी सेवा करें । परस्पर प्रेम करें । प्रेमभाव बढ़ायें । इसीमें मानव-देह की सार्थकता है । और यही हरिनाम का अर्थ है ।"

सर्वोदय की बुनियाद

सर्वोदय-समाज के बारे में कहा : "लोग कहते हैं, अब तक हमें कांग्रेसवालों से आशा थी । अब सर्वोदय-समाज से आशा है । यह कैसा भ्रम है ? 'सर्वोदय' क्या कोई अमृत की पुडिया है कि खाया और पाया । हमें व्रत लेना होगा कि हम अपने जीवन के लिए औरों से सेवा नहीं लेंगे, बल्कि जितना बन सकेगा, औरों की ही सेवा करेंगे । यह सर्वोदय-समाज की बुनियाद है । सर्वोदय-समाज सबका है । उसकी सदस्यता के लिए किसीकी शहादत या गवाही नहीं चाहिए । जिसने कहा कि मुझे सर्वोदय के सिद्धान्त मान्य है, वह उसका सदस्य हो गया ।"

अन्त में, सभा में विनोबा ने पुन. एक बार सब भेद भूलने को कहा । यहाँ तक कि 'सर्वोदयवाले और गैर-सर्वोदयवाले— ऐसा भी भेद कहीं-कहीं अगर होने लगा हो, तो वह भी भुला देना चाहिए ।'

आदिलाबाद से सीधे निर्मल होते हुए निजामाबाद हैदराबाद जाने का कार्यक्रम था । परन्तु आदिलाबाद से २२ मील पर, पश्चिम की ओर पहाडी के भीतर माडवी नामक गॉव मे पार्वती-बहन कस्तूरबा-केन्द्र चला रही थी । बहन ने विनोबाजी से वहाँ चलने का आग्रह किया और विनोबाजी ने स्वीकृति भी दे दी । साथियों को उनके स्वास्थ्य की बहुत चिन्ता थी, पर बहुत समझाने पर भी विनोबा ने प्रोग्राम कायम रखा ।

जंगम आश्रम

हमारी सर्वोदय-यात्रा—यानी चलता-फिरता आश्रम ही बन गया है। ३-४५ बजे उठने की घंटी बज जाती है। ठीक परंधाम की तरह। ४-३० को प्रार्थना—ईशावास्य और अधिकरण माला। ठीक ५ बजे कूच। कूच के वक्त कुछ दूर रामधुन। ६ बजे के पहले-पहले पड़ाव पर पहुँचना। करीब एक घंटे तक, गाँववाले जो जमा हो जाते हैं, उनसे परिचय, कहीं भजन सुनना, आदि। ८ तक विश्रांति। २ से ५ तक पत्र-व्यवहार, लेखन। ५ से ८ प्रार्थना-प्रवचन-मुलाकातें। ६ बजे सब सो जायँ, ऐसी अपेक्षा रहती है।

निष्ठा में तेजस्विता होती है

आजकल हर मुकाम पर दूर-दूर से लोग आते हैं, और खासकर स्त्रियाँ बच्चों को छोड़कर आती हैं। इसलिए उनकी दृष्टि से प्रार्थना व प्रवचन का कार्यक्रम पाँच बजे तक समाप्त कर देना पड़ता है। पत्र-व्यवहार भी नियमित नहीं हो पाता। परन्तु काफी होता है, और महत्त्वपूर्ण होता है। एक तरफ देश का दर्शन, दूसरी ओर साथियों का मार्गदर्शन। दोनों साथ-साथ चल रहे हैं। उस दिन एक भाई ने देहात के लोगों की परिश्रम-निष्ठा के बारे में पूछा। विनोबा ने लिखवाया : "आप लिखते हैं कि गाँव के लोग श्रमनिष्ठ तो हैं; लेकिन यह ठीक नहीं है। गाँव के लोगों को श्रम करना पड़ता है, इसलिए वे करते हैं। लेकिन उसमें निष्ठा नहीं होती। वह लाचारी है। निष्ठा में तेजस्विता होती है। श्रमनिष्ठ पुरुष किसीका शोषण नहीं करेगा। और दूसरों को अपना शोषण करने भी नहीं देगा। शोषण मिटाने के लिए व्यापक और सर्वांगीण स्वावलम्बन चाहिए, जो श्रमनिष्ठा से ही सिद्ध हो सकता है।"

झूठी और सच्ची गरीबी

दूसरे एक सहयोगी को लिखा : "देहातों में काम करने के लिए देहात में रहनेवाले लोग ही निकलने चाहिए। इसके बिना यह प्रश्न हल नहीं हो सकेगा। तब तक बाहर के कुछ लोग काम आ सकते हैं। कार्यकर्ता को चाहिए कि वह स्वावलम्बन-विद्या, शिक्षणशास्त्र और निसर्गोपचार, इन तीन बातों में प्रवीण होकर देहात में जाय। फिर उसे झूठी गरीबी बाधक नहीं होगी और सच्ची गरीबी रुचे बिना नहीं रहेगी।"

त्रिविध साधना

एक और महत्त्वपूर्ण पत्र लिखवाया : "व्यक्तिगत प्रयोग, उसमें से व्यक्तिगत क्रांति ! सामूहिक प्रयोग, उसमें से सामूहिक क्रांति ! सामाजिक प्रयोग, उसमें से सामाजिक क्रांति ! ऐसी है हमारी विचार-सरणी। व्यक्ति, समूह और समाज, इन तीन सीढ़ियों से मोक्ष की साधना है। अभी हमारे मित्रों को हमारे कार्य की गंभीरता की प्रतीति नहीं हुई। अभी उन्हें यह चंदरोजा खेल लगता है। उसमें उनका दोष नहीं है। हमारे इसी जन्म के पूर्व-कृत्यों का दोष है। उसे धो डालने जितनी हमारी तपश्चर्या कहाँ हुई है ? हरि-कृपा से होगी !"

...

जंगल में मंगल

: १० :

कोशलपुर
१४-३-'५१

लोग इसे कुचलापुर कहते हैं। विनोबा ने कहा यह कुशालापुर है, जो कोशलपुर से बना है। रास्ते में सूंकड़ी पर श्री केशव रेड्डी ने विनोबाजी को रोका और गांधी-आश्रम बताया। गाँव के मदरसे के पास ही एक हॉल में गांधीजी की मूर्ति की स्थापना की गयी है। केशव रेड्डी को यह मूर्ति प्रेरणा दे रही है कि अब आश्रम का नाम रखा है, तो काम शुरू करो।

कोशलपुर बारह सौ की बस्ती का गाँव है, जिसमें दो सौ मकान हरिजनों के हैं। विनोबाजी करीब-करीब हर घर में हो आये। एक मुसलमान से भी भेंट हुई। मकान को स्वच्छ, साफ-सुथरा न पाकर उन्होंने सहज पूछा कि सफाई कब करते हो? "जुम्मे के जुम्मे"—भाई ने जवाब दिया। उसे रोजाना सफाई करने की बात समझाकर डेरे पर लौटे। सभा की तैयारी हो रही थी। बड़ा आँगन था। दो नौकर सफाई में लगे हुए थे। विनोबा ने हाथ में झाड़ू लिया और सफाई शुरू कर दी। फिर तो करीब पचास आदमी जुट पड़े। देखा कि सफाई ठीक हो रही है, तो पानी छिड़कना शुरू किया। लोगों ने भी घर-घर से घड़ा लाकर छिड़काव कर दिया। जंगल में मंगल हो गया। फिर मालूम हुआ कि गाँव का हनुमान का मंदिर और कुआँ अब तक हरिजनों के लिए खुला नहीं है। दोनों स्थान हरिजनों के लिए खोल दिये

गये। सवेरे जब विनोबा ने ग्राम-प्रवेश किया था, तब भी लोगों ने करीब घण्टाभर हरिकीर्तन सुनाया था। [प्रार्थना के समय भजन-मंडलियाँ रास्ते से मृदंग-पखावज के साथ भजन गाती हुई आयीं और बड़ी तरतीब के साथ प्रार्थना में शरीक हुईं। "जिसने हरि का नाम लिया और नाम लिया न लिया"—भजन भावभरे मधुर कंठ से गाया जा रहा था। कल का आदिलाबाद का प्रवचन पुनः सबकी स्मृति में ताजा हो गया। विनोबा ने प्रार्थना मे समझाया :

"इस छोटे-से गाँव मे हरिचर्चा चलती है, यह देखकर मुझे खुशी हुई। हर गाँव मे वह होनी चाहिए। भगवान् ने मनुष्य को दो बड़ी शक्तियाँ दी हैं। वाणी और हाथ। वाणी से भगवान् का नाम तो आप लोग लेते ही हैं। पर हाथों से भगवान् का काम भी होना चाहिए। आप लोग अपना कपड़ा तैयार कीजिये। तब जो भजन आप गाते हैं, वह कृतार्थ होगा।"

पहले सबके लिए विनोबा ने हिन्दी में भाषण दिया। आस-पास के कई लोग, खासकर स्त्रियाँ ऐसी थीं, जो केवल मराठी समझती थीं। उनके लिए फिर मराठी भी दोहराया। अनेक लोग, खासकर हरिजन भाई, केवल तेलुगु जानते थे। उनके लिए श्री व्यंकट रेड्डी ने तेलुगु मे सुनाया। व्यंकट रेड्डी आदिलाबाद से साथ हुए हैं। सर्वोदय-सम्मेलन की ओर से वे हमारे साथ हैं। वे मचिरायल के सेवाश्रम के संचालक और निष्ठावान् युवक है। विनोबाजी के मार्गदर्शन मे इनका आश्रम चल रहा है। . .

दो अमर नाम

: ११ :

गांडवी
१६-३-'५१

श्री बलीराम पटेल ने यह गाँव बसाया है। एक जमाने में बड़े-बड़े गहने और लम्बी-चौड़ी घाघरा-ओढ़नी पहननेवाली बलीराम पटेल की *सहधर्मिणी आजकल गुजराती लिबास में रहती है।* बलीराम पटेल बंजारे हैं और उन्होंने बंजारों का इतिहास लिखा है। इतिहास-संशोधक की कुशलता से और गहराई से लिखी गयी इस किताब का लेखक केवल चौथी श्रेणी तक ही पढ़ा हुआ है। चार बरस के परिश्रम से वह किताब तैयार हुई है। अपनी व्यापारिक कुशलता के कारण प्रख्यात राजपूताने की यह पुरानी जाति आजकल हिन्दुस्तानभर में जहाँ-तहाँ फैली हुई है। अपनी सुधारक वृत्ति के कारण जाति से बहिष्कृत होकर अनेक दिन अकेले रहकर आखिर बलीराम पटेल ने अपने समाज में करीब एक हजार घर अपने विचारों के बना लिये हैं।

गाँव छोटा-सा है। १९४१ में बस्ती ६६५ थी। १९५१ में ११६५ हुई। बड़े-बड़े रास्ते हैं। मदरसा है। कस्तूरबा-केन्द्र की ओर से बालवाडी और स्वास्थ्य-सुधार केन्द्र चल रहे हैं। विनोबा ने लोगों से कहा : "हम तो सीधे हैदराबाद जा रहे थे, परन्तु हमारी लाड़ली बेटी पार्वती ने हमें यहाँ आने को कहा, तो हमें भी लगा कि उसका सेवा-कार्य देखना चाहिए। और उस निमित्त आपसे भी दो बातें करनी चाहिए।"

दुमदुमली पंढरी

प्रार्थना में विट्ठल-नाम-संकीर्तन का अद्भुत आनन्द रहा। पहाड़ों में रहनेवाली इस भक्त-मंडली ने पहाड़ी स्वर से किन्तु मधुर कंठ से महाराष्ट्र का प्रसिद्ध भजन सुनया : "विट्ठल-विट्ठल गजरीं, अवघी दुमदुमली पंढरी" सारा पंढरपुर विट्ठल नाम से गूँज उठा है। सब तन्मय होकर सुनते रहे।

इवलेसें रोप

प्रार्थना-प्रवचन में गाँववालों को पूज्य कस्तूरबा का परिचय देते हुए विनोबा ने कहा : "वसिष्ठ और अरुंधती की तरह, और राम और सीता की तरह हमारे देश में गांधीजी और कस्तूरबा के नाम अमर रहेंगे। अरुंधती का व्रत था कि पति के मार्ग को रोके बिना पति के साथ पथक्रमण करना। सीता तो राम की इजाजत के बिना ही वनवास में राम के साथ निकल पड़ी। बा भी जहाँ-जहाँ गांधीजी गये, उनके साथ गयीं। सदा बापू के साथ रहीं और अन्त में सरकार के साथ लड़ते हुए सत्याग्रह-युद्ध में वे बापू के संग कारावास में गयीं, और वहीं गांधीजी की गोद में उन्होंने प्राण छोड़े। उनके स्मरण में सारे देश में ग्रामसेवा का कार्य हो रहा है। यह केन्द्र आज एक छोटा-सा पौधा है। इसे आप छोटा न समझें। इसकी ठीक देखभाल करेंगे, तो उसे आगे अच्छे फूल-फल लगेंगे। ज्ञानदेव ने कहा है न 'इवलेसें रोप लावियेलें द्वारीं, त्याचा वेलू गेला गगनावरीं'—छोटी-सी बेल लगायी थी, पर सारे आकाश में वह फैल गयी।"

आर्त और भक्त

शाम को गाँव देखने गये। ६० बरस के एक गौंड से भेंट हुई। वह विनोबा के चरणों से लिपट गया। आर्त और भक्त,

दोनों का दर्शन एक साथ हुआ। "कोई इच्छा तो मन में नहीं रही? अब और कितने दिन बाकी हैं?" विनोबा ने पूछा।

"सब इच्छाएँ पूरी हुईं। देह को इसके पहले ही जाना था। पर आपका नाम सुन रखा था। आपके दर्शनों की अभिलाषा थी। आज आपने पधारकर उसे पूरा किया। अब सुख से मरूँगा।"

लोगों ने बताया कि गोंड जानकार है। गाँवभर की हकीमी करता है। लोग उसे मानते भी बहुत हैं।

गाँव के आखिरी छोर पर गोंडों के लगभग ८० मकान हैं। इकट्ठे रहते हैं। अपनी स्वतन्त्रता को खोना नहीं चाहते। तरकारियाँ थोडी बहुत उगा लेते हैं। दूसरों से ज्यादा मिलते जुलते नहीं। आठ दस घर मिलकर एक देह की तरह रहते हैं। एक *गोंडन के घर गये, तो वह झट भीतर गयी, कुकुम ले आयी और* विनोबाजी के तिलक किया।

प्रार्थना के बाद श्री बलीराम पटेल ने पूछा "यहाँ इर्दगिर्द कुछ देखने के स्थान हैं। गरम पानी के झरने हैं। मोहारी देवी का देव स्थान है। और एक सेवा का केन्द्र है, अनतपुर। देखकर ही *नहीं जाइयेगा? ये स्थान कोई आपके* हैदराबाद के राह पर नहीं हैं। जो स्थान हैदराबाद के राह पर हो, वहाँ आप पैदल जाइये। परन्तु बाजू में मुडना हो, तो वहाँ वाहन में बैठने में क्या हर्ज है?

पटेल ने काफी जोर देकर तर्क के साथ अपनी बात रखनी चाही, पर वे जितना जितना भी तर्क किये जाते, वातावरण में विनोद और हँसी ही बढती जाती। आखिर पटेल को विनोबा के निश्चय के सामने हार तो माननी ही थी। पर उन्होंने कोशिश पूरी पूरी की।

निकलने से पहले विनोबा ने केन्द्र के कार्यकर्ताओं से बातें की। दो स्त्री-कार्यकर्ता यहाँ हैं। दूसरी बहन, जो स्वास्थ्य-केन्द्र में मदद करती हैं, कन्नड़भाषी हैं, सात भाषाएँ जानती हैं। पार्वतीबहन और ये काकी--सब इन्हें काकी के नाम से पहचानते हैं--मॉन्टेसरी की तरह रहती है। 'काकी' गाँवभर की काकी हैं। बंजारों की भाषा दोनों अच्छी तरह बोल लेती हैं। इस भाषा में गुजराती और मारवाड़ी, दोनों भाषाओं के शब्दों का बाहुल्य है। फिर दूसरी भाषाओं के शब्द भी हैं। विनोबा ने दोनों से नित नया अध्ययन करते रहने को कहा। "गाँवों में काम करनेवाली ये बहनें अगर भीतर से *ज्ञान* और *भावना* तथा आनंद का स्रोत नहीं अनुभव करेंगी, तो काम कैसे करेंगी ?"

. .

दुखियों की दुख ही एक जाति　　: १२ :

तळमड़गू
१७-३-'५१

पन्द्रह मील की मंजिल थी। पाटोदा के जंगलो और पहाड़ो को पारकर हम ग्यारह बजे के करीब तळमड़गू के नजदीक पहुँचे। उधर से गॉववाले सनई आदि स्थानीय वाद्यो के साथ जय-जयकार करते हुए करीब आधे मील दूर आगे निकल आये थे।

तळमड़गू मे कपास काफी होती है। लेकिन कताई दो-चार जगहो मे ही होती है। "हर घर मे कताई क्यो नही होती ?" विनोबा ने पूछा। "कार्यकर्ता का अभाव", यही एक उत्तर था। कुछ लोगो की माली हालत काफी अच्छी नजर आयी। यहॉ ज्यादातर रेड्डी लोग ही हैं। उनमे से कुछ सार्वजनिक काम करना भी चाहते थे। परन्तु आम तौर पर जैसे और जगह होता है, यहाँ भी अपने से आगे नजर पहुँचाकर सामुदायिक सुख-दु:ख के बारे मे सोचने की किसीको फ़ुरसत नहीं। इसीलिए विनोबा को इन लोगो से कहना पड़ा कि "सारा गॉव अपना है, इस भावना से गॉव के बारे मे विचार करना सीखो। गॉव मे चारो तरफ कितना दुःख पडा है। इसलिए और सब भेदभाव भूलकर दुखियो का दुःख मिटाने में लग जाओ। इस गॉव मे कोई दुःखी नहीं रहना चाहिए। यह मत देखो कि दुःखी लोग किस जाति के हैं। दुखियों की अलग-अलग जातियॉ नहीं होतीं। वे दुःखी होने

है—बस यही उनकी एक जाति। जैसे सज्जनों की भी कोई अलग जाति नहीं होती। सज्जन, संत, सब एक ही जाति के होते हैं। सज्जन यही उनकी जाति। और उसी तरह पापियों की भी कोई अलग जातियाँ नहीं होतीं। सब पापी 'पापी' ही है। मरनेके बाद परमात्मा यह नहीं पूछेगा कि तू ब्राह्मण है या रेड्डी। वह यही पूछेगा कि तूने पाप किया है या पुण्य। यह जो पैसा आप कमाते हैं, वह आपके साथ नहीं आनेवाला है। इसलिए आपके पास जो धन है, उसे सेवा में लगा दीजिये। तभी आप भगवान् के सामने खड़े हो सकेंगे।" ..

आप लुट जायँगे

: १३ :

गुड़ीहतनूर
१८-३-'५१

गुड़ीहतनूर पहुँचने के पहले बीच में सीतागुंदी पर लोगों ने बड़े समारोह से स्वागत किया। दो-तीन फलांग वे पताकाएँ, माला आदि लेकर आये। सीतागुंदी पर सबके लिए कलेवे का प्रबन्ध भी किया था। विनोबा नहीं रुक सकते थे, पर साथियों ने गाँववालों की ओर से मिली हुई ज्वार की रोटियों को चाव से स्वीकारा। आदिलाबाद से यह स्थान केवल दस मील पर है। वहाँ से भी काफी लोग यहाँ पहुँच गये थे।

गुड़ीहतनूर करीब दस बजे पहुँचे। देहात के बाजे, और गांधीजी की जय-जयकार के साथ डाक बँगले में डेरा रखा गया।

अब आगे का रास्ता पक्की सड़क का था। अब तक हम काफी कच्चे रास्ते से गुजर चुके थे। "रास्ते अच्छे होने से सुभीता तो होता है, परन्तु किनको ?" विनोबा ने लोगों से प्रार्थना-सभा में पूछा। "शहरवालों को, जो आसानी से देहात में आकर देहातवालों को लूट सकते हैं।" विनोबाजी ने देहातों के दर्शन का जिक्र किया : "मांडवी की ओर देहातों में अब भी कुछ धंधे चलते हैं। रँगरेज हैं। चरखे हैं। आटा अभी हाथ से पिसा जाता है। तेलघानियाँ चलती हैं। लेकिन यह सब कब तक ? सड़कें नहीं बनीं तब तक ? सड़कें बनीं और पूँजीवालों ने आटे

की चक्की लगायी कि आप लोग फिर उस चक्की के गुलाम बन जायेंगे।"

घरों में चक्की चलती थी, तो स्वास्थ्य भी अच्छा रहता था। चक्की के गीतों से घर में शिक्षण का वातावरण भी बनता था। विनोबा ने चक्की के कुछ गीत भी गाकर सुनाये। मराठी संत-वाङ्मय में ऐसे काफी गीत हैं—"पहिली माझी ओवी, ओवीन जगत्र, गाईन पवित्र पांडुरंग"—आदि।

"चक्की बन्द हुई कि ये भजन भी बन्द हो जायेंगे। मैं आपको सावधान किये दे रहा हूँ। लोग आपकी सेवा के बहाने आयेंगे और आप लुट जायेंगे।"

...

विनोवा : "भाषण किस भाषा में होना चाहिए ?"

जवाब : "तेलुगु मे होगा, तो सब समझ लेंगे।"

बोलनेवाला मराठी-भाषी था। मै मन ही मन अचंभा करता रहा। अक्सर कई सरहदी शहरों मे मराठी-हिन्दी या हिन्दी-गुजराती वाद चलता रहता है। पर यहाँ के मराठी लोगों ने विनोवा को तेलुगु में भाषण करने की सलाह दी। ऐसी एक-रसता सारे देश मे कब दिखाई देगी ?

व्यापार-धर्म

बाजार मे एक अशुद्ध व्यवहार का किस्सा हो गया था। उसकी बात विनोवा के कान पर आ गयी थी। लोक-शिक्षण की दृष्टि से इसी घटना को उन्होंने अपने प्रार्थना-प्रवचन का विषय बनाया।

"आप इतने लोग दूर-दूर के गाँवों से आकर यहाँ इकट्ठे हुए है, यह देखकर मुझे खुशी होती है। मुझे इस गाँव की कोई जानकारी नहीं थी। लेकिन यहाँ मुकाम रखा गया, वह अच्छा ही हुआ, क्योंकि आज यहाँ का बाजार था। दुनियाभर मे बाजार कैसे चलता है यह तो दुनिया जाने, लेकिन हिन्दुस्तान मे जहाँ बाजार भरता है, वहाँ झूठ ही झूठ का बाजार होता है। आज का ही किस्सा है। एक दूकान पर एक आदमी पुस्तक खरीदने गया। दूकानदार ने उसको वह पुस्तक १४ आने मे दी। फिर वह आदमी दूसरी दूकान पर पहुँचा। वहाँ उसको वही पुस्तक दिखाई दी, तो उसने उसके दाम पूछे। दूकानदार ने ६ आने बताये। तो फिर वह आदमी पहली दूकान पर वापस आया और दूकानदार से पूछने लगा कि इस पुस्तक के तुमने १४ आने कैसे लिये, जब कि यह दूसरी दूकान पर तो ६ आने मे मिलती है। दूकानदार ने जवाब दिया, भाई, मैं तो

व्यापारी हूँ। मुझे जो दाम लेने थे, मैंने लिये। तुमको अगर यह पुस्तक दूसरी दूकान पर ६ आने में मिलती थी, तो तुम वहीं से खरीदते। यानी दूसरी दूकान से नहीं खरीदी, यह खरीददार का ही दोष है, दूकानदार का कोई दोष ही नहीं है। यह सब हो रहा था, इतने में हमारा एक साथी वहाँ पहुँचा। उसने पूछा, क्या बात है? उस आदमी ने कहा कि यह पुस्तक इस दूकानदार ने १४ आने में दी, जब कि दूसरी दूकान पर ६ आने में मिलती है। हमारे भाई ने पुस्तक खोलकर दाम देखे और कहा, इस पुस्तक के दाम न १४ आने है और न ६ आने है, बल्कि ३ आने हैं। वह कीमत उस पुस्तक पर छपी थी। उस तीन आने में दूकानदार का कमीशन आदि सब आ गया। इसलिए दूकानदार को उससे अधिक कीमत लेने का कोई हक नहीं था। फिर दूकानदार का और पुस्तक खरीदनेवाले का झगड़ा शुरू हुआ। मैं इस बात को आगे बढ़ाना नहीं चाहता। हमारे बाजार कैसे होते है, यह समझ लो। "झूठ ही लेना, झूठ ही देना, झूठ चबेना!"

होना तो यह चाहिए कि व्यापारी सेवा का भाव रखें। व्यापार एक धर्म है। शास्त्रकारों ने बताया है कि वैश्यों को व्यापार के धर्म का आचरण करना चाहिए। धर्म का मतलब लूटना नहीं होता, बल्कि सेवा करना होता है। जो चीज एक जगह नहीं मिलती है, उसको दूसरी जगह से लाकर लोगों को देना और उसमें जो अपनी मेहनत लगी हो, उसको जोड़कर ठीक भाव से बेचना। इसका अर्थ है व्यापार।

मालिक को जाग जाना चाहिए

वास्तव में किसान मालिक है और व्यापारी सेवक है। सेवक कभी स्वामी से बढ़कर नहीं होता। जब हिन्दुस्तान में मालिक गरीब है, तो सेवक भी गरीब ही होना चाहिए। लेकिन

बात उल्टी हो गयी है। जो मालिक है वह गरीब बन गया है, और सेवक श्रीमान् बन गया है। और वह श्रीमान् कैसे बना? मालिक को लूटकर। आज अगर उन सेवकों को कोई उनका धर्म सिखाये, तो वे नहीं सीखेंगे। इसलिए अब मालिक को ही जाग जाना चाहिए। मालिक के जागने का मतलब यह है कि वह अपना आधार बाजार पर न रखे। मेरा तो विश्वास है कि अगर गाँववाले अपनी जरूरत की चीजें गाँव में ही बना लें, तो हर गाँव बादशाह बन सकता है। यहाँ किसान क्या खरीदने के लिए आता है? उसको भाजी चाहिए, तो क्या वह अपने खेत में भाजी पैदा नहीं कर सकता? आँगन में भी भाजी हो सकती है। कोई कपड़ा खरीदने आते हैं। गाँव में कपड़ा क्यों नहीं बन सकता? अगर कपड़ा नहीं बन सकता, तो कल आप रोटी भी बाजार से ही खरीदने लगेंगे। अगर इस तरह बनी-बनायी चीजें खरीदते रहेंगे, तो लूट से आपको कौन बचायेगा?

भगवान् की आदर्श व्यवस्था

"हमें गांधीजी ने चरखा चलाने को कहा। और यही कहते-कहते वह बूढ़ा मर गया। उनका वह सन्देश अब भी सुनने लायक है। लोग कहते हैं अब तो स्वराज्य हो गया, अब कातने की क्या जरूरत है? सरकार का काम है कि वह कपड़ा हमें दे। मैं कहता हूँ कि आप कल कहेंगे, स्वराज्य आया है तो अब हम हल नहीं चलायेंगे, सरकार हमें अनाज दे। लेकिन स्वराज्य का यह मतलब नहीं है कि हम सारे काम छोड़ दें। दिल्ली के लोग बड़े हैं और बुद्धिमान् हैं, इसमें शक नहीं है। लेकिन उनसे भी परमेश्वर अधिक बड़ा और बुद्धिमान् है। वह किस तरह हमारा पालन करता है, इसे देखिये। उसने हमको हाथ दिये, पाँच

दिये, नाक दी, कान दिये और बुद्धि दी। और कहा कि अपने हाथों से काम करो, तुम्हारा पेट भरेगा। उसने थोड़ी-थोड़ी बुद्धि हरएक को दी। अगर वैसा वह नहीं करता और बुद्धि का सारा खजाना वैकुण्ठ में ही रखता, तो हमारा पालन वह कैसे कर सकता था? उस दशा में भगवान् को चैन से नींद भी न आती। लेकिन कहते हैं कि भगवान् तो शेषशायी है और योगनिद्रा में सो रहा है। वह इसलिए सो सकता है कि उसने सबको अक्ल दी और काम करने की जिम्मेवारी उठाने का ढंग बताया। हम हाथों से काम करते हैं। फिर भी अगर काम नहीं बनता है, तो परमेश्वर से प्रार्थना करते हैं और वह हमें मदद देता है। हम अगर हाथों से काम नहीं करते, तो भगवान् भी मदद नहीं करता। इसी तरह हम अगर हाथों से काम नहीं करेंगे, तो दिल्ली की सरकार भी हमको कुछ मदद नहीं दे सकेगी।

लोग एक-दूसरे को क्यों नहीं पढ़ाते ?

"आप कहते हैं कि अब स्वराज्य आ गया है, तो हमारे लिए कुछ कर्तव्य ही बाकी नहीं है। सब सरकार करेगी। हरएक काम के लिए अगर हम सरकार पर अवलंबित रहेंगे, तो वह स्वराज्य होगा या गुलामी? अपने गाँव में हम शांति नहीं रखेंगे और हर समय पुलिस को मदद के लिए बुलायेंगे, तो वह होनेवाली बात नहीं है। विशेष मौके पर हम पुलिस की मदद माँगें, तो सरकार दे सकती है। बाकी हमारी रोज की शांति, हमारा अनाज, हमारा कपड़ा, हमारी सफाई, हमारा शिक्षण, सारा गाँव में ही करना चाहिए।

"लोग कहते हैं कि सरकार हर गाँव में स्कूल खोले। लेकिन सरकार के पास इतना पैसा नहीं है। अधिक कर देने के लिए

आप तैयार नहीं हैं। मैं कहता हूँ कि आप एक-दूसरे को क्यों नहीं सिखाते? जो थोड़ा-बहुत पढ़ा हुआ है, वह अगर रोज एक घंटा दूसरे को पढ़ायेगा, तो सारा गाँव शिक्षित हो सकता है। मान लीजिये कि हजार जनसंख्या के गाँव में दस लोग पढ़े हुए हैं। वे अगर हर साल दस लोगों को पढ़ा देंगे, तो एक साल में सौ लोग पढ़े-लिखे बन जायँगे और इस तरह दस साल में सारा गाँव पढ़ा-लिखा बन जायगा। यह इतनी आसान बात है। यही बात दूसरे कामों के बारे में भी है।

उद्धरेत् आत्मना आत्मानम्

"हमारे सब काम हमें खुद करने चाहिए। भगवान् ने गीता में कहा है: "उद्धरेदात्मनात्मानम्।" खुद का उद्धार खुद को ही करना चाहिए। दूसरों पर भरोसा रखकर मत बैठिये। गाँव का राज गाँववालों को स्थापित करना है। जो स्वराज्य दिल्ली में या आदिलाबाद में है, वह आपको काम नहीं देगा। आपको वही स्वराज्य काम देगा, जो आपके गाँव में बनेगा। यही देखिये न। बाहर से मनुष्य के शरीर को वैद्य तब तक ही मदद दे सकता है, जब तक शरीर में ताकत बची हुई होती है। अगर शरीर की ताकत खतम हो जाती है, तो वैद्य कुछ नहीं कर सकता। इसलिए हमारा काम यह है कि शरीर का आरोग्य हम अच्छा रखें। उसके लिए हमें गांधीजी ने बताया है कि कुदरती इलाज पर आधार रखो। सूर्य-प्रकाश, पानी, मिट्टी आदि से रोग अच्छे करना सीख लेना चाहिए। आजकल तो लोग कहते हैं, हर गाँव में एक दवाखाना हो। अभी तक वैसा नहीं हुआ है, यह परमेश्वर की कृपा है। अगर ये लोग हर गाँव में दवाखाना खोल सके, तो गाँव का पैसा दवाखाने के निमित्त से बाहर जायगा और रोग

दसगुने बढ़ेंगे। जरा कहीं कुछ हुआ कि हम दवाखाने में दौड़ेंगे। और यह समझ लो कि एक दफा वैद्य अगर घर मे आता है, तो फिर वह घर नहीं छोड़ता। कुछ लोग कहते हैं, फलाना डॉक्टर हमारा फेमीली डॉक्टर है। यानी घर मे जैसे माता-पिता होते हैं, वैसे ही वह डॉक्टर भी घर का एक हिस्सा बन गया। इस तरह हर बात मे अगर हम गुलाम बनते जायेंगे, तो फिर स्वराज्य काहे का? सरकार का काम आपको बाहर से कपड़ा ला देने का नहीं है। वह आपको कातना-बुनना आदि सिखा देगी। वैसे तो सरकार आपकी खिदमत करने के लिए ही है। आप जैसा चाहेंगे, वैसा वह करेगी। लेकिन आपको उसके लिए पैसा खर्च करने की तैयारी रखनी होगी। आप यदि कहेंगे कि हम खेती नहीं करेंगे, हमें बाहर से गल्ला दो, तो सरकार अमेरिका से गल्ला ला देगी। उसके लिए आपको पैसा देना पड़ेगा। सरकार तो सेवक है। सेवक से कैसी सेवा लेनी चाहिए, यह मैं आपको समझा रहा हूँ। आप उससे कहें कि हमें तालीम दो, हम स्वावलंबी बनना चाहते हैं।

परमेश्वर झूठे पर प्रसन्न नहीं होता

"आपका बाजार देखकर मुझे जो बातें सूझीं, वे मैंने आपके सामने रखीं। जब तक हिन्दुस्तान के बाजारों में झूठ चलता है, तब तक हिन्दुस्तान सुखी नहीं होगा। हम परमेश्वर का भजन करते हैं। लेकिन परमेश्वर झूठे पर कभी प्रसन्न नहीं होता। एक दफा दुर्योधन गांधारी के पास आशीर्वाद मॉंगने गया था। युद्ध का अवसर था। दुर्योधन ने गांधारी से कहा कि मुझे विजय मिले, ऐसा आशीर्वाद दो। गांधारी तो दुर्योधन की माता थी और उसका दुर्योधन पर बहुत प्यार था। लेकिन उसने अपने

पुत्र से कहा : 'जहाँ धर्म होगा वहीं विजय होगी, यह मेरा आशीर्वाद है।' परमेश्वर का हम पर बहुत प्यार है। वह हमें कहता है कि सचाई से बरतो, तो तुम्हें मेरा आशीर्वाद है। अगर हम झूठे होंगे, तो परमेश्वर हमें उसके लिए सजा देगा। उसमें भी उसकी दया ही होती है। परमेश्वर की दया अजीब होती है। पापी को शुद्ध करने के लिए वह सजा देता है, तो उसमें उसकी दया ही होती है। इसलिए अगर हम परमेश्वर का आशीर्वाद चाहते हैं और जीवन सुखी हो, ऐसी इच्छा रखते हैं, तो सत्य को नहीं छोड़ना चाहिए।"

...

सारा गाँव एक परिवार : १५ :

निरड़गोंदी
२०-३-'५१

सवेरे, कूच से पहले, रात के जो लोग आये थे, उनसे विनोबा ने बातचीत की। सवेरे की प्रार्थना में वे लोग शरीक हुए ही थे। फिर रास्ते में भी काफी दूर तक साथ चले। भक्ति-भाव से बिदा लेकर लौटे। साथ में लालटेन रहती ही है। सहज नीचे निगाह गयी, तो तेजी से एक साँप बायीं ओर निकल गया। पहले विनोबा के पाँव के नीचे से, फिर मेरे, फिर पीछे गाड़ी आ रही थी, उस गाड़ी के बैलों के पाँवों के नीचे से। "जेथे जातो तेथे तू माझा सांगाती" तुकाराम का वह गीत याद आये बिना न रहा। विनोबा तो इतने तेज चलते हैं कि उन्हें आगे जाकर जब हम लोगों ने बताया, तब मालूम हुआ।

दोपहर में विनोबा गाँव के हर घर में हो आये। प्रवेश करते ही दायीं ओर तेलघानी थी। उसे देखा। चमार, बढ़ई, लुहार, सबसे मिले। और लोगों से भी मिले। कई चरखे भी गाँव में चलते हैं। फिर एक कार्यकर्ता के घर उन्हें थोड़ी देर के लिए बैठना पड़ा। घर की मालकिन ने तिलक किया। माला पहनायी। विनोबा ने देखा कि मालकिन मिल की धोती पहने हुए है। कहा : "अब मैं तुम्हारे घर आ गया, तो मिल का कपड़ा जाना चाहिए।" पति तो खादी पहनते ही थे। दोनों ने प्रतिज्ञा की।

चार बजे करीब पचीस स्त्रियाँ जुलूस बनाकर गाजे-बाजे के

साथ गीत गाती हुई डेरे पर पहुँच गयीं और कातने बैठ गयीं। विनोबा भी कातने बैठ गये। इस सारी यात्रा में इस किस्म का यह पहला ही दर्शन था। हम सबको ही बड़ा सुख मिला। विनोबा ने सुख की भावना को और साथ ही अपने भय को शाम की प्रार्थना में प्रकट किया :

"आपका यह गाँव बिल्कुल ही छोटा है। लेकिन इस गाँव में मैंने जो काम देखा है, उससे मुझे बहुत ही आनन्द हुआ है। क्यों आनन्द हुआ, यह आप लोगों को नहीं मालूम हो सकता। बात ऐसी है कि आपके गाँव में मैंने बीस-पचीस चरखे चलते हुए देखे। इस तरह चरखों का काम मैंने अपनी इस यात्रा में अभी तक कहीं नहीं देखा। और यह दृश्य देखकर मेरे हृदय को बड़ा सन्तोष हुआ। लेकिन आप लोगों को मैं जाग्रत कर देना चाहता हूँ। यहाँ अभी तक बाहर के व्यापारियों का ज्यादा प्रवेश नहीं हुआ है। लेकिन आगे चलकर स्थिति ऐसी ही नहीं रहेगी। बाहर के व्यापारी यहाँ भी आयेंगे। मुझे आजकल व्यापारियों का सबसे अधिक डर लगता है। वास्तव में व्यापारी तो होने चाहिए ग्रामों के सेवक। लेकिन इन दिनों ऐसा हो गया है कि व्यापारियों में दया-धर्म नहीं-सा रहा है। इसलिए वे जब कहीं जाते हैं, तो गाँवों की सेवा के बजाय अपने स्वार्थ को ही देखते हैं। आज एक भाई मुझसे मिलने आये थे। बातचीत में उन्होंने बताया कि यह जिला, जो अभी बहुत पिछड़ा हुआ है, पैनगगा पर पुल बनने के बाद आगे बढ़ जायगा, क्योंकि फिर बरार के साथ बहुत व्यापार चलेगा। लेकिन फिर यह जिला आगे बढ़ेगा, इसका मतलब इतना ही है कि यहाँ व्यापारियों का जमघट बन जायगा। मतलब उसका इतना ही है कि फिर आपके गाँव में जो अच्छा दृश्य हमने आज देखा, वह देखने को नहीं मिलेगा।

बाहर के व्यापारी आपके गाँव मे आयेंगे, कपड़ों के अच्छे-अच्छे नमूने आपको बतायेंगे, आप लोभ में पडकर उनसे कपडा खरीदने लग जायेंगे और गुलाम बन जायँगे। आज भी मैं देखता हूँ कि आपके गाँव मे सूत कतता है। कुछ लोग हाथ का कपडा पहनते हैं। लेकिन मिल का कपडा भी बहुत चलता है। जब वे व्यापारी आयेंगे, तब सारा-का सारा कपडा बाहर से आने लग जायगा। इसलिए मैं आज ही आपको सावधान करना चाहता हूँ कि आप शपथ लीजिये कि बाहर का कपडा नहीं लेंगे। अगर आप ऐसा नहीं करेंगे, तो आपके देखते-देखते सारा गाँव दरिद्र हो जायगा।

"मैं अभी हैदराबाद मे होनेवाले सर्वोदय-सम्मेलन के लिए जा रहा हूँ। सर्वोदय का मतलब है, सबकी उन्नति। सर्वोदय मे यह बात नहीं आती कि किसी एक का भला हो और दूसरे का नहीं। इसलिए सर्वोदय का चिंतन करनेवाले मुझ जैसो के सामने यह बड़ी समस्या है कि शहरों के साथ देहातों का भला कैसे होगा। हम चाहते है कि भला शहरों का भी हो और गाँवों का भी। एक जमाने मे हिन्दुस्तान के सारे गाँव बहुत सुखी थे। परदेश से आनेवाले लोग इसकी गवाही देते थे। बीच मे जब अंग्रेज यहाँ आये, तो उन्होंने भी देखा कि यहाँ हर गाँव में कपडा बनता है और दूसरे भी बहुत से उद्योग चलते हैं। उन्होंने लिखा है कि गाँव-गाँव मे दूध बहुत मिलता है। लेकिन आज हम देखते हैं कि लोगों को मुश्किल से दूध मिलता है। दूध नहीं, तरकारी नहीं, कपड़ा नहीं और आज तो गल्ला भी बाहर से आता है। यह हालत दो सौ साल के अन्दर हुई है।

स्वराज्य का अर्थ

"अब स्वराज्य आया है। हम चाहते हैं कि हमारे गाँव फिर से सुखी हों। लेकिन स्वराज्य आने पर भी अगर हम लोग देहात

का रक्षण नहीं कर पायेंगे, देहात के उद्योग कायम नहीं रख सकेंगे, तो हमारे गाँव सुखी नहीं हो सकेंगे। स्वराज्य का अर्थ ही यह है कि आप लोगों को अपने गाँव का कपड़ा पहनना चाहिए। अपने ही गाँव की चीजें खरीदनी चाहिए। बाहर का पक्का माल आपको नहीं खरीदना चाहिए। बल्कि अपने गाँव में खुद कच्चे से पक्का माल बनाना चाहिए। आपके गाँव में पक्का माल बनेगा, तो शहरवाले खरीदेंगे और आपको लाभ होगा। लेकिन अगर आप कच्चा माल पैदा करके पक्का बाहर से खरीदेंगे, तो आपको नुकसान होगा। अगर आप अपने ही गाँव में कच्चे माल से पक्का बनाते हैं, तो मजदूरी आपको मिलती है। पक्का नहीं बनाते, तो मजदूरी बाहर जाती है। एक जमाना था, जब हिन्दुस्तान-वाले अपने लिए तो कपड़ा बनाते ही थे, लेकिन बाहर भी भेजते थे। उस जमाने में लोगों को चरखा चलाने के लिए वक्त मिलता था और आज नहीं मिलेगा, ऐसी बात तो नहीं है। आज लोगों की संख्या बढ़ गयी है, जमीन कम हुई है। इसलिए समय तो खूब मिलता है। अभी एक जगह एक गाँव का सर्वे किया गया, तो मालूम हुआ कि वहाँ के लोगों को सालभर में छह माह काम नहीं मिलता। मैं देखता हूँ कि आपके गाँव में बगीचे भी नहीं हैं। यानी आपके यहाँ की खेती बारिश के पानी पर ही होती है। इसलिए वह काम अधिक नहीं रहता। समय काफी बचता है। उसका क्या किया जाय? अगर कोई व्यक्ति ऐसा हो, जो आपके गाँव की सेवा करे, तो आपके गाँव की उन्नति होगी। वह व्यक्ति आपके गाँव का ही होना चाहिए। मुझे तो ऐसे गाँव में रहने की इच्छा हो जाती है। यहाँ रहा, तो पहले मैं कातने-वालों को धुनना सिखाऊँगा। आज तो कातनेवाले अपनी पूनी नहीं बनाते। दूसरे लोग उनके लिए पूनी बनाते हैं। अपने घर में

कपास पैदा हो और दूसरा मनुष्य उसकी पूनी बनाये तब मैं कातूँ, ऐसा क्यों होना चाहिए ? अगर हम अपने ही घर में पूनी बनाते हैं, तो पूनी अच्छी बनती है और सूत भी अच्छा कतता है। दिल्ली में हमने यह प्रयोग करके देखा। पंजाब की निर्वासित स्त्रियों को कातने के साथ हमने पूनी बनाना भी सिखा दिया। परिणाम यह हुआ कि जो स्त्रियाँ पहले आठ-दस नंबर का सूत कातती थीं, वे सोलह-बीस नंबर तक का सूत कातने लगीं। यानी पहले बिलकुल मोटा सूत कातती थीं और अब महीन कातने लगी हैं। बारीक सूत से धोतियाँ और साड़ियाँ बन सकती हैं। आप देख रहे हैं कि एक बहन यहाँ बैठी पूनी बना रही है। पाँच-पाँच, छह-छह साल के बच्चे भी ऐसी पूनी बना लेते हैं। इस तरह अगर घर में ही पूनी बनने लग जायगी, तो सूत अच्छा कतेगा।

"फिर आपके यहाँ पहाड़ भी है। अगर मैं यहाँ रहा तो पहाड़ से पत्थर ला-लाकर उन पत्थरों से मकान बना लूँगा। इस तरह अपने परिश्रम से पक्के मकान बन जायँगे। फिर सफाई का काम शुरू कर दूँगा, ताकि गाँव में कोई बीमारी न होने पाये। आप लोग बाहर खुले में पाखाना जाते हैं, लेकिन उस पर मिट्टी नहीं डालते। इससे खाद की बरबादी होती है। हमारा हिसाब है कि फी आदमी मैले की कीमत चार रुपया होती है। मतलब यह कि पाँच सौ जनसंख्या के आपके गाँव में दो हजार रुपयों की आमदनी बढ़ सकती है। इस तरह गाँव-गाँव उत्पादन भी बढ़ेगा और स्वच्छता भी बढ़ेगी। अब यह सारा काम अगर यहाँ कोई मनुष्य रहेगा, तो हो सकेगा। लेकिन बाहर से मनुष्य कहाँ-से लायें ? इसलिए यहीं पर कोई कार्यकर्ता मिलना चाहिए।

"एक बात और। आपके गाँव में प्रेमभाव बढ़ना चाहिए।

जैसा एक परिवार में प्रेम होता है, वैसा सारे गाँव में होना चाहिए। सारा गाँव एक परिवार ही हो जाना चाहिए।

"तो आप लोग नित्य गाँव में उद्योग बढ़ाइये और प्रेमभाव बनाये रखिये।"

लोगों ने कहा : "आपने जो बातें कहीं, उसके अनुसार काम करने के लिए यहाँ किसी कार्यकर्ता को भेजिये।"

विनोबा : "कार्यकर्ता बाहर से नहीं आ सकता। आपके गाँव का ही कोई सेवक तैयार होना चाहिए। कोई तैयार है?"

जवाब : "हमारे गाँव में राजेश्वर रेड्डी हैं। वे करें, तो हो सकता है।"

राजेश्वर रेड्डी वे ही सज्जन थे, जिनके घर आज खादी की प्रतिज्ञा ली गयी थी। अगरचे वे अक्सर निर्मल में रहते हैं, उन्होंने यहाँ के काम के लिए कार्यकर्ता का प्रबन्ध करने की जिम्मेदारी ली। इससे लोगों को सन्तोष हुआ। इस तरह जगह-जगह सर्वोदय का बीजारोपण करते हुए तथा जहाँ सम्भव हो, वहाँ कार्यकर्ताओं को काम में लगाते हुए, विनोबा तेजी से आगे बढ़ते जा रहे हैं। ...

वह बड़ी भारी लड़ाई होगी : १६ :

गोपाल पेठ
२१-३-'५१

सुदर्शन-चक्रधारी के दर्शन

पाँच मील का पहाड़ी का रास्ता और कुल चौदह मील की यात्रा ! लेकिन जो दृश्य गोपाल पेठ में देखा, उससे किसीकी भी थकान उतर सकती थी। पिछले गाँव में हमने नदी का उद्गम देखा। यहाँ उसका पूर्ण वैभव। विनोबा ने तो कहा : "आप लोगों में मैंने आज मानो सुदर्शन-चक्रधारी भगवान् के ही दर्शन किये।" ऐसा ही अद्भुत दृश्य था वह ! "आज की सभा जो देखते, वे अगर मन में शंका रखते हैं कि इन दिनों चरखा कैसे चलेगा, तो यह दृश्य देखकर समझ जाते।" आज इन लोगों ने बता दिया कि देहात के लोग खेती तो कर ही सकते हैं, परंतु चरखा चलाकर कपड़े के बारे में भी आसानी से स्वावलंबी हो सकते हैं।

एक मील दूर, गाँव के करीब-करीब सभी लोग विनोबाजी को लेने आये। माताएँ हाथ में आरती लिये खड़ी थीं। सारा गाँव साफ-सुथरा, लिपा-पुता, अल्पनाओं से सजा हुआ, तोरन-पताकाओं से लदा हुआ ! गाँव के बाहर, लेकिन गाँव से बिल-कुल सटकर, जामुन, आम और पलाश के पल्लवों की कुटियों में हमारा डेरा था। कहीं भी कील या लोहे का उपयोग नहीं था। एक बड़ा लतामंडप, एक कुटिया विनोबाजी के लिए, एक साथियों के लिए, एक रसोई-घर, स्नान-घर, शौचालय। सारा

केवल पल्लवाच्छादित, अति सुशोभनीय, अति प्रसन्न और अति नयनमनोहर !

हम लोगों को आये थोड़ी ही देर हुई होगी। भोजनादि के बाद लोग अपने-अपने काम मे लगे। इतने ही में ऐसा मालूम हुआ, मानो पश्चिम की ओर से कोई बड़ी यात्रा हमारी ओर चली आ रही हो। आगे-आगे देहाती वाद्य, पीछे बालक-बालिकाओं की सुव्यवस्थित कतार, उनके पीछे सिर पर चरखा लिये सौ से अधिक स्त्रियाँ, सबके पीछे पुरुष-वर्ग। पड़ोस के चिंचोली गाँव से ये लोग चले आ रहे थे। बड़ी तरतीब से सब लोग मंडप में बैठे। सामने पाँच-पाँच एक के पीछे एक, पचीस की कतार में, अपना-अपना चरखा लिये वे बहनें उस पल्लवाच्छादित मंडप में कातने बैठ गयीं। गोद मे पूनियों का गुच्छ, माथे का पल्ला कंधे पर पड़ा हुआ, कपाल और नासिका पर शुद्ध पसीने की बूँदें ! दाहिने हाथ से आठ कमल-दल घूम रहा है और बाँयें से सूत-गंगा बहकर निकल रही है—सूत अटूट और समान, सहज और सुंदर ! निःशब्द ! तरत पर से दिखाई दे रहा था कि सब चक्र एक साथ घूम रहे हैं। बीच-बीच मे तकुए पर लपेटने के लिए हाथ रुकता है, चक्र का वह एक क्षण के लिए रुकना और पुनः घूमना, करीब दो-ढाई घंटे से अधिक चलता रहा। हर चरखे के पास विनोबाजी हो आये। उन चरखों मे केवल तकुआ ही लोहे का था। विनोबाजी ने कहा : "देखो, इतने चरखे चल रहे हैं, किन्तु आवाज बिल्कुल नहीं। और सूत का टूटना और फँसना भी नहीं। जहाँ टूटा कि वह जुड़ना ही चाहिए। और सभी कत्तिनों के बदन पर अपने सूत का कपड़ा।"

हर बहन के पास से सूक्ष्म निरीक्षण करते हुए विनोबाजी

शक्तिमान् शब्द

: १७ :

निर्मल
२२-३-'५१

पृथ्वी पर तारिकाएँ

गोपाल पेठ से निर्मल आते हुए बीच में चिचोली गाँव पड़ता है, जिसका जिक्र अभी आ चुका है। कल इस गाँव के बहुत-से लोग गोपाल पेठ आये थे। सबेरे पाँच बजे प्रार्थना करके विनोबाजी गोपाल पेठ से चले। सबेरे की प्रार्थना में अक्सर हम साथी लोग ही रहते हैं और दस-पाँच स्थानीय कार्यकर्ता। लेकिन गोपाल पेठ के सभी नर-नारी सबेरे की प्रार्थना में भी उपस्थित थे। रात को उन्होंने विनोबा को सुन्दर भजन भी सुनाये थे। उन सबसे विदा लेकर आध घण्टे में चिचोली पहुँचे। सूरज निकलने में अभी देर थी। रात का समय था। सामने देखा, तो साठ छोटी-बड़ी बहनें हाथ में निरांजन लिये संत के स्वागत के लिए चली आ रही हैं। उनके पीछे गाँववाले भक्तिभाव से जय-जयकार करते हुए चल रहे हैं। अरुणोदय के पहले इस प्रेमोदय को देखकर हम सब गद्गद हो गये। ज्ञानदेव ने कहा है : "दीपीं दीप मेळी पाजळूं हो जगीं"—आओ, हम अपनी ज्ञानज्योत जलायें और फिर संसारभर में घर-घर ज्ञानदीप प्रज्वलित करें। उन्होंने अपनी दृष्टि से सर्वोदय का ही चित्र चित्रित किया था। विनोबा दो मिनट के लिए रुक गये : "आपके प्रेम के लिए मैं आभारी हूँ। आप सबसे यही कहना है कि आप जैसे भक्तिभाव से ईश्वर का भजन करते हैं, वैसे ही ईश्वर का

काम भी करते रहें और आपस में सब लोग खूब प्रेमपूर्वक रहें। मैं यह तकली कात रहा हूँ, यह प्रेम का धागा है। आइये और आप सब इस प्रेम-सूत्र में बँध जाइये। मैं आप सबको प्रणाम करता हूँ। अब मुझे अगले मुकाम जाने दीजिये।" दीपक क्या थे, मानो तारिकाएँ ही पृथ्वी पर उतर आयी थीं। पाँव उस जगह कुछ और रुकना चाहते थे। परन्तु विनोबा की गाड़ी तो बिना रुके तेजी से आगे बढ़ रही थी। सवेरे दिन निकलते-निकलते हम निर्मल पहुँच गये।

दोहरे आक्रमण का खतरा

निर्मल यानी शहर की बस्ती। प्रार्थना-सभा में इर्द-गिर्द के देहात के लोग तो थे ही, शहर के प्रतिष्ठित व्यापारी तथा अन्य शिक्षित लोग भी थे। ध्यानपूर्वक एक-एक शब्द उन्होंने सुना।

विनोबा ने कहा : "हम सर्वोदय के यात्री अपनी पैदल मुसाफिरी में आपके गाँव में आ पहुँचे हैं। सर्वोदय एक महान् शब्द है और उसका अर्थ भी महान् है। समाज के सामने जब कोई महान् शब्द होता है, तो उससे समाज को शक्ति मिलती है। शब्द की महिमा अगाध होती है। जिस समाज के सामने कोई बड़ा शब्द नहीं होता, वह समाज शक्तिहीन और श्रद्धाहीन बनता है। शब्द की शक्ति का यह अनुभव हर जमात को और हर देश को हुआ है। हमारे देश में चालीस साल तक स्वराज्य शब्द चला और उसका पराक्रम तथा महिमा सबने देख ली। १९०७ में स्वराज्य शब्द दादाभाई नौरोजी ने हमें दिया और १९४७ में उसका दर्शन हमें मिला। उसका चमत्कार आखिर तो हैदराबादवालों ने भी देख लिया। हैदराबादवाले बहुत दिनों से सोच रहे थे कि बाकी के सारे देश में स्वराज्य का

गुजर रहे थे। पहले कुछ देर उनके साथ खुद कात चुके थे, पुनः कातने बैठ गये। मदालसा बहन पूनी बनाने बैठ गयीं। कई स्त्रियों ने आकर पूनी बनाना भी देखा। उनकी बड़ी भारी समस्या हल होती दिखाई दी, क्योंकि धुनिये की पूनी से उन्हें कातना पड़ता था। मदालसा बहन की सूझ और कल्पना के कारण उसी वक्त गाँव के लुहार और बढ़ई से कुछ सलाई-पटरियाँ भी तैयार करवाकर मँगवायी गयीं। कातनेवालों ने इस काम का दर्शन और शिक्षण भी पाया।

कातनेवालों की जाति नहीं होती

पर केवल स्त्रियों को कातते देखकर विनोबा खामोश कैसे रह सकते थे। उनमें भी रँगरेज की स्त्रियाँ नहीं कातती थीं। उनमें कातने का निषेध है। "जो कोई कपड़ा पहनता है, उसे कातना चाहिए। बढ़ई या लुहार की तरह कातनेवालों की जाति नहीं होती। हर घर में जैसे रसोई, वैसे ही हर घर में कताई होनी चाहिए। और स्त्री-पुरुष, सबको कातना चाहिए। स्त्रियाँ कपड़ा पहनती हैं, तो क्या पुरुष कपड़ों के बिना रहते हैं? बच्चों को, बूढ़ों को, स्त्री-पुरुष, सबको कातना चाहिए। गांधीजी रोज कातते थे। जिस दिन प्रार्थना में उनका खून हुआ, उस दिन भी, प्रार्थना में आने से पहले, वे कात चुके थे।" उन्होंने सारी जिन्दगी कातकर हमारे सामने एक आदर्श रख दिया है।

भावी लड़ाई का संकेत और स्वरूप

जो बात कपड़े के लिए कही, वही दूसरे उद्योगों के बारे में भी कही : "तेल गाँव में, गुड़ गाँव में, आटा घर-घर, इस तरह काम होगा, तो राज्य आपका होगा। इसीको ग्रामराज्य कहते हैं। और जब आपस में कोई लड़ेगा नहीं, सब एक-दूसरे से प्यार

करने लगेंगे, सब एक-दूसरे का साथ देंगे और सहकार करेंगे, तो यही ग्रामराज्य रामराज्य में परिणत हो जायगा। ग्रामराज्य और रामराज्य अभी कायम करना बाकी है। उसके लिए लड़ना होगा। वह बड़ी भारी लड़ाई होगी। आज तक की लड़ाई जैसे अहिंसक थी, वैसे यह भी होगी तो अहिंसक ही। पर वह टलने-वाली नहीं। आप भाई-बहन उसके सिपाही होंगे। औजार होंगे ये चरखे और हल। बम और तोपों की हमें जरूरत नहीं। जरूरत होगी काम करने के औजारों की।" ...

उदय हुआ, हमारा क्या हाल होगा। उनको भी अनुभव हुआ कि जो शक्ति देशभर में पैदा हुई थी, उसका स्पर्श यहाँ भी होना था। यह संस्थान उससे अलग नहीं रह सकता था।

सर्वोदय का शब्द

"इस तरह स्वराज्य शब्द का कार्य हिन्दुस्तान में हो गया और उसके साथ-साथ महात्मा गांधीजी का निर्वाण हुआ। उनके जाने के पीछे सारा देश हक्का-बक्का हो गया। कुछ रोज तक तो सूझता ही नहीं था कि इस देश का क्या होनेवाला है। लेकिन परमेश्वर की कृपा से सब लोग स्थिर हो गये और अब ऐसा समय आ गया है कि देश की प्रगति का अगला कदम रखा जाय। अगला कदम तो तब रखा जा सकता है, जब कि जहाँ जाना है, उसकी दिशा तय हुई हो। तो गांधीजी के जाने के बाद चंद लोग इकट्ठा हुए और उन्होंने अपने देश को सर्वोदय शब्द दे दिया। यह शब्द भी गांधीजी का ही रचा हुआ था। और उसकी जड़ हिन्दुस्तान की संस्कृति में प्राचीन काल से जमी हुई है। जब स्वराज्य नहीं हुआ था, तब तो वही एक शब्द हमारे सामने था और परदेशियों का यहाँ का राज्य हटाने में ही हम सब लगे हुए थे। हमारे खेत में तरह-तरह के निकम्मे झाड़ उगे हुए थे। उनको काटने का जो काम हुआ, उसीका नाम स्वराज्य था। अब स्वराज्य-प्राप्ति के बाद उस खेत में परिश्रम करना है और बीज बोना है। लेकिन मैं देख रहा हूँ कि लोगों का यही खयाल है कि अब तो फसल काटने का समय है। यह बिलकुल गलत खयाल है। तो वह जो खेती में परिश्रम करके फसल लाना है, उसीका नाम है सर्वोदय। सर्वोदय शब्द अगर हमारे सामने न आता, तो हम सारे ध्येयशून्य बन जाते।

स्वराज्य के बाद का नैतिक कार्य

"सर्वोदय शब्द ने हमारे सामने स्पष्ट उद्देश्य रख दिया। वह उद्देश्य ऐसा है, जिसमें सब लोगों का समावेश हो सकता है। मेरे अभिप्राय में स्वराज्य-प्राप्ति के बाद हिन्दुस्तान में जो तरह-तरह के राजकीय पक्ष पैदा हुए हैं, उनकी कोई जरूरत नहीं थी। स्वराज्य के बाद हिन्दुस्तान में जो असंख्य समस्याएँ पैदा हुईं, उनमें से अनेक नैतिक थीं। यानी जनता की नीति गिरी हुई थी, उसका हमें तरह-तरह से अनुभव आया। और आज भी हम यही देखते हैं कि जहाँ जाओ, वहाँ नीतिहीनता और शील-भ्रष्टता का दर्शन होता है। इसके लिए मैं जनता को दोष नहीं देता हूँ। क्योंकि मैं जानता हूँ कि सारी की सारी जनता 'नीति-भ्रष्ट नहीं हो सकती। लेकिन वैसा नीतिभ्रष्टता का दर्शन अगर सर्वत्र होता है, तो यही समझना चाहिए कि उसका कारण परिस्थिति में मौजूद है। जिम्मेदारी चाहे परिस्थिति की हो, चाहे जनता की हो, लेकिन जो है उसको हमें दुरुस्त करना है। स्वराज्य-प्राप्ति के बाद सब लोगों का शील कायम रखना, आपस में प्रेमभाव कायम रखना आदि बिलकुल बुनियादी काम करना जरूरी हो गया था और है। इस हालत में किसी भी तरह के राजकीय उद्देश्य के लिए मौका ही नहीं रहता है। जब समाज का नैतिक स्तर और आपस का प्रेमभाव बढ़ेगा, तब राजकीय उद्देश्यों के लिए मौका आयेगा। इसलिए जिन-जिन लोगों से जब बात करने का मौका मिलता है, तब उन्हें मैं यही कहता हूँ कि भाइयो, यह राजकीय लेबल अब अपने सिर पर मत चिपकाओ और केवल इन्सान बन जाओ।

आज का परदेशावलम्बी स्वराज्य किस काम का ?

"देखिये, मैं तो पैदल घूम रहा हूँ। कभी मुझे छोटे-छोटे गाँवों मे जाना होता है, तो कभी शहर देखने को मिलते है। तो मैं देखता हूँ कि उधर गाँवो की परिस्थिति क्या है और इधर शहरों की परिस्थिति क्या है। देहात मे एक तरह का दुख है, तो शहरों मे दूसरी तरह का। देहात में देखता हूँ कि लोगो को कपड़े पहनने के लिए नही है और शहर मे देखता हूँ कि लोग शराबी बन रहे हैं। वस्त्रो का न होना एक बड़ा भारी दुख है, तो शराबी होना कोई सुख की बात नहीं है। तरह-तरह के व्यसन शहरो में बढ रहे हैं। स्वराज्य के पहले स्वदेशी-विदेशी का जो फर्क हम करते थे, वह भी अब भूल गये हैं। जो भी अच्छी चीज देखते हैं, खरीद लेते हैं। स्वराज्य के बाद हमारे शहरों की अगर यह हालत हो जाय कि सारे बाजार परदेशी वस्तुओं से भर जायँ, तो वह स्वराज्य किस काम का? और मै आपको विश्वास दिलाता हूँ कि आप परदेशी वस्तु खरीदते रहिये, आपके स्वराज्य पर कभी आक्रमण नहीं होगा। आपका स्वराज्य कायम रहेगा, क्योंकि जब तक उनका माल यहाँ खपता है, तब तक दूसरे देशो को क्या फिक्र पडी है कि आपका देश कब्जे में रखकर सारा जिम्मा उठाये। और इन दिनो किसी देश को अपने कब्जे मे रखना कठिन काम हो गया है। इसलिए दुनिया के बड़े-बड़े देश यह नहीं सोचते कि दूसरे देशो पर अपनी राज-कीय सत्ता कायम करें। अगर व्यापारी सत्ता हासिल है, तो राजकीय सत्ता हासिल करने मे कोई लाभ नहीं है। मतलब यह हुआ कि फिर हमारे स्वराज्य का कोई अर्थ ही नहीं रहेगा, अगर हमारे बाजार परदेशी वस्तुओं से भरे रहें। यह है हमारे शहरो का हाल।

"उधर देहात का हाल यह है कि उन लोगों के पास कोई धंधे नहीं हैं। उनके जो छोटे-छोटे धन्धे थे, वे शहरवालों ने छीन लिये। यहीं देखो, हम जहाँ बैठे हैं, वह एक धान कूटने की मिल है। अगर धान कूटने का धन्धा देहात में चला, तो लोगों को काम मिलेगा और वह भी शहर में गया, तो देहातवाले बेकार हो जायँगे।

"तो उधर परदेशी वस्तुओं से शहर के बाजार भर रहे हैं। उनके विरोध में शहरियों का पराक्रम कुछ नहीं चलता है। उनका सारा पराक्रम देहात के धन्धे डुबाने में है।

देहात के धन्धे रिजर्व रहें

"होना यह चाहिए कि देहात के धन्धों को देहात में रखना चाहिए और परदेश से जो माल आ रहा है, उसके विरोध में शहरों में धन्धे खड़े होने चाहिए। आज की हालत यह है कि परदेश के लोग हमारे शहरों को लूटते जा रहे हैं और शहरवाले हमारे देहात को लूटते जा रहे हैं। अगर इससे उल्टा बना यानी परदेश के धंधे के विरोध में शहरवाले खड़े हो गये और देहात के धंधों को उन्होंने बचा लिया, तो देहात और शहर, दोनों का सहयोग होगा और यह देश शक्तिशाली बनेगा। हम अपने कुछ जंगलों को जैसे रिजर्व रखते हैं, वैसे देहात के लिए कुछ धंधे रिजर्व रखने चाहिए। इस तरह देहात के धंधों को हमने सुरक्षित नहीं रखा, तो देहात उजड़ जायँगे और आखिर देहाती लोग शहरों पर टूट पड़ेंगे। तो फिर शहरों की क्या हालत होगी, यह आप ही सोचिये। तो स्वार्थबुद्धि से भी आपको देहात की रक्षा करनी चाहिए।

लडाई अटल है !

"तो हम लोगों की अक्ल अब इस बात मे लगनी चाहिए कि देहात और शहर, दोनो का सहयोग कैसे हो और दोनों मिलकर परदेशी माल के विरोध मे कैसे शक्ति पैदा करें। यह नहीं हो रहा है। मुझे देहातवालो को कहना पडता है कि भाई, तुम्हारे और शहरियो के बीच लड़ाई होनेवाली है। मैं उस लडाई को नहीं चाहता। लेकिन अगर शहरियों का रवैया नहीं बदला, तो यह लडाई अटल है, यह मैं देख रहा हूँ और वही मुझे कहना पडता है।

सर्वोदय का ध्येय

"मैं उस लडाई को नहीं चाहता, इसलिए सर्वोदय के प्रचार के लिए आपको समझा रहा हूँ। और मैं कहता हूँ कि इस वक्त इस शब्द मे जो शक्ति है, उसका आप चिंतन करेंगे, तो वह आपको महसूस होगी। सर्वोदय शब्द हमे यह समझा रहा है कि देश मे सब जगह शक्तिसचय हो जाना चाहिए। देश मे एक घर भी अशक्त नहीं रहना चाहिए। अगर इस तरह हम नहीं सोचते हैं और वर्गों के झगडो की बात निकालते हैं या कोई खास लोगो के हित की ही बात सोचते हैं, तो हिन्दुस्तान सुख मे नहीं रहेगा। सरकारी कानूनों मे जो भी लूपहोल (छिद्र) मिलते हैं, उनका लाभ उठाने का व्यापारी सोचते हैं। इस तरह व्यापारी और सरकार, दोनो के बीच अक्ल की लडाई चलेगी और इन दोनो की लडाई के बीच देहात के लोग मारे जायँगे। जरूरत इस बात की है कि व्यापारियों की ताकत देहात के हित मे लगे, सरकार की ताकत देहात के हित में लगे, और शहरियों की भी ताकत देहात के हित मे लगे। और देहाती लोग, शहर

के लोग, व्यापारी और सरकार, चारों मिलकर परदेशी वस्तुओं का और विचारों का जो आक्रमण हो रहा है, उसके विरोध में खड़े हो जायें।

"तो स्वराज्य के बाद सर्वोदय का क्या काम है, यह मैंने थोड़े में आपको समझाया। हमारे देश में चार शक्तियाँ काम कर रही हैं। एक है सरकार की, दूसरी है व्यापारियों की, तीसरी है शहरियों की और चौथी है देहातियों की। इन सब शक्तियों का योग साधना सर्वोदय का काम है। अब आप ही सोचिये कि जब सर्वोदय में इतना अर्थ भरा है, तो इसको छोड़कर और किस शब्द का आपको जरूरत है? और किन राजकीय पक्षों की आपको आवश्यकता है? सर्वोदय कोई राजकीय पक्ष नहीं है। लेकिन सारे राजकीय पक्षों को पेट में निगलने के लिए वह पैदा हुआ है। दूसरी भाषा में सबका हृदय एक बनाना, सबकी भावना एक बनाना, और सबकी शक्तियों का समवाय सिद्ध करना सर्वोदय का लक्ष्य है।

"भाइयो, मैं आशा करता हूँ कि यहाँ का हरएक जवान और प्रौढ़ इस शब्द से स्फूर्ति पायेगा और इसके लिए जीवन भर कोशिश करेगा। इस शब्द से जो स्फूर्ति मिलती है, वह रामनाम जैसी शक्ति है। और राम वही है, जो सबके हृदय में रम रहा है। उसीका भजन अब हम सब मिलकर करेंगे।"

प्रार्थना के बाद काफी दिलचस्प चर्चाएँ हुईं। रियासत में अंग्रेजी के बढ़ते हुए प्रभाव से कुछ लोग घबड़ाये-से नजर आये। एक कार्यकर्ता ने कहा "यह १५ साल तक अंग्रेजी को कायम रखा, इसलिए दिन व दिन उसकी प्रतिष्ठा बढ़ रही है। उल्टा ही हो रहा है। मदरसे में अंग्रेजी, अदालतों में अंग्रेजी। जो अंग्रेजी न जाने, वह गँवार। स्वराज्य में तो ऐसा नहीं सोचा

था।" विनोबा ने मुस्कराकर कहा : "अरे भाई, मोटर जाती है, तो पीछे कुछ धूल छोड़ जाती है। अंग्रेज गये, पर अंग्रेजी अभी बाकी है। उसे १५ साल तक बाकी नहीं रखना है। उसके पहले ही उसे खतम करना है। जिन लोगों को हिन्दी नहीं आती और जो हिन्दी सीख भी नहीं सकते, ऐसे वृद्धों को सेवा से निवृत्ति भी मिल जायगी।"

प्रश्नकर्ता : "लेकिन कचहरियों में अब तक उर्दू थी। अब अंग्रेजी क्यों?"

विनोबा : "बड़ोदा में तो पहले गुजराती थी। अब स्वराज्य आया, तो प्रगति हुई। गुजराती की जगह अंग्रेजी आयी।"

एक भाई : "हमारा खयाल है, अभी कुछ दिन तो उर्दू रहनी चाहिए।"

विनोबा : "लेकिन बड़ोदा में भी तो गुजराती रखी जा सकती थी। वहाँ गुजराती रखने में क्या हर्ज था? यहाँ तो उर्दू के खिलाफ कुछ वातावरण भी था, पर बड़ोदा में तो वैसा भी नहीं था। लेकिन वहाँ आखिर गुजराती नहीं रह सकी। वैसे मैं न तो अंग्रेजी रखने के पक्ष में हूँ, न उर्दू को मिटाने के पक्ष में हूँ। परंतु बात ऐसी है कि आम के पेड़ लगाये गये, उनमें फल आने लगे, पर बंदरों से तकलीफ भी होने लगी। कवेलू टूटने लगे। तो वह भी सहन करना होगा।"

प्रश्नकर्ता : "लेकिन हम कवेलू के बदले टीन भी तो लगा सकते हैं।" सभी लोग खिलखिला उठे।

प्रश्नकर्ता : "हमारा दुर्भाग्य तो यह है कि कांग्रेस के सर्क्युलर भी अब अंग्रेजी में आने लगे हैं, जो पहले उर्दू या तेलुगु में आते थे। हम तो उन्हें पढ़ भी नहीं सकते।"

विनोबा : "वे सर्क्युलर आवें, तब उन्हें कचरे की टोकरी में फेंक दीजिये ।"

प्रश्नकर्ता . "लेकिन कार्य-समिति की सभाओं में भी ये लोग अंग्रेजी में बोलते हैं, वहाँ उनका मुँह कैसे बंद करें ?"

विनोबा ने गंभीरता को विनोद में परिवर्तित करते हुए कहा : "ऐसा है कि आप लोगों को स्वराज्य सबके आखिर में मिला, इसलिए आराम भी सबके आखिर में मिलेगा ।"

प्रश्नकर्ता : "लेकिन वकीलों को आज बड़ी तकलीफ हो रही है ।"

विनोबा . "अच्छा है लोगों को तकलीफ कम होगी ।" लेकिन फिर हैदराबाद की उर्दू के बारे में कहा "यहाँ उर्दू के लिए काफी अच्छा क्षेत्र था । पर इन लोगों ने ऐसी भाषा बना दी कि दिल्लीवाले भी न समझ सकें । अगर वे आसान उर्दू बनाते, तो हिन्दुस्तान के सामने एक मिसाल पेश करते । लेकिन जिनके हाथ में उर्दू को शक्ल देने का काम था, उन्होंने उसमें अरबी के शब्दों की भरमार कर दी । फारसी का सहारा लेते, तो भी हर्ज नहीं था ।"

प्रश्नकर्ता "लेकिन आज तो बहुत तकलीफ हो रही है ।"

विनोबा : "ऐसा है कि आज हमारे यहाँ नृसिंहावतार चल रहा है । उधर कूर्म, वराह, सब पशु के अवतार । इधर रामकृष्ण मनुष्यावतार । पर बीच में नृसिंहावतार हुआ । वैसे ही उधर गुलामी गयी, पर इधर पूर्ण स्वराज्य का उदय नहीं हुआ है । परन्तु प्रह्लाद नृसिंहावतार से डरता नहीं । हर राज्यक्रान्ति के बाद ऐसी समस्याएँ रहती ही हैं । यहाँ ऐसी कोई समस्या नहीं निर्माण हुई, जो दूसरे देशों में न हुई हो । हमारे यहाँ शरणार्थियों की समस्या जरूर ऐसी हुई, जिसकी कोई मिसाल नहीं है ।"

हैदराबादवालों के लिए विनोबा का एक और सुझाव था। हैदराबाद में तेलुगु, कन्नड़, मराठी, हिन्दी, उर्दू, संस्कृत, सभी भाषाएँ चलती हैं। मराठी-हिन्दी-संस्कृत तो नागरी में लिखी जाती ही हैं। विनोबा ने सुझाया कि तेलुगु और कन्नड तथा उर्दू भी नागरी में लिखी जायें। "मुझे मालूम है कि लिपियों की भिन्नता के कारण भाषा सीखने में कितनी तकलीफ होती है। यूरोप में सभी भाषाएँ रोमन लिपि में लिखी जाती हैं, इसलिए पन्द्रह-पंद्रह रोज में वहाँ की भाषाएँ सीखी जा सकती हैं।"

"लेकिन फिर एक ही उच्चारण के इन अलग-अलग वर्णों का क्या होगा? नुक्तों को कैसे दिखायेंगे? जोय, ज्वाद, जे का फर्क कैसे बतायेंगे?"

विनोबा : "तुर्किस्तान ने जहाँ अरबी खतम करके रोमन शुरू की, वहाँ क्या उन्होंने हर नुक्ते को कायम रखा है? उन्होंने उच्चारण के अनुसार वर्णों की व्यवस्था की है। ज़ाकिर में 'ज़' है, मज़बूत में 'ज़' है। दोनों के उच्चारण में क्या फर्क है? और आखिर ये नुक्ते भी जानेवाले हैं। 'राम गरीब निवास' में 'ग' का नुक्ता कहाँ बाकी रहा है?"

प्रश्न : "नुक्तों के अभाव में शब्द अशुद्ध नहीं बन जायेंगे?"

विनोबा : "हाँ, पंडित लोग अशुद्ध कहेंगे, परन्तु भाषा जो लोग बोलते हैं वह है या पंडित बोलते हैं वह? मराठी में मदरसे को 'शाळा' कहते हैं। किसान 'शालेत गेला' कहता है, तो मराठी जाननेवाले हँसते हैं। वास्तव में शाला ही शुद्ध है। 'पुष्कल' शुद्ध है, परंतु मराठीवाले 'पुष्कळ' को शुद्ध समझते हैं, 'पुष्कल' पर हँसते हैं। यह आपका गाँव निर्मल है या निर्मळ? कौन तय करे?"

"लेकिन भाषा-शुद्धि के बावजूद शिक्षित और अशिक्षित का भेद तो रहेगा ही।"

"वह भेद ही तो हमें मिटाना है। और फिर 'प्रयोगशरणाः वैयाकरणाः।' इसलिए हम तो प्रयोग के शरण हैं। लोग जो प्रयोग करेंगे, उसे हम मानेंगे। इनका कहना है कि हम व्याकरण बनायेंगे और लोगों पर लादेंगे। यह कैसे हो सकता है? और आखिर संस्कृत के लिए तो नागरी सीखनी ही होती है। तो तीनों भाषाएँ नागरी में ही लिखिये।"

प्रश्न : "लेकिन तेलुगु का छोटा 'ए' और 'ओ' को कैसे लिखेंगे?"

विनोबा : "उसके लिए हमने आसान युक्ति निकाली है। 'ए' की मात्रा को उलटा कर देने से छोटा 'ए', और छोटा 'ओ' हो जाते हैं। इससे नया टाइप नहीं बनाना पड़ेगा।"

प्रश्न : "नाग का उच्चारण तेलुगुवाले 'नागा' करते हैं। लिखते तो 'नाग' ही हैं। नागरी में इसे कैसे लिखियेगा?"

विनोबा : "स्पेलिंग में हम फर्क नहीं करेंगे। 'नाग' को अकारांत ही लिखेंगे। अंग्रेजी में भी यही चलता है—जैसे क्रेयॉन..."

इस संबंध में और भी बहुत दिलचस्प चर्चा हुई। आम जनता में प्रचलित पुस्तकों को नागरी में छपवाने की कल्पना भी विनोबा ने दी थी। नागरी के सूत्र में देश को बाँधने का यह एक दर्शन है। हैदराबाद के लिए ही नहीं, यह सुझाव देश की सभी भाषाओं के लिए उपयुक्त है।

चर्चा चल ही रही थी कि एक हरिजन भाई उठ खड़ा हुआ और हाथ जोड़कर कुछ कहने लगा। लोगों ने चाहा कि वह बीच में न बोले। परंतु विनोबा ने लोगों को रोका। उस भाई को अपने पास बुलाकर गादी पर बैठा लिया और पूछा : "कहो, क्या कहना है?" उससे तेलुगु में ही पूछा।

"महाराज, अन्न नहीं, कपड़ा नहीं।"

विनोबा ने फिर पूछा : "तुम्हें अकेले को या सबको?"

"कुछ को है, बहुतों को नहीं है।"

"तुम क्या काम करते हो ?"

मालूम हुआ कि वह अपना चमड़े का काम छोड़कर मजदूरी का काम करता है।

"तुम्हारे लिए आज के भाषण में हमने काफी कहा है। तुम्हें अपना उद्योग करना चाहिए और इन लोगों को चाहिए कि तुम्हारे उद्योग की उन्नति में तुम्हारी मदद करें।"

लेकिन इस चर्चा मे से अनाज के रूप मे मजदूरी देने की चर्चा भी निकल पड़ी। कुछ काश्तकार भी उपस्थित थे। सरकारी नौकर भी थे। काश्तकारों को यह कल्पना पसन्द आयी। इसीमें से लगान अनाज मे वसूल करने की चर्चा भी निकली। इस पर *सरकारी नुमाइन्दों ने कहा :* "इससे सरकार की तकलीफ बढ़ेगी।"

विनोबा ने कहा : "अगर जनता को आराम मिलता हो, तो सरकार की थोडी तकलीफ बढ़ने की चिन्ता नहीं करनी चाहिए। अगर लोग अंग्रेजो के जमाने मे जैसे दुखी थे, वैसे ही आज स्वराज मे दुखी रहेंगे, तो ऐसे स्वराज के लिए लड़ने की उन्हें प्रेरणा और इच्छा क्यों होगी ?"

एक भाई ने कहा : "लेकिन गल्ला अगर दो-तीन साल तक जमा रखा जाय, तो खराब होने की सम्भावना रहती है।"

विनोबा : "दो साल तक अनाज रह सकता है, रहना चाहिए। लेकिन हमारे देश मे अनाज इतना है भी कहाँ कि दो साल तक उसे सँभाल रखने की चिन्ता करनी पडे।"

शिक्षक लोगों ने अनाज मे वेतन का कुछ हिस्सा लेने की कल्पना सुझायी। एक भाई ने कहा : "अनाज में मजदूरी देने की बात न सिर्फ देहातों के लिए, बल्कि शहरों के लिए भी होनी चाहिए। हम सबकी रक्षा इसीमें है।"

एक घंटे का विद्यालय

: १८ :

सोन
२३-३-'५१

इस नौ मील के छोटे से, और बड़े सवेरे के, यानी अरुणोदय के पूर्व की चाँदनी के प्रवास में लोगों ने अनेक जगह विनोबा का स्वागत किया। नीरांजन, कुमकुम और भजन आदि की तो मानो बाढ़-सी आ गयी थी।

गोदावरी के किनारे सोन क्षेत्र-स्थान है। अभी तक के प्रवास में हम ब्राह्मणों से शायद ही मिले। रेड्डी लोग ही विशेष रूप से दिखाई दिये। यहाँ पण्डितों से भेट हुई।

'सोन' पुराना सुवर्णपुर है। कहते हैं, परशुराम ने यहाँ तपश्चर्या की थी। बड़ा यज्ञ किया था, और ब्राह्मणों को सुवर्ण-दान दिया था—इतना कि सोने की नदी बहा दी थी। फिर भी ब्राह्मणों को संतोष नहीं हुआ। क्रोधवश परशुराम ने शाप दिया और सुवर्ण की नदी में पानी हो गया। वह नदी आगे जाकर गोदावरी में विलीन होती है।

ब्राह्मणों ने विनोबाजी से कहा : "महाराज, यह पुराना तीर्थ है। हम लोग पहले यहाँ सुखी थे, परंतु आज हमारी स्थिति खराब है। कई लोग गाँव छोड़कर बाहर चले गये हैं। कुछ पढ़ाई के लिए, कुछ कमाई के लिए। यहाँ एक अच्छा विद्यालय खोलने की बड़ी आवश्यकता है।" वे लोग कुछ निराश-से दीखते थे और अपनी समस्याओं के हल के लिए विनोबा का मार्ग-दर्शन चाहते थे।

इस बीच, यहाँ भी इर्द-गिर्द के गाँवों से बहनें अपने चरखे लेकर आ गयी थीं। विनोबा ने देखा कि वे चरखा तो चला रही हैं, पर उनके शरीर पर मिल के कपड़े हैं। अपने प्रार्थना-प्रवचन में उन्होंने इन दोनों बातों की चर्चा की :

प्रेम का अर्थ

"आप लोग कातती हैं, यह अच्छा है। परंतु पुरुषों को भी कातना चाहिए। आप सबको गाँव की बनी चीजें खरीदनी चाहिए। गाँव का लुहार अगर गाँव के बढ़ई की चीजें न खरीदकर बाहर की खरीदेगा, गाँव का बुनकर अगर गाँव के चमार की चीजें नहीं खरीदेगा और चमार बुनकर की बनी चीजें नहीं खरीदेगा, तो गाँव की लक्ष्मी गाँव के बाहर चली जायगी। गाँववालों को परस्पर प्रेम से रहना चाहिए। प्रेम का अर्थ ही यह है कि सब एक-दूसरे की रक्षा करें। गाँव के चमार का जूता हम नहीं खरीदेंगे, बाहर का लेंगे, तो गाँव का चमार मर जायगा। इस तरह हमारे चमार को हम रक्षण नहीं देते हैं, तो कहा जायगा कि हम उस पर प्रेम नहीं करते। यही बात सब उद्योगों के लिए लागू होती है। लेकिन लोग कहते हैं कि गाँवों की चीजें महँगी होती हैं। सच पूछा जाय, तो महँगे-सस्ते का हिसाब लगाने का यह तरीका ही गलत है।

वर्ण-धर्म का अर्थ

"वर्ण-धर्म का अर्थ तो यह है कि हरएक अपनी जीविका के लिए अपने पूर्वजों का धंधा करे। लेकिन अगर हम गाँव के कारीगरों को आश्रय न दें, तो यह कैसे हो सकता है ? आप ब्राह्मण हैं। वर्ण-धर्म के अभिमानी हैं। लेकिन आपके शरीर

पर मिल के कपड़े हैं, और पाँवों में कारखाने के बने जूते हैं। तो फिर आप लोग वर्ण-धर्म की प्रतिष्ठा कैसे बढ़ायेंगे ?

"गाँव में शिक्षित ब्राह्मणों की कमी नहीं है। तब फिर यहाँ स्कूल क्यों नहीं है ? किसीको ऐसी उम्मीद नहीं करनी चाहिए कि सरकार ही हर जगह स्कूल खोलेगी। सरकार बड़ी मुश्किल में है। लेकिन यह काम तो आप लोग अपने ही प्रयत्न से कर सकते हैं। इस गाँव की जनसंख्या दो हजार से भी कम है। सुबह-शाम दोनों बार एक-एक घंटा ही यदि कुछ वर्ग चलाये जायँ, तो पाँच-सात साल में सारा गाँव लिखना-पढ़ना सीख जायगा। और यह सारा विद्यादान निःशुल्क होना चाहिए।"

प्रार्थना के बाद ये ब्राह्मण विनोबा के पास आये और उन्होंने इस काम को उठाने की अपनी तैयारी जाहिर की। तीन शिक्षकों ने अपने नाम लिखाये। स्कूल का नाम 'सर्वोदय विद्यालय' रखना तय हुआ। सम्पूर्ण गाँव की शिक्षा का १० वर्ष का कार्यक्रम बनाया गया—२५ विद्यार्थियों के लिए एक शिक्षक, ६ माह की एकाग्र तालीम, साल में विद्यार्थियों के दो दल तैयार होंगे। एक शिक्षक साल में ५० विद्यार्थी पढ़ायेगा, इस तरह चार शिक्षक २०० विद्यार्थी पढ़ायेंगे। प्रौढ़ों के लिए रात्रि-शाला की व्यवस्था रहेगी। यह था कार्यक्रम का खाका। इस तरह सोन को राष्ट्र के सामने एक आदर्श पेश करने का मौका मिला। उन्होंने विनोबा से काम की विस्तृत चर्चा की और वचन दिया कि काम दो-चार दिन में ही शुरू हो जायगा। ...

नारायण के दर्शन : १६ :

बालसोंडा
२४ ३ '५१

सोन से चलने लगे, तो जिले के डी० एस० पी० ने खबर भेजी कि आसपास के इलाके मे कम्युनिस्टो का डर है, इसलिए यदि विनोबाजी स्वीकार करें, तो वह साथ मे अगले मुकाम तक सशस्त्र सिपाहियों की एक छोटी टोली भेजना चाहेगे। विनोबा ने उत्तर दिया कि "यदि पुलिस साथ रहना ही चाहती है, तो सामान्य शिष्टाचार के अनुसार उसे साधारण वेप मे ही रहना चाहिए। मेरे साथ सशस्त्र सिपाहियों के चलने का सवाल तो उठता ही नहीं।"

सोन से ६ मील दूर मुकफल में गॉव के मुखिया ने विनोबाजी से गॉव के लोगों से दो शब्द कहने का आग्रह किया। मुकाम से पहले, रास्ते के गॉवों मे विनोबा को बोलने के लिए राजी करना कठिन काम है। लेकिन लोगो की श्रद्धा और उनका अनुशासन देखकर वे प्रभावित हुए और अपने इस साधारण नियम का भग करते हुए उन्होंने कहा "आपसे मिलकर मुझे आनन्द हुआ है। जो लोग आरमुर तक आ सकते हैं, वे वहॉ आयेंगे ही। यहॉ मै आपको एक खुशी की खबर सुनाता हूँ। सोन के निवासियों ने अपने गॉव की सारी शिक्षा की व्यवस्था खुद ही करना तय किया है। वे लोग बाहर की मदद नहीं लेंगे। यह एक ऐसा उदाहरण है, जिसका अनुकरण किया जा सकता है। आखिर हमारी सारी समस्याओं का हल शिक्षा ही तो है।"

उनके प्रेम का आभार मानकर विनोबाजी आगे बढ़े।

वालकोंडा में हमारा निवास पुरुषों और स्त्रियों से पूरा भर गया था। उनकी संख्या १००० से कम नहीं थी। श्री हनुमंत रेड्डी ने विनोबाजी का स्वागत किया और लोगों को दिनभर का कार्यक्रम बताया। लोगों से पाँच बजे आने को कहा गया था, लेकिन वे तो दिनभर आते ही रहे, खासकर स्त्रियाँ, जो इर्द-गिर्द के गाँवों से आयी थीं। तीन बजे तक तो सारी जगह स्त्रियों से बिलकुल खचाखच भर गयी। इन सब लोगों को पाँच बजे तक ठहराना उचित नहीं लगता था। इसलिए विनोबा जाकर उनके बीच में खड़े हो गये और बोलना शुरू किया :

आजादी का अर्थ

"अभी दो-तीन साल के पहले आपका यह हैदराबाद राज्य बड़ा दुःखी था। रजाकार लोगों का जुल्म चल रहा था और आप सब लोग भयभीत थे। कोई कुछ कर नहीं सकता था। लेकिन रजाकारों की सल्तनत खतम हुई और आप लोग अब आजादी से इकट्ठे हुए हैं। नहीं तो ऐसी सभाओं में कौन आ सकता था!

"लेकिन आजादी का यह मतलब नहीं है कि आप बिना काम किये सुखी हो जायँगे। हम लोग हाथ पर हाथ धरे बैठे रहेंगे, तो हम आजाद हो गये हैं, इसलिए मुफ्त खाने या पहनने को थोड़े ही मिलनेवाला है?

"आज मैंने देखा, यहाँ पर बहुत-सी स्त्रियाँ कात रही थीं। लेकिन वह देखकर मुझे आनन्द नहीं हुआ, क्योंकि कातनेवाली बहनों के बदन पर तो मिल का ही कपड़ा था। कातने से मजदूरी मिलती है, इसलिए वे कातती हैं। लेकिन अपने सूत की

कीमत अगर हम नहीं करेंगे, तो लोग क्यों करेंगे ? हमें अपने सूत का ही कपड़ा पहनना चाहिए ।

"लोग मानते हैं कि हमको सरकार अनाज दे, कपड़ा दे। लेकिन क्या सरकार के पास अनाज का और कपड़े का खजाना है ? हम सब अपनी सरकार के सिपाही हैं। अगर हम सिपाही काम नहीं करेंगे, तो हमारी सरकार भी बेकार हो जायगी। हम काम करेंगे, तभी सरकार भी मजबूत बनेगी।

"इसलिए आपको मेरी सूचना है कि आप सब मिलकर एक समिति बनाइये। उस समिति द्वारा गाँव का सारा कारोबार चलाइये । गाँव में झगड़ा हो, तो बाहर की अदालत में नहीं जाना चाहिए। गाँव में कोई न कोई सज्जन होते ही हैं। उनके सामने अपना झगड़ा रखकर उनका फैसला मानना चाहिए। सारे गाँव का हिसाब करके उसमें क्या बोना चाहिए, यह तय करना चाहिए। आपके गाँव में सब तरह की शक्ति है। अनाज आप तैयार करते हैं, तरकारी आप पैदा करते हैं, दूध-घी भी आपके यहाँ होता है। इतना होते हुए भी आप भिखारी हैं, क्योंकि ये चीजें आप खा नहीं सकते, उनको बेचना चाहते हैं। और बेचते क्यों हैं ? पैसे के लिए। और पैसा क्यों चाहिए ? बाहर से सारा पक्का माल खरीदने के लिए। अपना कच्चा माल आप बेचते हैं और पक्का माल मोल लेते हैं। इस तरह से आप लोग स्वराज्य का अनुभव नहीं कर सकेंगे।

"और एक बात आपसे कहनी है। हरएक गाँव में अलग-अलग पार्टियाँ होती हैं। उससे गाँव में झगड़े होते हैं। लेकिन सारा गाँव एक कुटुम्ब के जैसा होना चाहिए। कोई अगर आपसे पूछे कि क्या आप कांग्रेसवाले हैं या कम्युनिस्ट हैं या समाजवादी हैं, तो जवाब देना चाहिए कि हम अपने गाँव के हैं और

उस गाँव की सेवा, यही हमारा धर्म है। भगवान् श्रीकृष्ण के गोकुल मे सारा गोकुल एक कुटुम्ब वन गया था। उस तरह आपका गाँव गोकुल बनना चाहिए। इस तरह अपने गाँववालो पर प्रेम करना सीखो, तो सारा गाँव भगवान् का निवासस्थान बन जायगा।

सिर न झुकाओ

"आखिर मे एक वात। आप लोग नमस्कार करने के लिए आते हैं और पाँव पर सिर झुकाते हैं। आप लोगो को खड़े रह-कर ही नमस्कार करना चाहिए। हमको सीखना चाहिए कि हम किसीके आगे इस तरह अपना सिर नहीं झुकायेंगे। हमे अपना आदर और प्रेम प्रकट करना हो, तो दोनो हाथ जोड़कर नम्रता से सिर झुकाकर खड़े-खड़े ही नमस्कार करना चाहिए। पैर तक सिर नहीं झुकाना चाहिए।"

जिस मंदिर मे हम लोग ठहराये गये थे, उसीके अहाते मे सभा हुई थी। उसमे एक ही दरवाजा था और डर था कि निकलते समय बड़ी भीड़भाड़ होगी। विनोबा खुद वहाँ खड़े हो गये। विनोबा के हाथ से प्रसाद बाँटने की व्यवस्था की गयी थी। सैकड़ो व्यक्तियो ने प्रसाद पाया। वहाँ से जब विनोबा अपने कमरे में वापस आये, तब वोले "आज मैंने नारायण के १६५० रूपो के दर्शन किये।" विनोबा गणिती जो ठहरे-प्रसाद देते समय गिनती कर ली थी।

इस तरह हमने आदिलाबाद का प्रवास पूरा करके गोदावरी पार की और निजामाबाद जिले मे प्रवेश किया।

लालटेन जलाने से दिन नहीं उगता : २० :

आरमुर
२५-३-'५१

आरमुर और निजामाबाद हमारे रास्ते में नहीं थे, इसलिए हमारे यात्राक्रम में उनका समावेश नहीं हुआ था। लेकिन निजामाबाद के लोगों का आग्रह इतना प्रबल था कि विनोबा उसे अस्वीकार नहीं कर सके। इसलिए बालकोंडा से हम अपना रास्ता छोड़कर निजामाबाद की ओर चल पड़े। और फिर बीच में आरमुर में रुकना भी अनिवार्य हो गया। यहाँ चावल के छह और बीड़ी के बारह कारखाने हैं। आसपास के गाँवों के अधिकांश मजदूर इन कारखानों में खिंच आये हैं और खेती के लिए आवश्यक मजदूरों के अभाव का प्रश्न खड़ा हो गया है। शराबखोरी भी खूब चलती है। अपने प्रार्थना-प्रवचन में विनोबा ने इन सब बुराइयों का जिक्र करते हुए कहा :

"आप मेरा भाषण सुनने के लिए इतनी बड़ी तादाद में यहाँ आये हैं। आपकी उत्सुकता को मैं समझ गया हूँ। आप शांति से बैठे हैं, यह देखकर मुझे खुशी होती है।

स्वराज्य नहीं, परराज्य

"कुछ लोगों ने पूछा कि स्वराज्य आया है, फिर भी कोई खास फर्क हम नहीं देखते हैं। मुझे यह सुनकर आश्चर्य नहीं हुआ। देखिये, आपके इस निजाम के मुल्क में करीब सात-आठ सौ साल से दूसरों की सत्ता चली आ रही है। और अब दो साल से

आपकी खुद की सत्ता आयी, ऐसा कहते हैं। अब यह स्वतंत्रता आपको किस तरह हासिल हुई है। तो बोले, पुलिस एक्शन से। पहले के जमाने में भी इसी तरह राज्यों के बदल होते थे। एक राज्य जाता था, दूसरा आता था। लेकिन उससे प्रजा में कोई फर्क नहीं होता था। तो प्रजा में कोई फर्क हुए बगैर जो राज्य आता है, वह स्वराज्य हो ही नहीं सकता। वह परराज्य है, चाहे उसको चलानेवाले अपने लोग ही क्यों न हों।

दिन के लिए प्रकाश चाहिए

"जब यहाँ रजाकारों का जुल्म था, तब आप लोग भयभीत थे। तो क्या अब आप लोगों ने भय छोड़कर यह राज्य अपने हाथ में लिया है? लोगों का भय तो जैसा का वैसा ही है। आज भी पुलिस डंडा चलायेगी, तो लोग डरेंगे। परकीय सत्ता इसलिए होती है कि लोगों में भय होता है। अगर वह भय कायम है, तो स्वराज्य आया कैसे कह सकते हैं? परकीय सत्ता इसलिए होती है कि लोगों में आपस-आपस में एकता नहीं होती। अगर लोगों में आज भी एकता नहीं है, तो स्वराज्य आया कैसे कह सकते हैं? परकीय सत्ता इसलिए होती है कि लोग शराबी होते हैं, व्यसनी होते हैं, पराक्रमहीन होते हैं। अगर आज भी लोग शराबी हैं, व्यसनी हैं, और पराक्रमहीन हैं, तो स्वराज्य आया कैसे कह सकते हैं? लोगों में परकीय सत्ता इसलिए होती है कि लोग आलसी होते हैं। अगर आज भी लोग आलसी हैं, तो स्वराज्य आया कैसे कह सकते हैं? इसलिए मुझे आश्चर्य नहीं होता कि आप लोगों की स्थिति जैसी पहले थी, वैसी ही आज है। अगर मुझे कोई कहेगा कि कल रात थी और आज दिन हो गया है, फिर भी प्रकाश नहीं है, तो मैं कहूँगा कि दिन नहीं हुआ है,

बल्कि छोटी-सी लालटेन जल रही है। तो यही समझो कि पुलिस एक्शन के पहले रात थी। और आज भी रात है, लेकिन ज़रा-सी लालटेन लग गयी है। लेकिन लालटेन से दिन नहीं होता। दिन के लिए तो सूर्य का प्रकाश चाहिए, जो हर घर में पहुँचता है।

स्वराज्य का अर्थ

"आपके इस गाव मे १२ हजार लोग रहते हैं। लेकिन यहाँ आपस-आपस में सहकार्य से कौन-सा काम चल रहा है? क्या इस गॉव का रक्षण आप लोगो के बल से हो रहा है? क्या गॉव का शिक्षण आप लोग चलाते हैं? आप कहेंगे, हमारा रक्षण सरकार करती है और शिक्षण हमें सरकार देती है। इस तरह अगर गॉव का सारा काम हुकूमत ही करती है, तो फिर गॉव का स्वराज्य कहॉ रहा? यहाँ कपड़ा बाहर से आता है, तेल बाहर से आता है, तो गाँव मे आप क्या करते हैं? यहाँ बीड़ियाँ बनाकर आप बम्बई भेजते है और वहाँ से पैसा लाते हैं। उससे क्या हुआ? शायद पहले से आप अधिक बीड़ियाँ पीने लगे होंगे। स्वराज्य का मतलब तो यह होता है कि हरएक गॉव अपनी-अपनी बहुत सारी आवश्यकताओं को गॉव में ही पूरा कर ले। और इस तरह जो गॉव स्वावलम्बी होते हैं, वे एक-दूसरे की पूर्ति कर सके, इसलिए सरकार निमित्तमात्र होती है। सरकार का काम यह नहीं है कि गॉव को हर चीज बाहर से ला दे। सब गॉवों का सम्बन्ध बना रखने के लिए सरकार है। सरकार का काम हरएक गॉव को स्वावलम्बी बनने मे मदद देने का है। मेरी तो व्याख्या यह है कि जहाँ स्वराज्य होता है, वहाँ लोगों मे सद्गुण होते है, और जहाँ स्वराज्य नहीं होता, वहाँ दुर्गुण होते हैं। गोरी चमडीवाले लोग गये और काली चमडीवाले आये, इससे

स्वराज्य नहीं बनता। तो मुझे जब लोग कहते हैं कि स्वराज्य के बाद हमारी स्थिति सुधरी नहीं है, तो मैं पूछता हूँ कि क्या आपके दुर्गुण कम हुए हैं? अगर हमको यह अनुभव आता है कि पहले से हमारे दुर्गुण कम हुए हैं, तो स्वराज्य आया, ऐसा समझ सकते हैं। अगर वैसा अनुभव नहीं आता है और चार साल पहले जिन दुर्गुणों में हम थे, वे अब भी कायम हैं, तो स्वराज्य हमें नहीं मिला है, ऐसा समझना चाहिए। इसलिए मुझे आप लोगों को यही कहना है कि अभी स्वराज्य हासिल करना बाकी है, ऐसा समझकर आप जोरों के साथ काम में लग जाइये।

हर हिन्दुस्तानी की दो आँखें

"अब दूसरी बात जो आज मुझे सूझ रही है, वह मैं कहता हूँ। हमारी विधान-सभा ने हिन्दी को राष्ट्रभाषा के तौर पर स्वीकार किया है। इसलिए अब हरएक को राष्ट्रभाषा का उत्तम अभ्यास करना चाहिए। मैंने तो यह उपमा दी है कि जैसे मनुष्य को दो आँखें होती हैं, वैसे हरएक हिन्दुस्तानी को दो भाषाओं का ज्ञान होना चाहिए। एक अपनी मातृभाषा का और दूसरी राष्ट्रभाषा का। मेरा तरजुमा करने के लिए जो भाई यहाँ खड़े हैं, उन्होंने हिन्दी भाषा का अच्छा अभ्यास नहीं किया है। तो हो यह रहा है कि आपके लिए जो विचार मैं भेजता हूँ, उनमें से कुछ आपके पास पहुँचते हैं और कुछ बीच में खतम हो जाते हैं। यह आज का अनुभव ध्यान में लीजिये और जल्दी से जल्दी राष्ट्रभाषा का अध्ययन कर लीजिये।

बड़े राष्ट्र की जिम्मेदारी

"इन दिनों छोटे-छोटे राष्ट्र टिकते नहीं हैं। हिन्दुस्तान, जैसा बड़ा देश ही टिक सकता है। पुराने जमाने में छोटे-छोटे राष्ट्र टिकते

थे। लेकिन आज जमाना दूसरा आया है। आज बडे राष्ट्र ही टिक सक्ते हैं। और आगे तो हम ऐसा स्वप्न देखते हैं कि सारी दुनिया मिल करके एक ही राज्य बन जाय।

"तो यह सब ध्यान में लेकर हरएक नागरिक का कर्तव्य है कि भारत की कोई भी एक भाषा और अपनी मातृभाषा अच्छी तरह सीखे। सारा भारत एक माना है, तो यह जिम्मेदारी उठानी ही चाहिए।"

मुख्य प्रश्न—जीवन-परिवर्तन

कार्यकर्ताओं से बातचीत करते हुए विनोबा ने उन्हें कोई न कोई काम हाथ में लेने और ग्रामोद्योगों का संगठन करने का आदेश किया। उनमें से दस ने वचन दिया कि वे अब सिर्फ खादी का ही व्यवहार करेंगे। लेकिन उन्होंने कहा कि उनके पास जितना मिल-कपड़ा अभी है, उसके खतम होने तक उसका उपयोग करते रहने की छूट उन्हें मिलनी चाहिए।

विनोबा ने कहा . "सवाल यह नहीं है कि इसके बाद हम मिल का कपडा नहीं खरीदेंगे; मुख्य प्रश्न जीवन बदलने का है। हम एक नया जीवन शुरू करना चाहते है। जो लोग कहते हैं कि पास का मिल-कपडा खतम हो जाय, फिर हम खादी ही खरीदेंगे, वे यह कहाँ जानते हैं कि पहले मिल-कपडा खतम होगा, या वे खुद ही। मैं आप लोगो से अपना मिल का कपडा नष्ट करने के लिए नहीं कहता, लेकिन आप उसे उन लोगों को दे डालिये, जो अभी भी उससे चिपटे रहना चाहते हैं और खादी नहीं लेना चाहते। ग्रामोद्योगो का स्वीकार तो आप लोगों को तुरन्त कर डालना चाहिए।"

ग्रामोद्योगों की विचारधारा

विनोबा ने कार्यकर्ताओं को ग्रामोद्योगी साहित्य पढ़ने की सलाह दी : "समाजवादी, साम्यवादी, रा० स्व० से० संघ आदि सब लोगों की अपनी-अपनी विचारधारा है और वे लोग बड़े उत्साह से उसका अध्ययन करते हैं। कांग्रेसवालों की विचार-धारा क्या है, यह मेरी समझ में नहीं आता। मैं आपको बताता हूँ कि जो विचारधारा हमें आगे ले जायगी, वह ग्रामोद्योगों की ही हो सकती है। लेकिन हम लोग हैं कि न तो हमें मिल-कपड़ा खरीदते हुए कोई आगा-पीछा होता है, न गुड़ की जगह शक्कर खरीदते हुए। इस तरह हम आगे कैसे बढ़ सकते हैं? और कांग्रेस के पास अगर जनता को देने के लिए ऐसा कोई कार्यक्रम नहीं है, तो वह ज्यादा दिन टिक भी कैसे सकती है?"

पैसा सत्ता हथिया लेता है

"भारत में और खासकर हैदराबाद राज्य में आज जिस ढंग की लोकतन्त्र सरकार चल रही है, क्या वह ठीक है?"—इस प्रश्न का उत्तर देते हुए विनोबा ने कहा कि "लोगों को सज्जनों और दुर्जनों में भेद करना सीखना चाहिए। अभी लोग ऐसा नहीं करते। जो लोग सत्ता पर अधिकार करना चाहते हैं, वे पैसे की मदद से वैसा कर पाते हैं। इस तरह पैसा सत्ता हथिया लेता है, और योग्यता रह जाती है। सार्वजनिक सेवा के क्षेत्र में हमें जाति, सम्प्रदाय, नाता या दोस्ती आदि का विचार नहीं करना चाहिए। लोगों को यह सच सीखना है।"

साम्यवाद अपनी मौत मरेगा

साम्यवाद पर लोगों ने विनोबा की राय माँगी, तो उन्होंने कहा कि "अगर साम्यवादियों ने अपनी हिंसा की नीति का त्याग

नहीं किया, तो साम्यवाद अपनी मौत मर जायगा। इन साम्यवादियों की निरर्थक और निर्विवेक हिंसा के कारण साम्यवाद और गुण्डागिरी में फर्क करना कठिन हो गया है। लोग, और खुद साम्यवादी भी, इस हिंसा से बहुत जल्द तंग आ जायँगे। कोई भी दल हिंसा और गुण्डागिरी के कार्यक्रम से जनता का समर्थन जीतने की आशा नहीं कर सकता। हमारा देश गरीब है, तो यहाँ जनता का आशीर्वाद सिर्फ उनको ही मिलेगा, जो गरीबों की सेवा करेंगे। साम्यवादी अगर लोगों के पास कोई ऐसा कार्यक्रम लेकर पहुँचें, जिससे उनकी आर्थिक दशा सुधरे, तो उन्हें सेवा का कितना बडा क्षेत्र मिल सकता है।"

अर्थ-व्यवस्था में क्रांति होगी

आर्थिक कार्यक्रम की अपनी कल्पना और अधिक स्पष्ट करते हुए विनोबा ने कहा कि "जब तक खेती के साथ छोटे-छोटे गृह-उद्योगों का योग नहीं किया जाता, तब तक सिर्फ जमीन के उचित बँटवारे से हमारी समस्या हल होनेवाली नहीं है, यद्यपि राष्ट्रीय अर्थ योजना में उसका भी एक निश्चित महत्त्व है। हमारे यहाँ जमीन मुश्किल से फी आदमी ⅘ एकड है। इसलिए अधिक उत्पादन के लिए हमें दो काम करने होंगे। खेती की प्रति एकड उपज बढानी पडेगी, साथ ही लोगों को अपनी कच्ची उपज से खुद ही अपना आवश्यक माल तैयार करने के लिए राजी करना पडेगा। इन दोनों कामों पर ही हमें अपना सारा प्रयत्न केन्द्रित कर देना चाहिए। इतना हम करें, तो हमारे गाँवों की अर्थ-व्यवस्था में क्रांति हो जायगी और हमारी देहाती जनता पैसे के दासत्व से उबर जायगी। लेकिन बिचारे साम्यवादियों को लगता है कि यह तो विनोबा का कार्यक्रम है, हमारा नहीं, हम

इसे कैसे कर सकते हैं? मेरी समझ में नहीं आता कि इसमें उन्हें हिचक क्यों होनी चाहिए। वे इस कार्यक्रम को इसका गुण देखकर ले और उस पर अमल करें, या फिर कोई दूसरा उपाय बतायें।

"जब तक इस कार्यक्रम का अमल नहीं होता, तब तक साम्यवादियों की स्थिति में कोई सुधार नहीं हो सकता, सफलता से वे दूर ही रहेंगे। और जो भी दल इसे अपनायेगा, वह कामयाब होगा। यदि साम्यवादी अपनी मौजूदा हिंसा की नीति पर ही अड़े रहे, तो वे जनता की सहानुभूति बिलकुल खो देंगे। और तब उनके लिए चुनावों में कुछ भी सफलता हासिल करने की रही-सही उम्मीद भी खतम हो जायगी।"

वृद्धा का वचन

मेदपल्ली से कुछ खादी-कार्यकर्ता विनोबा से मिलने चले आये थे। उनके साथ एक साठ-वर्षीया वृद्धा भी आयी थी। उसका लड़का शिक्षक है। अपने इस लड़के के लिए वह पिछले दस साल से सूत कातती आयी है। विनोबा ने उसकी ओर देखा, उसकी दी हुई सूत-माला स्वीकार की, और हँसकर उससे तेलुगु में पूछा कि "वह खुद अपने पहनने के लिए सिर्फ खादी का ही व्यवहार क्या नहीं करती।" और उसने चट से वचन दिया "आज से मैं सिर्फ खादी ही पहनूँगी।" इस तरह अनजाने उसने आरमुर के उन कार्यकर्ताओं के लिए एक उदाहरण पेश कर दिया, जिन्होंने खादी की प्रतिज्ञा तो ली थी, लेकिन जिन्हें उस पर एकदम अमल करने में आगा पीछा होता था, क्योंकि अपने मिल के कपड़े का वे क्या करें, यह उनकी समझ में नहीं आता था।

भेद में अभेद का दर्शन करें : २१ :

निजामाबाद
२६-३-'५१

आज मंजिल सत्रह मील थी। पहुँचते-पहुँचते साढ़े दस बज गये। लोगों के उत्साह का कोई पार न था। स्वागत में जब कुछ अति ही हो गयी, तो विनोबा ने लोगों को आगाह किया कि "फूल-मालाएँ और दीप-मालाएँ आदि लेकर आना ठीक नहीं है। इन पर पैसा व्यर्थ नहीं खोना चाहिए। तुम लोगों में कोई खुद या उसके बन्धु फूल चुनें और उसकी माला गूँथें, तब ठीक है। लेकिन खरीदना नहीं चाहिए। उस हालत में सिर्फ सूत की ही माला देनी चाहिए।" सब तरफ सूचनाएँ भेजी गयी थीं। फिर भी डिचपल्ली, कलवरल, कामरेड्डी तथा दूसरी जगहों में हम जहाँ-जहाँ गये, फूल-मालाएँ बराबर नजर आती रहीं। किंतु हर जगह लोगों ने यह बताया कि विनोबा के आदेशानुसार उन्होंने खुद ही बनायी हैं, खरीदी नहीं गयी हैं।

निजामाबाद की प्रार्थना-सभा कुछ असाधारण बड़ी हुई, सभा में शांति भी खूब रही। प्रार्थना और प्रवचन के बाद विनोबा हर दिन लोगों से दो मिनट की शांति रखने के लिए कहते हैं। वे समझाते हैं कि इन दो मिनटों में सबको भगवान् का ध्यान करना चाहिए और विश्व से अपनी एकात्मता का अनुभव करना चाहिए। लोग उनका कहना मानते हैं। लेकिन कभी कोई बालक चीख उठता है, कभी कोई बूढ़ा खाँस

बैठता है। लेकिन निजामाबाद में अद्भुत और परिपूर्ण शांति रही।

खाई की ओर बढ़नेवाले शहर

प्रार्थना के बाद बहुत-से कार्यकर्ता विनोबा से चर्चा करने के लिए आये। उनमें से एक ने पूछा : "आप ग्रामोद्योगों की ही बात करते हैं। लेकिन क्या आपको ऐसा नहीं लगता कि ग्रामोद्योग नष्ट होते जा रहे हैं ?"

विनोबा : "यह बात सही है और इसका कारण यह है कि शहरी लोग अपनी सारी ताकत विदेशी माल का आयात बन्द करने के बजाय, गाँवों के उद्योग छीनने में लगाते हैं। वे खादी को आश्रय नहीं देते, कपड़े की नयी-नयी मिलें खोलते हैं। तेल-मिल चलाते हैं और घानी की हत्या करते हैं। शक्कर खाते हैं और गुड़-उद्योग का नाश करते हैं। और मजा यह है कि वे खुद भी विदेशी व्यापारियों द्वारा लूटे जा रहे हैं। दिन आ रहा है, जब उन्हें *संकट का मुकाबला करना होगा।* एक ओर विदेशी व्यापारियों द्वारा शोषित और दूसरी ओर गाँव के अकिंचन देहातियों द्वारा आक्रांत वे लोग खाई की ओर बढ़ते जा रहे हैं।"

ऐसी सरकार से क्या उम्मीद ?

प्रश्न : "क्या सरकार को यह सब रोकने की कोशिश नहीं करनी चाहिए ?"

विनोबा : "यह गुलामी का लक्षण है। किसी भी छोटे या बड़े काम में लोग सरकार का मुँह ताकते हैं। और वहाँ सरकार के पास न तो इन कामों के लिए समय है और न साधन। आप लोग खुद ही तो कहते हैं कि सरकार को हमेशा पाकिस्तान के आक्रमण का मुकाबला करने के लिए तैयार रहना चाहिए।

पाकिस्तान की सरकार भी ऐसा ही सोचती है। तो सारा पैसा सेना पर खर्च हो जाता है। सरकार की रिपोर्ट बताती है कि प्रौढ़-शिक्षा का काम मिट्टी के तेल की कमी की वजह से नहीं हो पा रहा है। ऐसी सरकार से, जिसके पास प्रौढ़-शिक्षा की योजना पर अमल करने के लिए भी साधन नहीं हैं, हम क्या उम्मीद कर सकते हैं ?

हैदराबाद और आबकारी

"अगर हम खुद अपनी मदद नहीं करते, तो सरकार भी हमारी मदद नहीं कर सकेगी। हैदराबाद सरकार की कुल तीस करोड़ की आय में से तेरह करोड़ आबकारी से आती है। इसलिए सरकार ताड़ी चलने देना चाहती है। कई कारणों से वह इसके लिए मजबूर है। दर-असल सरकार को ही हमारी मदद की सख्त जरूरत है। उसने हम लोगों के करने के लिए कितने ही काम रख छोड़े हैं। बम्बई और मद्रास के कांग्रेस कार्यकर्ताओं को क्या शराबबन्दी की सफलता में अपनी सरकारों की मदद नहीं करनी चाहिए ? लेकिन उनका तो कोई पता भी नहीं चलता।"

हैदराबाद कांग्रेस की उम्र

प्रश्न : "हैदराबाद कांग्रेस की उम्र तो बहुत छोटी है, सिर्फ १० साल की। अखिल भारतीय कांग्रेस ६० साल की है। तो क्या हम ऐसा नहीं मान सकते कि हमारी कमजोरियों का कारण अनुभव का अभाव है।"

विनोबा "आप बात ठीक समझे नहीं। कांग्रेस की साठ साल की उम्र में आप अपने दस और जोड़ दीजिये। इस तरह आपकी उम्र सत्तर साल की ठहरती है। आप अपनी जनक-

संस्था के अनुभव का लाभ क्यों नहीं उठाते ? सब जगह ऐसा ही होता है, यहाँ भी यही होना चाहिए। क्या भारत में स्त्री को मताधिकार की प्राप्ति के लिए कोई आन्दोलन करना पड़ा ? इंग्लैंड में उसके लिए आन्दोलन हुआ, तो भारतीय स्त्रियों के लिए वह अधिकार पाने का रास्ता बन गया।"

प्रश्न : "हो सकता है कि हमने कांग्रेस के अनुभव से कुछ न सीखा हो।"

विनोबा : "तब हानि आपकी ही है।"

पुलिस-राज

प्रश्न : "पुलिस एक्शन के बाद हमें स्वराज्य-जैसा नहीं मालूम होता, बल्कि पुलिस-राज का-सा अनुभव हो रहा है।"

विनोबा : "यह बिलकुल ठीक है, क्योंकि आप लोगों ने अपना स्वराज्य खुद नहीं जीता, पुलिस ने जीता। इसलिए यह स्वराज्य पुलिस की ही योग्यता का होगा। अगर राम की सेना शराब में गाफिल हो, तो वह लोगों की क्या सेवा करेगी ? इसी कारण तो गीता कहती है कि 'हम खुद ही अपने बन्धु हैं, और खुद ही अपने शत्रु'।"

खतरनाक हिंदू-मनोवृत्ति

प्रश्न : "पहले सरकार विदेशी थी, इसलिए हिन्दू और मुसलमान प्रेम से नहीं रहते थे। लेकिन अब स्वराज्य हो जाने पर भी वही बात क्यों चल रही है ?"

विनोबा : "मूल कारण तो यह है कि ये मुसलमान अरबिस्तान से नहीं आये हैं। वे सब प्रायः यहाँ की दलित जातियों से उस धर्म में गये हैं। इस तरह भगवान् ने हमसे बदला लिया है। क्या हम अपने हरिजन भाइयों को आज भी प्रेम से अप-

जाते हैं? क्या बात है कि ईसाई मिशनरियों को आज भी तेलंगाना में सेवा का इतना बड़ा क्षेत्र मिलता है? बस, कारण यही है कि हम अभी भी अपने पिछड़े हुए भाइयों की उपेक्षा ही करते जा रहे हैं। हिन्दू मुसलमानों की बात मान लेते हैं, उन्हें सुविधाएँ भी देते हैं, लेकिन पूरे मन से नहीं, सरकार के दबाव से, मजबूर होकर। अभी भी दोनों के मन मिले नहीं हैं। क्या पाकिस्तान हिन्दू-मनोवृत्ति का ही परिणाम नहीं है? मुसलमान तो अपना कोई एक खास देश बनाकर रहने में नहीं मानते। अपने विश्वास के अनुसार वे सारी दुनिया अपनी मानते हैं। लेकिन भारत के मुसलमानों ने, चूँकि वे अपना धर्म छोड़कर मुसलमान हुए हैं, एक खास जमीन के हिस्से को अपना देश मान लिया है। वे उसे पाकिस्तान कहते रहें, लेकिन दर-असल वह हिन्दुस्तान नं० २ ही है।"

प्रश्न : "परिस्थिति सुधरे कैसे?"

विनोबा : "ईमानदारी से, एक-दूसरे को समझते रहने की कोशिश से, दूसरों की संस्कृति और साहित्य का अध्ययन करने से और सबसे ज्यादा भेद में अभेद का दर्शन करने के अभ्यास से।"

...

साम्ययोग की स्फूर्ति

: २२ :

निजामाबाद
२६-३-'५१

प्रार्थना के बाद निजामाबाद की उस विशाल सभा में अपना प्रवचन देते हुए विनोबाजी ने कहा :

"आज मुझे इस बात की खुशी है कि मैं हिन्दुस्तानी में ही बोलूँगा और आप मेरे व्याख्यान को समझ लेंगे। नहीं तो अक्सर मेरे वाक्यों का तेलुगु में तर्जुमा करना पड़ता था, जिसमें भाषण का बहुत-सा सार मैं खो बैठता था। लेकिन वह बात आज नहीं होगी और मेरी आवाज सीधी आपके कानों तक और मैं उम्मीद करता हूँ कि हृदय तक पहुँचेगी।

"अभी आप लोगों को सुनाया गया कि हम वर्धा से पैदल यात्रा के लिए निकल पड़े हैं। शिवरामपल्ली में सर्वोदय-सम्मेलन होने जा रहा है, वहाँ जा रहे हैं। वैसे रास्ते में तो आपका गाँव नहीं आता, थोड़ा बाजू में है। इसलिए यहाँ आने का मैंने नहीं सोचा था। लेकिन आपके गाँववाले पहुँच गये। उन्होंने बहुत आग्रह किया, तो मैं पिघल गया। और आप लोगों के दर्शन करने के लिए आरमुर से आज १७ मील चलकर यहाँ पहुँच गया हूँ।

"वैसे अक्सर मेरी इच्छा खासकर छोटे-छोटे गाँवों में जाने की होती है, क्योंकि ऐसे छोटे गाँवों में लोग बहुत कम पहुँचते हैं। इसके अलावा पैदल यात्रा का यह उद्देश्य भी था कि जिन देहातों में अक्सर जाना नहीं होता, वहाँ जाकर वहाँ की स्थिति देखूँ। तो आपका गाँव वैसे छोटा तो नहीं था और रास्ते पर

भी नहीं था। दोनों लिहाज से यहाँ आने का मुझे कोई आकर्षण नहीं था। फिर भी आप लोगों के प्रतिनिधियों ने आपका प्रेम मुझे पहुँचाया। वही मुझे यहाँ खींच लाया है। छोटे देहात में जाना होता है, तो घंटा-डेढ़ घंटा मैं उस गाँव में घूम लेता हूँ। मेरे कार्यक्रम में यह भी एक चीज है। बहुत सारे घरों में जाता हूँ। वहाँ की बहनों से बातचीत करने का मौका मिलता है। इस तरह काफी प्रेमभाव महसूस होता है। मेरे और गाँववालों के बीच में कोई पर्दा नहीं रहता।

"अब यह बात शहरों में तो नहीं होती। शहर में यह अपेक्षा भी नहीं होती कि सबसे परिचय हो। इतना ही नहीं, बल्कि मैंने तो शहर की व्याख्या ही यह की है कि शहर वह है, जहाँ मनुष्य अपने पड़ोसी को नहीं पहचानता। अगर आपसे पूछा जाय कि आपके पड़ोसी कौन हैं और वे क्या करते हैं और आप उसका जवाब मुझे दे सकें, तो मैं कहूँगा कि आप दरअसल नागरिक हैं ही नहीं। आप देहात के रहनेवाले हैं। शहर तो वह है, जहाँ एक-दूसरे की पहचान नहीं, एक-दूसरे की परवाह नहीं। और जहाँ प्रेम का कोई सवाल ही नहीं। हरएक अपने-अपने में मग्न है। अगर दूसरे किसीसे सम्बन्ध हुआ, तो अपनी गरज से। टिकट-घर पर लोग इकट्ठा होते हैं। उनके बीच कोई सम्बन्ध नहीं होता, सिवा इसके कि हरएक को अपनी-अपनी टिकट कटानी होती है। वैसे शहर में जो समुदाय इकट्ठा होता है, वह समुदाय की गरज से नहीं, बल्कि अपनी गरज से होता है। तिस पर भी मानवता होती है, इसलिए कुछ प्रेमभाव पैदा हो जाय, तो लाचारी की बात है।

"एक पुरानी कहानी है। उपनिषदों में वह किस्सा आया है।* एक राजा था। उसने किसी ज्ञानी का नाम सुना। राजा का दिल

बड़ा था। जब वह किसी ज्ञानी का नाम सुनता, तो उससे मिलने की उसे बहुत तीव्र इच्छा हो जाती थी। तो राजा ने अपने सारथी को बुलाकर कहा कि "जाओ भाई, फलाने ज्ञानी का नाम मैंने सुना है, उसका पता लगाओ। वह कहाँ रहता है, ढूँढ़ निकालो।" राजा के हुक्म से सारथी गया और उसने सारी राजधानी ढूँढ़ डाली। लेकिन जिस ज्ञानी को ढूढ़ना था, उसका कोई पता नहीं लगा। वह राजा के पास वापस आया और उसने राजा से कहा : "मैंने सारा शहर ढूँढ़ लिया, लेकिन 'नाविद इति प्रत्येयाय'—मुझे वह ज्ञानी नहीं मिला।" तो राजा बोला : "अरे, तूने ज्ञानी को कहाँ-कहाँ ढूँढ़ा ?" सारथी बोला कि सारी राजधानी देख ली। तब राजा बोला : "अरे मूर्ख, तू कैसा है रे, ज्ञानी जहाँ होते हैं, वहाँ ढूढ़ना चाहिए। ज्ञानी क्या कहीं शहर में होते हैं ?" फिर वह सारथी जंगल में गया। वहाँ उसको वह ज्ञानी मिला। फिर आकर सारथी ने राजा को यह बात बतायी। राजा ज्ञानी के पास पहुँचा और बहुत कुछ ज्ञान उस ज्ञानी से उसने हासिल किया। यह सारा उपनिषद् में दिया गया है। हम लोगों को आश्चर्य होगा कि वह उपनिषद् का ऋषि ज्ञान की आशा ही शहर में नहीं करता है। और इधर देखो तो जो भी विद्यालय, हाई-स्कूल या कॉलेज आदि खुले हैं, सारे शहरों में हैं। मानो सरस्वती देवी ने अपने कमलासन को छोड़कर नगर में ही आसन डाला है। लेकिन उस जमाने में यह बात जितनी सही थी, उससे भी आज यह ज्यादा सही है कि शहर में कोई विद्या नहीं है।

"मैं तो बहुत दफा कह चुका हूँ कि शहरों में विद्यालय तो बहुत खुले हैं, लेकिन वहाँ विद्या का लय होता है। विद्या के आलय वे नहीं हैं। आजकल के विद्यालयों में जो विद्या पढ़ायी

जाती है, वह बिलकुल ही बेकार है। नागरिकों से जो कुछ आशा करनी है, उसके लायक विद्या हाईस्कूल-कॉलेजों में होनी चाहिए। वह वहाँ मौजूद न हो, तो ऐसी विद्या किस काम की? आजकल जो विद्या चलती है, वह हमारे काम की नहीं है; उसमें फौरन परिवर्तन होना चाहिए। यों कहते-कहते सरदार वल्लभभाई पटेल चले गये। और मैंने तो कई बार कहा है कि भाई, इस तरह की विद्या होने के बजाय न होना बेहतर है। अगर नये ढंग के विद्यालय शुरू करने में देर लगती हो, तो कम-से-कम पुरानी विद्या तो बन्द कर दो। चार-छह महीने बच्चों को छुट्टी दे दो। कोई नुकसान नहीं होगा। वैसे तो आज जिस तरह स्कूल-कॉलेज चलते हैं, उसमें भी चार-छह महीनों की छुट्टी होती है। गरमी के मौसम में लगातार दो-दो महीने की छुट्टी होती है, जब कि किसान धूप में अपने खेत पर काम करता है। लेकिन हम मकानों में बैठकर विद्या का आदान-प्रदान नहीं कर सकते। इस तरह सालभर में चार-छह महीने छुट्टी लेते हैं और बारह-बारह, पन्द्रह-पन्द्रह साल सीखते रहते हैं। बच्चों पर उनके माँ-बाप तालीम के लिए पैसा खर्च करते हैं। और लड़के बिना काम किये जिन्दगी कैसे बसर हो, इसकी खोज में रहते है। इसमें उनका कोई दोष नहीं है। जो विद्या उन्हें मिली है, वह निर्वीर्य है। अतः बच्चों के शरीर भी नाजुक बनते हैं। कोई रूहानी यानी आत्मिक ताकत मिलती नहीं है, काम की आदत पड़ती नहीं और कोई दस्तकारी सिखायी नहीं जाती। जो उठता है, उपदेश देता है कि देश की पैदावार बढ़ाने की आवश्यकता है, और हरएक का काम है कि देश के लिए कुछ-न-कुछ पैदा करे। इस तरह प्रवचन देनेवाले देते हैं और सुननेवाले सुनते हैं। लेकिन दोनों मिलकर कोई चीज पैदा नहीं

करते। चीज तो तब पैदा होती है, जब कोई करे। लेकिन करने की तालीम स्कूल में नहीं मिलती। इस हालत में देश का कोई भला यह शहर की तालीम नहीं कर रही है। उससे बेकारी में वृद्धि होती है। मनुष्य के दिल में एक तरह का असंतोष पैदा होता है। इसलिए यद्यपि शहरों में इतने विद्यालय हैं, फिर भी देश का भला हो, मानवता ऊँची उठे, दीनों के दुःख मिटें, परस्पर सहकार बढ़े, सारा देश वीर्यवान् और बलवान् हो, ऐसा कोई काम हम कर नहीं पाते। और सारे शहर एक तरह से राष्ट्र के लिए भार-रूप हो गये हैं।

जवानों में सर्वोदय का सन्देश सुनने की उत्सुकता

"ऐसी निकम्मी तालीम दी जाने के बावजूद मैं जब कभी शहरों में हाईस्कूल या कॉलेजों में गया हूँ और वहाँ बोला हूँ, तो आश्चर्य-चकित हुआ हूँ। क्योंकि मैं देखता हूँ कि वहाँ के लड़के सर्वोदय के विषय में मैं जो कहता हूँ, वह सुनने के लिए अत्यन्त उत्सुक रहते हैं और उससे प्रभावित होते हैं। हाईस्कूल और कॉलेजों के नवयुवकों में एक ऐसी आकांक्षा काम कर रही है, जिससे उनका जी छटपटा रहा है कि कुछ-न-कुछ करना चाहिए, जिससे हमारा देश आगे बढ़े। मानव में रजोगुण और तमोगुण काम करते ही हैं, और इन दिनों इन दोनों गुणों का नाच बहुत जोरों से चल रहा है। रिश्वतखोरी बढ़ी है, आलस्य बढ़ा है, शराबखोरी और दूसरे व्यसन बढ़े हैं, एक-दूसरे को लूटने का विचार हो रहा है। यह सब हो रहा है। लेकिन इतना होते हुए भी जवानों में एक ऐसी सद्भावना और शक्ति काम कर रही है, जो इस बिगड़ी हुई हवा से बिलकुल अलिप्त है और जिसको अपनी ही कल्पना में विचरने की इच्छा हो रही है। जवानों को लग रहा है कि चाहे साम्यवाद आये, चाहे समाजवाद आये, चाहे सर्वोदय आये,

किसी भी तरह से आज जो बुरी हालत है, वह जाय। इस तरह की प्रेरणा तरुणों में मैंने देखी है। मैंने सोचा, इसका कारण क्या होगा। तो कारण मुझे यही लगा कि इस देश पर भगवान की कृपा हो रही है।

"वैसे यह देश एक पुण्यभूमि के तौर पर सारी दुनिया में मान्य है। हम तो कहते ही आये हैं कि "दुर्लभ भारते जन्म"। लेकिन सारी दुनिया कबूल करती है कि हिन्दुस्तान के इतिहास में एक ऐसी विशेषता है, जो दूसरे देशों के इतिहास में कम पाई जाती है। यहां हमने अनेक प्रकार की तपस्या की है। यहाँ अनेक खोजें हुई हैं। अनेक तरह के आध्यात्मिक शोध यहाँ हुए हैं। इन दिनों पश्चिम में जिस तरह वैज्ञानिक और प्रापंचिक शोध हुए हैं, वैसे हमारे यहाँ आध्यात्मिक शोध और प्रयोग हुए हैं। यह देश क्या है। यह तो सारी पृथ्वी का एक दर्शन है। "नाना धर्माण पृथिवीम् विवाचसम्"—अनेक धर्मवाले और अनेक भाषावाले लोग पृथ्वीभर में फैले हुए हैं और "माता भूमि पुत्रोऽहं पृथिव्या"—यह सारी भूमि मेरी माता है और मैं इस भूमि का पुत्र हूँ। यह जो सारी पृथ्वी के लिए वैदिक ऋषि ने कहा था, वह इस भरतभूमि के लिए भी उतना ही लागू है। यहाँ के विचारवान् और ज्ञानी लोगों ने कभी आप पर भेद नहीं रखा। जिसे संकुचित देशाभिमान कहते हैं, वह इस भूमि में कभी जन्मा ही नहीं। इसलिए दुनियाभर के लोग यहाँ आये, तो उनका बहुत प्रेम से यहाँ स्वागत हुआ। इस तरह के कई पुण्य इस भूमि में हुए हैं, अतः परमेश्वर की कृपा उस पर होनी ही चाहिए।

हमारी भूमि के कुछ पाप

"लेकिन जैसे इस भूमि में कुछ पुण्य हुए हैं, वैसे कुछ पाप भी हुए हैं। और पापों को पुण्य के साथ भोगना ही पड़ता है। यह

नहीं होता कि पाँच रुपये का पुण्य किया और तीन रुपये का पाप किया, तो आखिर दो रुपये का पुण्य बचा। पाप-पुण्य का हिसाब पैसे जैसा नहीं होता। अगर पाँच रुपये का पुण्य किया है, तो वह भी अलग से भोगना है; और तीन रुपये का पाप किया है, तो वह भी अलग से भोगना है। दोनों को भोगना पड़ता है। एक में से दूसरा बाद नहीं होगा। बहुत लोगों को इस बात का खयाल नहीं होता। वे बहुत पाप करके पैसा कमाते हैं और फिर सोचते हैं कि कुछ दान देंगे, धर्मशाला बाँध देंगे, तो उस पुण्य से पाप खतम हो जायगा। लेकिन पाप और पुण्य दोनों अलग से भोगने पड़ते हैं। तो इस पुण्यभूमि में पुण्य काफी हुआ था, पर साथ-साथ पाप भी हुआ था। वह पाप यह कि यहाँ के लोगों ने उच्च-नीच भाव को बढ़ाया। हमारे समाज की रचना में श्रम के लिहाज के खयाल से वर्णव्यवस्था का उदय हुआ और इसमें मैं कोई दोष नहीं देखता। लेकिन उस वर्ण-व्यवस्था में आगे चलकर उच्च-नीच भाव दाखिल हुआ और जितने-जितने परिश्रम के उपयोगी काम थे, वे सारे नीच श्रेणी के गिने गये। और वे काम करनेवाले मनुष्य भी नीच माने गये। यहाँ तक कि उनमें से कुछ लोगों को हमने अछूत तक माना। काम करने में बेइज्जती समझी गयी। ज्ञानी काम नहीं करेगा। भक्त माला जपेगा, लेकिन काम नहीं करेगा। संन्यासी काम नहीं करेगा। ब्राह्मण काम नहीं करेगा। इस तरह काम न करनेवालों की संख्या बढ़ गयी और उनकी इज्जत भी बढ़ गयी। जो काम करते थे, उनकी संख्या घट गयी और उनकी इज्जत भी घट गयी। यह बड़ा पाप हमारे देश में हुआ। उसकी सजा के तौर पर शताब्दियों तक हम गुलामी भोग चुके। सजा देने में भी परमेश्वर की अनुकम्पा रहती है।

"अब यों दीखता है कि इस देश ने जितना पाप किया था, उसका प्रायश्चित्त उसको मिल चुका, ऐसा परमेश्वर को लगा। आखिर परमेश्वर कृपालु होता ही है। उसने अपनी कृपा इस देश पर फिर से दिखायी, जो पहले भी थी। इसके सिवा मैं और कोई कारण नहीं देखता कि हमारे जैसे टूटे-फूटे लोग भी गाधीजी जैसे नेता के निमित्तमात्र बनने पर आजादी हासिल कर सके। मैं तो अपने लोगों में ऐसी कोई शक्ति नहीं देखता, जिसके बल पर हमको आजादी मिली। अगर उस शक्ति का आत्म-विश्वास हमें होता, तो हिन्दुस्तान की आज जो हालत है, वह हम नहीं देखते। उसका रंग हमको दूसरा ही दीखता। यह कभी नहीं हो सकता कि स्वराज्य आये और लोगों का दु ख, विमनस्कता और मनोमालिन्य पहले जैसा था, वैसा ही बना रहे। लेकिन ऐसा हुआ है, तो उसका मतलब यह है कि परमेश्वर की इच्छा से ही हम स्वराज्य में दाखिल हुए है। इसी कृपा के कारण मैं यह देख रहा हूँ कि आज के बिगड़े हुए वातावरण में भी हाईस्कूल और कॉलेजों के जवानों में उन्च आकाक्षा और सद्भावना कुछ अश में सर्वत्र मुझे दिखाई देती है।

अंधकार को तोड़नेवाली शक्ति

"हम लोग आश्रम में काम करते है। वहाँ मेरे पास काफी तरुण लोग हैं। बहुत सारे तो हाईस्कूल कॉलेजों को छोड़कर आये हैं। और वहाँ आकर वे क्या करते हैं ? कोई खेती में लग गये हैं, कोई जमीन खोदते है, कोई पानी खींचते हैं, कोई रसोई करते हैं, कोई भगी-काम करते हैं। हमको कुआँ खोदने की जरूरत थी, तो आखिर वह भी हमने शुरू कर दिया। जिन तरुणों को उस काम का कोई अनुभव नहीं था, वे उस काम

को बड़े उत्साह के साथ कर रहे हैं। मुझे बड़ा ताज्जुब हुआ करता है कि यह प्रेरणा इन जवानों में कहाँ से आयी। तो सिवा इसके कि यह परमेश्वर की इच्छा है, मुझे और कोई जवाब नहीं मिलता है। और चूँकि इसमें मैं परमेश्वर की इच्छा देख रहा हूँ, इसलिए मेरा उत्साह परमावधि को पहुँचता है। जब मैं हिन्दुस्तान की अभी की हालत के विषय में लोगों में निराशा देखता हूँ, तो उस निराशा का जरा भी स्पर्श मुझे नहीं होता। क्योंकि मैं देखता हूँ कि यद्यपि काफी अंधकार फैला हुआ है, फिर भी उसको तोड़नेवाली शक्ति का जन्म हो रहा है, यानी जवानों में बलवान् प्रेरणा काम कर रही है। उनकी आत्मा उछल रही है। वे देख रहे हैं कि कौन ऐसा मिलेगा, जो हमें वह मार्ग बतायेगा, जिससे कि सारे हिन्दुस्तान में साम्ययोग दीख पड़े। बस, साम्ययोग का नाम लीजिये और तरुणों का उत्साह देखिये। इसीलिए जिन्होंने बिलकुल परिश्रम नहीं किया था, वे परिश्रम के लिए तैयार हो रहे हैं। और इस तरह का काम जहाँ भी आप शुरू करेंगे, वहाँ जवान लोग उत्साह से काम करने के लिए सामने आते आपको दिखाई देंगे।

वादों को छोड़िये

"इसलिए मैं बहुत दफा कांग्रेसवालों को सुनाता हूँ। उनको इसलिए सुनाता हूँ कि वह एक बड़ी जमात है। उसके पीछे तपस्या का भाव है। पचास-साठ साल के इतिहास में कांग्रेस ने बहुत भारी तपस्या की है। इस युग में कई महान पुरुष हमारे देश में पैदा हुए और उन सबका प्रयत्न कांग्रेस के द्वारा हुआ। इसका मतलब यह हुआ कि कांग्रेस ऐसी संस्था बनी, जिसका संपर्क सारे देश से हुआ। इसलिए मैं कांग्रेसवालों को सुनाता

हूँ। लेकिन मैं दूसरे लोगों को भी सुनाता हूँ। समाजवादियों में मेरे कई मित्र हैं। वे जानते हैं कि यह एक ऐसा मनुष्य है, जो भेदभाव नहीं रखता। मेरा ऐसा दावा है कि मैं अपने को किसी पक्ष का कभी समझता ही नहीं हूँ। मेरे सिर पर किसी तरह का लेबल कभी चिपका ही नहीं। मेरा दिमाग किसी वाद के पीछे पागल नहीं हुआ है। जहाँ-जहाँ सत्य का थोड़ा अंश भी दीख पड़ता है, वहाँ से उसे ग्रहण करने के लिए मैंने अपनी बुद्धि को हमेशा स्वतंत्र रखा है। इसलिए समाजवादियों में भी मेरे कई मित्र पड़े हैं। तो मैं उनको भी सुनाता हूँ और सबको सुनाता हूँ कि अभी वादविवाद छोड़ दीजिये। वाद के लिए अभी मौका नहीं है। देश अभी ही स्वतत्र हुआ है। जहाँ देश स्वतंत्र होता है, वहाँ कई तरह की शक्तियाँ काम करती हैं। उनमें कुछ शक्तियाँ प्रतिक्रियावादी भी होती हैं। उनका मुकाबला सबको मिलकर करना चाहिए। जब उनका मुकाबला होगा और देश का नैतिक स्तर जैसा चाहिए वैसा बनेगा, उसके बाद अपने-अपने वादों के लिए अवकाश रहेगा। तब तक वादों को छोड़िये और सारे लोगों की सेवा में लग जाइये।

परिश्रम का कार्यक्रम अपनाओ

"और सेवा व्याख्यान श्रवणादि से नहीं, बल्कि प्रत्यक्ष शरीर-श्रम से होगी। आज हिन्दुस्तान के हरएक नागरिक से और ग्रामीण से—चाहे वह पुरुष, स्त्री, बच्चा, बूढ़ा, कोई भी हो—यह आशा की जाती है कि उससे जो भी प्रयत्न बन सके, अपनी मातृ-भूमि के लिए करना चाहिए। अगर यह नहीं होता है, तो हमारे देश की समस्या हल नहीं होगी। लोग मुझे पूछते हैं कि सर्वोदय क्या है। मैं कई तरह के अर्थ समझाता हूँ। एक अर्थ यह भी समझाता हूँ कि सर्वोदय यानी सबका प्रयत्न। एक बच्चा

भी ऐसा नहीं रहना चाहिए, जिसने देश के लिए कुछ-न-कुछ काम नहीं किया हो। इसीलिए गांधीजी ने हरएक को दीक्षा दी कि सूत कातो। और भी दूसरे काम करो। लेकिन अगर कोई इतना कमजोर हो कि दूसरा कुछ काम नहीं कर सके, तो वह भी थोड़ा सूत कात ले, तो देश की पैदावार में उतनी वृद्धि होगी। जैसे बूँद-बूँद से नदी बनती है, वैसे हरएक मनुष्य से इस वक्त परिश्रम होना अत्यन्त जरूरी है।

"मैं तो समझता हूँ कि आप ऐसा कोई कार्यक्रम—प्रत्यक्ष पैदावार का कार्यक्रम निकालो। गरीबों से एकरूप होने का कार्यक्रम निकालो कि जिससे अमीर-गरीब, शिक्षित-अशिक्षित, नागरिक और ग्रामीण का सारा भेद मिट जाय। किसी प्रकार का उच्च-नीच भाव न रहे। इस तरह का कार्यक्रम शुरू हो, तो किसी वाद का सवाल ही पैदा नहीं होगा और आप देखेंगे कि तरुणों में कितना उत्साह भर जाता है और कितनी तीव्र प्रेरणा से वे उस कार्यक्रम में शामिल होते हैं।

"तो मैं सबसे पहले कांग्रेसवालों को सुनाता हूँ, फिर समाजवादियों को सुनाता हूँ और बाद में और भी जो बहुत-से वादी पड़े हैं, उनको सुनाता हूँ कि भाइयो, तुम्हारे जो भी अलग-अलग विचार हैं, वे सारे अपने पास रखो। मैं यह नहीं कहता कि उनको छोड़ दो। क्योंकि जो विचार तुमको सच्चे लगते हैं और तुम्हारे दिल में बैठे हैं, वे तुम कैसे छोड़ोगे। और छोड़ना भी नहीं चाहिए। लेकिन उन विचारों को ध्यान में रखते हुए भी यह समझो कि फिलहाल देश को शरीर-श्रम की जरूरत है और इससे भेद-भाव भी मिट सकता है। अतः इस कार्यक्रम को हाथ में ले लो। फिर देखोगे कि कितनी महान् शक्ति पैदा होती है। हमने थोड़ा करके देखा है, जिससे हमको अनुभव आया है कि कितनी

स्फूर्ति उससे मिलती है। देखनेवालों और सुननेवालों को स्फूर्ति मिलती है, तो प्रत्यक्ष करनेवालों को कितनी मिलती होगी, इसका अन्दाजा आप लगाइये।

पारस्परिक सहयोग चाहिए

"आज आपके शहर में आया, तो यह विचार सहज सूझा कि शहर और देहात में भेद क्यों होना चाहिए। शहरों को देहात की सेवा में लग जाना चाहिए। देहातियों को शहरों की मदद करने की प्रेरणा होनी चाहिए। इस तरह एक-दूसरे को एक-दूसरे की मदद करने की प्रेरणा क्यों नहीं होनी चाहिए? ऐसी प्रेरणा यदि होगी, तो यह सारा भेद मिट जायगा और सब मिलकर हिन्दुस्तान की सेवा में लग जायँगे। भगवान् ने हरएक को अलग-अलग शक्ति दी है। इस तरह की विषमता दुनिया में है। इसमें दोष नहीं, बल्कि लाभ है। अगर संगीत में केवल सा-सा-सा ऐसा एक ही स्वर होता, ग-म शुद्ध नहीं होते, तो संगीत ही नहीं बनता। लेकिन भिन्न-भिन्न स्वर होते हुए भी हरएक में भिन्न-भिन्न गुण हैं, इसलिए मधुरता होती है और सब मिलकर सुन्दर संगीत बनता है। वैसे शहरवालों में कुछ शक्तियाँ पड़ी हैं, देहातवालों में कुछ शक्तियाँ पड़ी हैं। लेकिन वे सारी एक-दूसरे के खिलाफ काम करती हैं। अतः उन शक्तियों का जोड़ नहीं होता, बल्कि घटती होती है। दस के विरोध में अगर आठ खड़े होते हैं, तो दोनों मिलकर दो ही शक्ति रह जाती हैं। लेकिन दस के साथ अगर आठ लगते हैं, तो शक्ति अठारह बनती है। यह सीधी गणित की बात है। तो हमारे देश में शक्ति काफी पड़ी है। लेकिन उस शक्ति का साक्षात्कार हमें तब होगा, जब कि यह सारी एक दिशा में लग जाय। नदी का पानी

जब कई जगहों से एक दिशा में आता है, तो शक्तिशाली नदी बनती है। लेकिन अगर पानी इधर-उधर दौड़ता चले और नदी न बने, तो वह सारा का सारा पानी कहीं न कहीं गायब हो जायगा। उसमें से कोई विशेष महान् प्रवाह बनता हुआ दीख नहीं पड़ेगा। वैसे हममें शक्ति कम नहीं है। लेकिन वह सारी अगर एक दिशा में लग जाती है, तो उसका प्रकाश पड़ेगा, उसका स्वरूप दीख पड़ेगा, उसके परिणाम का अनुभव आयेगा।

"मेरे भाइयो, मैंने आपको काफी सुनाया। अगर आपके दिलों तक मेरी बात गयी हो, तो किसी न किसी उत्पादक शरीर-श्रम में लग जाइये और ऊँच-नीच का भाव मन में से बिलकुल निकाल दीजिये। यह मेरी आपसे प्रार्थना है।" ...

सज्जन-संघ कायम करो : २३ :

डिचपल्ली
२७-३-'५१

डिचपल्ली जाते हुए रास्ते मे हमें वे स्थान वताये गये, जहाँ एक हफ्ता पहले कम्युनिस्टों ने दो सिपाहियों को गोलियों से मार डाला था। इलाका उपद्रव-ग्रस्त कहा गया था, फिर भी किसान अपनी भजन-मंडलियाँ लेकर काफी बडी संख्या मे आये थे। वे दूर-दूर से आये थे और विनोबा के चरणों का स्पर्श पाना चाहते थे। लेकिन विनोबा इस रूढ़ि को नापसंद करते हैं, और इसका उन्होंने निषेध किया। प्रवचन सुनने के लिए लोग अमरूद के सुन्दर झाडों की एक घटा में इकट्ठे हुए। उनका आना लगातार जारी था। स्थानीय लोग इन-आगन्तुकों को गाँव मे गाँव के ही अन्न से तैयार किया हुआ अंबिल नाम का एक सादा पेय पीने के लिए देते थे। स्वागत-सत्कार का यह कैसा मीठा ढंग था !

कुष्ठ-सेवा का क्षेत्र

प्रार्थना प्रवचन मे विनोबा ने इस गाँव की १५ वर्ष पहले की अपनी मुलाकात को याद करते हुए कहा :

"आपके इस गाँव मे कोई पन्द्रह-बीस साल पहले मैं एक बार आया था। लेकिन यहाँ गाँव के भीतर नहीं आया। कुष्ठ-रोगियों का दवाखाना देखने के लिए आया था, जो उन दिनों बहुत मशहूर था। हिन्दुस्तानभर मे इस तरह के कुष्ठ-रोगियों के दवाखाने ईसाई भाइयों ने चलाये हैं। वैसे हिन्दुस्तान मे ईसाइयों की संख्या बहुत कम है और जो बीमार होते हैं, उन मे

ज्यादातर हिन्दू-मुसलमान ही होते हैं। ईसाई कम होते है। तो उन दिनो हमारे मन मे विचार आता था कि हम क्यो ऐसी सेवा न करे। वैसे हम लोग दूसरी सेवा तो काफी करते थे, जैसे हरि-जन-सेवा, खादी आदि। लेकिन कुष्ठ-रोगियो की सेवा का काम हाथ मे नहीं लिया था। जब इस सेवा के क्षेत्र में आने की इच्छा हुई, तो हममे से एक भाई श्री मनोहर जी दिवाण इस काम के लिए तैयार हो गये। उस दृष्टि से उस समय यह दवाखाना मैंने देखा था और मुझे बहुत खुशी हुई थी। मनोहरजी खुद डॉक्टर नहीं थे। लेकिन इस काम के लिए जरूरी डॉक्टरी का ज्ञान उन्होंने प्राप्त किया और बाद मे वर्धा मे काम शुरू किया। इतने दिन उन्होंने अकेले ही काम किया। वैसे वर्धा के कुछ डॉक्टरो ने उनकी मदद की। लेकिन अब वहाँ दो अच्छे कार्यकर्ता इस काम के लिए मिल गये हैं। बीमारो की व्यवस्था भी अच्छी है। गाधी-निधिवालों ने भी तय किया है कि उस निधि से इस काम को कुछ मदद पहुँचायें। क्योंकि महात्मा गांधी ने जो रचनात्मक कार्य बताये है, उनमे इस काम का भी समावेश है। हम आशा करते हैं कि वह काम अब ठीक चलेगा।

सेवकों की कमी

"लेकिन भारत मे सेवको की बहुत कमी है। और यह सेवको की कमी हमारे हर काम मे बाधा डाल रही है। मानो फसल तो बहुत ज्यादा है और काटनेवालो की कमी है। हमारे देश मे आज तरह-तरह के सेवको की जरूरत है। आज तक स्वराज्य नहीं था, इसलिए उसे प्राप्त करने मे कार्यकर्ताओं की शक्ति लगी थी। लेकिन अब स्वराज्य मिलने पर कार्यकर्ताओं को सेवा के काम मे लग जाना चाहिए।

'भारत देश मे केवल यही एक रोग नही है, और भी बहुत-से रोग हैं। इन सब रोगो से लोगों को मुक्त करना सेवकों का काम है। लोगों को अच्छा खाने को भी नहीं मिलता। अच्छी खुराक के अभाव में रोगों की वन आती है। तो रोगों की भा एक समस्या है। और दरिद्रता की भी एक समस्या है। फिर दरिद्रता की समस्या के साथ व्यसनो की भी समस्या है। जिधर देखो, उधर शराबखोरी चल रही है। इधर इस मुल्क मे तो लोग शराब खूब पीते दीखते है। उन सबको शराबखोरी से मुक्त करना हमारा काम है। मतलब यह कि जिधर देखो, उधर सेवा का काम पड़ा है। इसलिए सेवा मे फौरन लग जाना चाहिए। कांग्रेसवालों को और दूसरे जो भी सेवक है, उनको भी।

कांग्रेस और शराब-बंदी

"पुराने जमाने मे कांग्रेस पिकेटिंग द्वारा शराब के विरुद्ध प्रचार करती थी। अब तो कांग्रेस का ही राज्य है। लेकिन अब सरकार को लगता है कि शराबबन्दी से सरकार की आमदनी बन्द होगी और लोग छिप-छिपकर चोरी से शराब पीते ही रहेंगे। इसलिए कार्यकर्ताओं को इधर ज्ञान प्रचार द्वारा और उधर कानून द्वारा यह काम करना होगा।

"जो व्यसन सालों से लोगों में घुसा हुआ है, उसे निकालने में तकलीफ तो होगी। लेकिन यह बात भी सही है कि हमारे सारे देश मे वातावरण शराबखोरी के लिए अनुकूल नहीं है, प्रतिकूल है। यद्यपि सब लोग इसके विरोध म हैं, फिर भी कुछ जातियाँ, जैसे हरिजन आदि, शराब अधिक पीती है। इसलिए केवल कानून से यह काम हो सकेगा, ऐसा नहीं मानना चाहिए। हम लोगों को चित्त और

व्याख्यानों द्वारा प्रचार भी काफी करना चाहिए। और ये जो प्रचारक होंगे, वे केवल प्रचारक नहीं होंगे, बल्कि गाँवों की विविध सेवा करनेवाले कुशल सेवक होंगे। अगर वे ऐसी सेवा करेंगे, तो आपको यहाँ कम्युनिज्म का जो डर लगता है, उसको भी वे रोक सकेंगे। क्योंकि आखिर कम्युनिस्टों का जो हिंसक तरीका है, वह हमारे देश को कभी पसंद नहीं हो सकता। फिर भी चूँकि देश में गरीबी है, इसलिए लोग उनकी बात मान लेते हैं। अगर हम लोग देहातों में चले जायँ और उनकी सेवा में लग जायँ, तो उन्हें महसूस होगा कि कांग्रेसवाले हमारी सेवा में लग गये हैं। इस दृष्टि से सेवा के बारे में यह डिचपल्ली का दवाखाना हमारे लिए गुरुरूप है। दूर-दूर से अंग्रेज लोग आते हैं और हमारी सेवा करते हैं, क्या यह हमारे लिए शर्म की बात नहीं है? कांग्रेसवाले अगर आइन्दा इस तरह सेवा के काम में नहीं जुट जायँगे, तो कांग्रेस खतम हो जायगी। यह तो मैंने सेवकों के लिए कहा। किन्तु गाँववालों को चाहिए कि वे भी खुद अपनी सेवा करें।

"सज्जन-संघ" की आवश्यकता

"लोग यह नहीं कह सकते कि हमारे यहाँ सेवक नहीं हैं। जंगल के जानवर भी शेर आदि हिंसक पशुओं से बचने के लिए आपस में झुंड बनाकर रहते हैं और एक-दूसरे की मदद करते हैं। आप लोग तो आखिर मनुष्य हैं। अगर आप प्रेम से रहेंगे और एक-दूसरे की मदद करेंगे, तो गाँव की रक्षा सहज कर सकते हैं। जैसे हम अपने परिवार के बारे में सोचते हैं, वैसे सारे गाँव के बारे में भी सोचने की आदत हमें डालनी चाहिए। लेकिन अपने परिवार के बाहर हम सोचते ही नहीं। सालों से यही आदत पड़ी है। इसलिए आप लोगों को गाँव में सज्जनों का एक

समाज बनाना चाहिए। जान-बूझकर मैंने इसे 'सज्जन-समाज' नाम दिया है। यानी यह जो समाज बनेगा, वह किसी तरह का अधिकार नहीं चाहेगा। वह सिर्फ सेवा करना चाहेगा।

"गाँव में दुर्जन भी होते हैं और वे आपस में संघ बनाते हैं। लेकिन सज्जन लोग संघ नहीं बनाते। हरएक सज्जन अकेला काम करता है, इसलिए सज्जनों की शक्ति प्रकट नहीं हो पाती। इसलिए हम लोगों ने सर्वोदय-समाज कायम किया है। ऐसा सज्जनों का समाज हर गाँव में बनना चाहिए। फिर यह समाज सोचेगा कि गाँव की बुराइयों का मुकाबला कैसे किया जाय। इस समाज को चाहिए कि गाँव की सारी समस्याओं पर सोचे। यही सज्जन-संघ का काम होगा। ऐसा संघ आप अपने गाँव में कायम करेंगे और गाँव की सेवा करेंगे, ऐसी मैं आशा करता हूँ।"

त्रिविध दल

: २४ :

करवरल
२८-३-'५१

करवरल में उस दिन बादल घिर आये। वर्षा और आँधी का डर था। लेकिन आसपास के गाँवों से किसानों का आना सवेरे से ही शुरू हो गया था। विनोबा ने लोगों से सफाई-दल, शिक्षा-दल और रक्षा-दल बनाने के लिए कहा। यह आखिरी सुझाव लोगों के दिल से कम्युनिस्टों का डर दूर करने के लिए किया गया था। कुछ लोग डर के मारे गाँव छोड़कर भाग गये थे। रक्षा के लिए पुलिस आयी उसके बाद। इस रक्षा में कई तरह की उलझनें आती हैं। इसके सिवा, गाँव के इन लोगों को कम्युनिस्ट या गुंडा बता दिया गया हो, उन पर पुलिस के अत्याचार का डर भी होता है। विनोबा ने कहा कि "अगर लोग यह कस्द कर लें कि वे भाई-भाई की तरह रहेंगे और बाह्य आक्रमण का मुकाबला मिलकर करेंगे, तो पुलिस को उनके जीवन में दखल देने का मौका ही न आयगा।"

तूफान की आशंका हो रही थी, इसलिए लोग प्रार्थना के बाद शीघ्र ही अपने-अपने घरों की ओर चल पड़े। रात को जोर के ओले गिरे। दूसरे दिन सुबह कामरेड्डी जाते हुए हम लोगों ने देखा कि रास्ता आम के तथा दूसरे पेड़ों के हरे-हरे पत्तों से बिलकुल पुर गया था। कैरियाँ तो हजारों गिर गयी थीं। गाँव के चारों तरफ करीब ५० मील के घेरे में वर्षा ने भारी नुकसान किया था। विनोबा को उस दिन सर्दी भी हो गयी।

चित्र नहीं, काम चाहिए

कामरेड्डी
२६-३-'५१

कामरेड्डी में बादल फिर सवेरे से घिर आये थे, लेकिन गाँव के लोग शांति और प्रेम का संदेश सुनने के लिए अपनी खेती का नुकसान सहकर भी आ जुटे थे। कामरेड्डी और पड़ोस के गाँवों की बहनें लगातार कोई चार घंटों तक विनोबा के ठहरने की जगह आती रहीं। मदालसा बहन और महादेवी ताई ने इस अवसर का उपयोग उन्हें पुनाई और कताई सिखाने में किया। शाम को डर लग रहा था कि किसी भी समय हवा-पानी का आना शुरू हो जायगा और सभा में बाधा होगी, लेकिन सुदैव से ऐसा नहीं हुआ।

कामरेड्डी में विनोबा ने गांधीजी की तस्वीर का उद्घाटन किया। उन्होंने कहा :

"इस काम को मैं कुछ संकोच के साथ करता हूँ। वैसे गांधीजी का दर्शन आप लोगों के नेत्रों को होता रहेगा, तो यह खुशी की बात होनी चाहिए। लेकिन संकोच भी मुझे इसमें हो रहा है। कारण कि हम चित्र को खड़ा कर देते हैं, लेकिन उस चित्र का जो भाव हमारे मन के सामने होना चाहिए, वह अतिपरिचय से मिट जाता है। मैंने बहुत दफा यह अनुभव किया है कि लोग अपने घरों में अच्छे-अच्छे चित्र तो रख देते हैं, लेकिन उनका उपयोग वहाँ रहने के लिए मच्छरों को होता है। इस तरह अगर चित्रों का अपने जीवन में ठीक उपयोग

हम नहीं करते, तो उन चित्रों का न होना ही बेहतर है। वास्तव में जिस भावना से चित्र खड़ा किया जाता है, वह भावना रोज द्विगुणित होनी चाहिए। आप देखते हैं कि नदी शुरू तो होती है छोटे आकार में, लेकिन जैसे-जैसे आगे बढ़ती है, उसका पानी बढ़ता जाता है। इसी तरह से हमारी भावना भी बढ़ती रहनी चाहिए, ताकि वह रोज बढ़ती जाय। लेकिन शरीर तो जड़ रहता है, इसलिए उसको बार-बार प्रेरणा देनी पड़ती है। अगर हमने गेंद को एक दफा गति दे दी, तो वह कायम नहीं रहती। वह कम होती जाती है। इसलिए फुटबॉल खेलनेवाले हमेशा उसको गति देते रहते हैं। तो, आज तो हम बड़ी भावना के साथ गांधीजी के चित्र का उद्घाटन कर देते हैं, लेकिन कल और भी भावना हमको इसमें डालनी चाहिए।

चरखा-वाहन : गांधी

"वैसे हिन्दुस्तान में मूर्तियाँ और देवी-देवता कम नहीं हैं। लेकिन उन देवताओं का हमारे जीवन में कोई खास उपयोग नहीं होता। इस तरह सत्पुरुषों की मूर्तियों को बेकार नहीं बनाना चाहिए। अगर अपने सामने हमने किसी महापुरुष की मूर्ति रखी है, तो उनके गुणों का ध्यान और चिंतन हमें करना चाहिए। और हमें सोचना चाहिए कि वह भी हमारे जैसा एक सामान्य पुरुष ही था और अपने पराक्रम से महापुरुष बना था। अगर अपने मन में हम यह मान लेते हैं कि महापुरुष एक वर्ग के थे और हम दूसरे वर्ग के हैं, तो ऐसे चित्रों का हमारे लिए उपयोग नहीं होगा। यानी विचार यह होना चाहिए कि हम भी प्रयत्न करें, तो उनके गुणों का हमें भी अनुभव आ सकता है। मैंने एक घर में गांधीजी का चित्र देखा। उसमें गांधीजी चरखा चला रहे थे। मैंने उस घरवाले भाई को पूछा

कि क्या आपके घर मे चरखा चलता है ? तो उन्होंने कहा कि नियमित तो नहीं चलता, कभी-कभी चलता है। फिर मैंने सोचा कि यह गाधीजी का चरखेवाला चित्र हम अपने घर में रखेंगे और चरखा नहीं चलायेंगे, तो क्या दशा होगी। फिर तो वैसी दशा होगी कि अपने घर मे चित्र तो रखेंगे हम गरुड़ वाहनवाले विष्णु का, लेकिन हम तो गरुड पर नहीं बैठते। वैसे ही सोचेंगे कि गाधीजी के लिए तो चरखा वाहन हो गया, लेकिन हमारे लिए वह वाहन नहीं हो सकता। इस तरह अगर सोचेंगे, तो उस चित्र से जो लाभ हमे होना चाहिए, वह नहीं होगा।

परमेश्वर की कृपा

"देखिये, गाधीजी के प्रयत्नो से और उनके शिक्षण से हमको स्वराज्य तो मिल गया। लेकिन जहाँ स्वराज्य हाथ मे आया, वहाँ भगवान् ने गाधीजी को हममें से उठा लिया। तो भगवान् अब हमारी परीक्षा कर रहा है। वह देखता है कि इन लोगों ने गाधीजी का नाम लिया, उनके पीछे चलने का दावा किया, अब उनके बाद ये क्या करनेवाले हैं ? वह देखता है कि गाधीजी की तालीम अगर ये लोग दरअसल समझे हैं, तो अब गाधीजी की इनको जरूरत नहीं है। और अगर उनकी तालीम हम लोगों के दिल मे नहीं पहुँची है, तो गाधीजी को जिन्दा रखने से कोई लाभ नहीं। मैं तो परमेश्वर की यह कृपा समझता हूँ कि वह मौके पर सत्पुरुषों को भेजता है और मौके पर उनको उठा लेता है।

परस्पर साक्षी बनें

"गाधीजी की जो तालीम थी, उसको हमारे द्वारा वह प्रचलित करना चाहता है। अहिंसा और सर्वभूतों के लिए प्रेम, यह था गाधीजी का दिया हुआ शिक्षण। अहिंसा का यह सिद्धान्त

ही ऐसा है कि उसके विकास के लिए पूरी स्वतंत्रता चाहिए। मनुष्य के चित्त पर कोई दबाव नहीं होना चाहिए। अब जब गांधीजी को भगवान् ले गया, तो हम लोगों को पूरी आजादी है कि हम अपनी अक्ल से सोचें और अहिंसा का अपने जीवन में विकास करें। मेरे जैसे लोग, जो उनके साथ रहे और उनके मार्ग पर चले, अब क्या करते हैं, यह आप देख रहे हैं। मैं क्या कर रहा हूँ, इसके आप साक्षी हैं। लेकिन जैसे गांधीजी के विचार के मुताबिक मुझे चलना है, वैसे आपको भी चलना है। तो आप मुझे देखिये और मेरे साक्षी बनिये और मैं आपको देखूँगा और आपका साक्षी बनूँगा। इस तरह आप और मैं, दोनों एक-दूसरे के साक्षी बनेंगे, एक-दूसरे को मदद देंगे, तो अहिंसा बढ़ेगी।

अपने दोषों को दूर करें

"आप देखिये कि प्रजा हमेशा सरकार की तरफ ताकती रहती है। पहले की सत्ता जुल्मी थी और आज की सत्ता अच्छी है, तो यह तो सत्ता का फर्क हुआ। उसमें प्रजा के गुण में कोई फर्क नहीं हुआ। अगर राजा अच्छा रहा, तो वह प्रजा को सुख देता है और राजा बुरा रहा, तो प्रजा को दुःख देता है। सुख और दुःख का फर्क वह करता है। लेकिन राजा पर ही जहाँ प्रजा का आधार है, वहाँ प्रजा में स्वराज्य नहीं है। स्वराज्य तो तब होगा, जब हममें से हरएक यह महसूस करे कि मैं ही अपना राजा हूँ और मैं ही अपनी प्रजा हूँ। छह सौ साल से हैदराबाद में प्रजा के हाथ में सत्ता नहीं रही। तो उसका कारण क्या था? कारण यही समझना चाहिए कि हम लोगों में कोई ऐसे दोष हैं, जिनके कारण हम स्वतंत्र नहीं बन सके हैं।

"देखिये, जो डर जनता में पहले था, वह आज भी मौजूद

है और जनता निर्भय नहीं है, तो स्वराज्य क्या मिला? जो व्यसन और आलस पहले था, वही अगर आज भी रहा, तो स्वराज्य कहाँ आया? तो भावार्थ उसका यह हुआ कि हमारे हृदय में बल आना चाहिए और हमें स्वराज्य का अनुभव होना चाहिए। जिसने भोजन किया, उसको तृप्ति का अनुभव होता है। वैसे अगर हमें स्वराज्य मिला है, तो उसका अनुभव बच्चे-बच्चे को होना चाहिए। हाँ, एक फर्क जरूर हुआ है। यह गाधीजी का चित्र आपने आज खडा किया, वैसा पुराने जमाने में खडा नहीं कर सकते थे। तब आपको लगता कि अगर गाधी टोपी से या गाधीजी के नाम से सम्बन्ध रखेंगे, तो रजाकार हमको पीटेंगे। लेकिन अब शायद यह लगेगा कि गाधीजी का नाम लेते रहेंगे, उनके चित्र का उद्घाटन करेंगे, तो हम पर बडे लोगों की मेहरबानी होगी। इन दिनों हम देखते हैं न कि हमारे स्वागत के लिए बडे अधिकारी आते हैं। पहले जब बडे अधिकारी आते थे, तो हम समझ लेते थे कि हमारी गिरफ्तारी का सम्बन्ध है। तो इस समय गाधीजी का चित्र घर में रखने में किसीको कोई तकलीफ होनेवाली नहीं है।

गांधीजी का चित्र नहीं, काम चाहिए

"तो इस अवस्था में हमें गाधीजी का काम करना चाहिए। उनके चित्र से कोई निर्भयता हममें आती है, ऐसी बात नहीं है। उनके काम से ही हममें निर्भयता आयेगी। पहले के जमाने में अकबर आदि बादशाहों के चित्र घरों में रहते थे और स्कूलों में रहते थे। अगर उनकी जगह हम गाधीजी को देंगे और उनके चित्र घर में, शालाओं में और होटलों में रखेंगे, तो वे क्या काम के होंगे? मेरे कहने का मतलब यह है कि गाधीजी ने हमारे लिए कुछ काम दिया है। वह काम हमको करना चाहिए। हम

अगर माता का नाम लेते हैं, तो वह यही कहेगी कि अगर तुम मेरा नाम लेते हो, तो आपस-आपस में प्रेम क्यों नहीं करते ? तो गांधीजी के लिए हमें आदर है या नहीं, इसकी परीक्षा इसी पर से होनेवाली है कि हम आपस-आपस में कितना प्रेम-भाव रखते हैं। क्या अभी भी हम हरिजनों को अपने से नीच समझते हैं ? क्या अभी भी हिन्दू और मुसलमानों के दिलों में भेद मौजूद है ? क्या अभी भी पुलिस का डर जैसा पहले था, वैसा ही मौजूद है ? अगर यह सारा है, तो समझ लेना चाहिए कि गांधीजी के लिए वास्तव में हमें आदर नहीं है।

स्थितप्रज्ञ के लक्षण

"मेरे भाइयो, आज प्रार्थना में मैं जो बोला, वह भगवद्गीता का एक भाग है। उसका मैंने तेलुगु में तर्जुमा भी पढ़ लिया। उसमें स्थितप्रज्ञ पुरुष के लक्षण बताये हैं। जैसे गांधीजी का यह चित्र आपके सामने है, वैसे स्थित-प्रज्ञ के शब्दों में लक्षण गीता से मिलते हैं। महात्मा गांधी प्रार्थना में हमेशा ये लक्षण बोलते थे। तो ये स्थितप्रज्ञ के लक्षण हम अपने सामने रखें। हम रोज ऐसे पुरुष का चिंतन करें, यह मैं आप लोगों से प्रार्थना करता हूँ। कुटुंब-वाले अड़ोसी-पड़ोसी और मित्र दिन में शाम को एक दफा एकत्र हो जायें और स्थितप्रज्ञ के लक्षण बोलें तथा उनका चिंतन करें, तो बहुत अच्छा होगा। उसमें जो गुण बताये हैं, वे हिन्दुओं के लिए अच्छे हैं, मुसलमानों के लिए अच्छे हैं, ईसाइयों के लिए अच्छे हैं और सारे मनुष्यों के लिए अच्छे हैं। तो मैं चाहता हूँ कि ये लक्षण आप हमेशा बोलते रहें, पढ़ते रहें, गाते रहें। मैं तो आज आपके गाँव में आया, कल यहाँ से जाऊँगा। और परसों शायद इस दुनिया से भी चला जाऊँगा। लेकिन ये जो

स्थितप्रज्ञ के लक्षण हैं, वे हमारी आँख के सामने कायम रहनेवाले हैं। वे सदा टिकनेवाले हैं। तो मेरे जैसे लोग आयेंगे और जायेंगे। उनका इतना उपयोग नहीं है, जितना इन लक्षणों का है। इसलिए हम इन लक्षणों का ही चिन्तन करें और मनुष्यों को भूल जायँ। आप सबको मेरा प्रणाम।"

तूफान करीब था, इसलिए लोग भाषण के बाद शीघ्र ही अपने-अपने घरों को चल दिये। दूसरे दिन खबर मिली कि तूफान बहुत भयंकर था। घरों के छप्पर नष्ट-भ्रष्ट हो गये थे, उन पर छाये हुए खपरैल टूट-फूट गये थे, एक लड़के के सिर में चोट से बड़ा जख्म हो गया था। १० मिनट तक ८-१० इंच लम्बे और ४-६ इंच मोटे ओले ही ओले गिरते रहे। गाँवों के बड़े-बूढ़े कहते थे कि पहले कभी ऐसा हुआ हो, यह याद नहीं आता। दर्शन के लिए आये हुए सड़क के दोनों ओर खड़े स्त्री-पुरुषों से उनकी इस आपत्ति का वर्णन सुनकर विनोबा को बहुत क्लेश हुआ। लेकिन इस विपत्ति के बावजूद लोग सड़क पर भीड़ लगाये खड़े थे और चुपचाप विनोबा को अपने प्रणाम अर्पित कर रहे थे। विनोबा को खुद डेढ़ डिग्री बुखार था। साथियों ने इन्हें उस दिन कामरेड्डी से ६ मील दूर भिक्नूर में ही ठहर जाने के लिए बहुत अनुरोध किया, लेकिन उन्होंने १७ मील चलकर रामायमपेठ में ही ठहरने की अपनी हठ कायम रखी। भिक्नूर में आधा घंटा ठहरे। तूफान से गाँव तबाह हो गया था। सारी फसल नष्ट-भ्रष्ट हो गयी थी। पहली फसल भी नहीं आयी थी, और अब यह हाल हुआ। बेचारे विमूढ़-से हो रहे थे। ••

परमेश्वर से संबंध जोड़ना सीखो : २६ :

रामायमपेठ
३०-३-'५१

ऊपर जिक्र किया गया है कि रामायमपेठ जाते हुए भिखनूर पर विनोबाजी आध घंटा रुके थे। सबेरे बुखार में ही चले थे। अब पसीना काफी निकल आया था। बुखार कुछ कम हुआ था। पर कमजोर खूब हो गये थे। सत्रह मील मंजिल थी। साधारणतया विनोबाजी बहुत तेज गति से चलनेवाले हैं और बीस मील चलकर भी कमरे में घंटाभर घूमते रहते हैं। पर आज हर कदम उन्हें प्रयत्नपूर्वक उठाना पड़ रहा था। हम सबने उन्हें भिखनूर में रुक जाने के लिए समझाया। पर वे बोले: "हमारे हर संकल्प में ईश्वर साक्षी होता है। निश्चय बदलने से अनेकों का तकलीफ होती है। जो निश्चय किया, उसे पूरा ही करना है। और हमारा तो यह निसर्गोपचार चल रहा है। चलने से ही बुखार मिट जायगा।"

"पंगु चढ़ै गिरिवर गहन"—ऐसी कृपा जिन पर भगवान् की रहती है, उनके बारे में चिन्ता करना भी व्याकुल हृदय का लक्षण है।

साथियों ने श्री नारायण रेड्डी के घर मकई की रोटी और दही का नाश्ता किया, और रामायमपेठ के लिए रवाना होने के पहले विनोबाजी ने गाँव के लोगों को दो वचन सुनाये:

"गाँव वही अच्छा, जहाँ कोई अच्छा सेवक काम करता हो। आपके गाँव में नारायण रेड्डी जैसे अच्छे सेवक काम

करते है। मै आशा करता हूँ कि उन्हें यहाँ रामराज्य कायम करने की प्रेरणा होगी और आप सब लोग उन्हें सहयोग देंगे।"

गॉव बहुत साफ-सुथरा, सडक एक ही किन्तु अच्छी बड़ी, लोगो का नारायण रेड्डी पर प्यार भी बहुत। लेकिन गॉव मे 'सिंदी' शराब की बिक्री भी बहुत होती है। कितने लोग शराब पीते हैं, यह पूछने के बजाय यही पूछना होता है कि कितने नहीं पीते। इसलिए 'सिंदी' के बारे में कहा '

"आप लोगो को कोशिश करनी चाहिए कि गॉव में जो लाखो रुपये की शराब बिकती है, वह बन्द हो जाय। 'सिंदी' पीने से बुद्धि में जड़ता आ जाती है। इसलिए धर्मशास्त्रो ने 'सिंदी' पीने का निषेध किया है। गॉव के सज्जन लोगो का काम है कि वे लोगो को समझाये और गॉव में 'सिंदी' पीना बन्द करायें।"

नारायण रेड्डी को देखकर रजाकारी जमाने की याद ताजी हो उठती है। बाये हाथ की दो उॅगलियॉ उन्होंने रजाकारो की तलवारो को भेट कर दी थीं। जबडा दोनों ओर से फटा हुआ है। कधे पर और सिर पर जो जख्म हुए थे, उनके निशान कितने ताजे मालूम होते हैं। हरिजनो की सेवा और कांग्रेस से सहानुभूति—दोहरा अपराध था उनका। तीन महीने दवाखाने में रहना पडा था। अपने त्याग के कारण और अपनी नम्रता के कारण वे लोगो के प्यारे सेवक बन चुके हैं। अब आगे सर्वोदय का काम करने का वादा भी विनोबा से कर चुके हैं।

हम भिरतूर से विदा हुए, परतु रामायमपेठ अभी ढाई मील दूर था, जहाँ निजामाबाद की हद खतम होती थी और मेदक जिला शुरू होता था। उधर से लोग अगवानी के लिए ढाई मील तक आगे आये हुए थे। चार हजार की बस्ती में से करीब एक

हजार लोग स्वागत के लिए आये थे। करीब ग्यारह बज चुके थे। मालूम हुआ कि वे काफी देर से प्रतीक्षा कर रहे हैं। शांति के साथ रामधुन गाते हुए, हाथ में माला लिये वे आगे बढ़े। विनोबाजी ने उनके प्रेम-प्रतीक स्वीकार किये, और जुलूस करीब बारह बजे डेरे पर पहुँचा। विनोबाजी को पसीना भी खूब निकल आया था, जो बुखार उतरने की दृष्टि से ठीक माना गया।

वैसे आज जो थोड़ी-बहुत थकावट थी, वह केवल कमजोरी और बुखार के कारण थी। बारह बजने पर भी बादलों के कारण धूप की तकलीफ नहीं हुई थी। "जहँ-जहँ जाहिं देव रघुराया, करहिं मेघ तहँ-तहँ नभ छाया" की याद आती थी।

स्नान करके विनोबाजी विश्राम करने चले गये। बुखार बढ़ता है या जाता है, यही चिंता सब लोगों को थी। रामायम-पेठ न आते, तो लोगों को कितनी निराशा होती, इसका भी खयाल हुआ। आना ही ठीक रहा। "हमारे हर संकल्प में परमेश्वर साक्षी रहता है"—विनोबा ने शुरू में ही कहा था। अनुभव ने बताया कि उसे पूरा करने का बल भी वह देता ही है!

शाम की प्रार्थना-सभा में विनोबा ने स्वयं लोगों से कहा: "सुबह मेरे मन में शंका थी कि सत्रह मील की मंजिल आज कैसे तय होगी। लेकिन भगवान् का नाम लिया, चलना आरंभ किया और उसकी कृपा से आज हम यहाँ पहुँच गये। मैं आपसे कहना चाहता हूँ कि मुझे कोई तकलीफ नहीं हुई।"

हरिनाम की शक्ति

फिर हरिनाम की शक्ति का अनुभव बताते हुए कहा: "यह एक ऐसी अपार शक्ति है कि हम जितनी चाहे माँग सकते हैं।

माँगो और मिले नहीं, ऐसा आज तक नहीं हुआ। लेकिन माँगना कैसे, परमेश्वर के साथ नाता जोड़ना कैसे, यह समझने की बात है।

"मानव-देह का उद्देश्य यही है कि परमेश्वर से नाता जुड़ जाय। किसान के जीवन में तो नित्य परमेश्वर का सम्बन्ध आता है। बारिश हुई, तो वह परमेश्वर का उपकार मानता है, नहीं हुई, तो उसीका स्मरण करता है। इसलिए किसान का जीवन अत्यंत पवित्र है। अपार कष्ट सहने पर भी फसल आने पर वह यह नहीं मानता कि वह फसल उसके कष्ट से आयी है। वह उसे परमेश्वर की कृपा ही समझता है। कदम-कदम पर वह परमेश्वर के प्रति कृतज्ञता महसूस करता है।

परमेश्वर की निआमतें

"सब लोगों का यही हाल है। मनुष्य की एक साँस भी परमेश्वर की इच्छा के बगैर नहीं चलती है। लेकिन कुछ लोग अपना संबंध परमेश्वर के साथ सीधा है, यह कम महसूस करते हैं। किसान ज्यादा महसूस करता है। अभी देखिये, आपके इर्दगिर्द के गाँवों में ओले गिरे और फसलें काफी बरबाद हुईं। अब किसान क्या करता है? वह परमेश्वर का स्मरण करता है। इस तरह हमें अपने जीवन में हरएक काम का परमेश्वर के साथ सम्बन्ध जोड़ना सीखना चाहिए। अगर इस तरह हम भगवान् से सम्बन्ध जोड़ सकें, तो हमें पता चलेगा कि उसने हमें कितनी देन दी हैं, कितनी निआमतें दी हैं। उसने हमें जो निआमतें दी हैं, वे बेहिसाब हैं। उनकी कोई गिनती नहीं है। उसने हम पर क्या उपकार नहीं किया है? लेकिन उसके उपकार का ठीक उपयोग करने का भी हमें ज्ञान नहीं है।

सिंदी भी निआमत

"मैं इधर घूम रहा हूँ, तो चारों तरफ सिंदी के पेड़ देखता हूँ। यह तो परमेश्वर की हमारे लिए देन है। लेकिन हम उसका दुरुपयोग करते हैं। उसमें से शराब बनाते हैं और अपनी जिन्दगी को खराब करते हैं। लेकिन अगर हम उसका ठीक उपयोग करें, तो हमारे लिए वह अमृत का वृक्ष बन जायगा। उसमें से उत्तम गुड़ बनेगा और हरएक गाँव गुड़ के विषय में स्वावलम्बी बन जायगा। अगर आप सिन्दी का गुड़ बनायेंगे, तो आज जो आपकी जमीन का बहुत-सा हिस्सा गन्ने में जाता है, वह बच जायगा। आज हमारे देश में अनाज की कमी है। इस हालत में जितनी जमीन बच जायँ, उतना अच्छा है। तो आपको दो लाभ होते। सिन्दी के पेड़ से गुड़ बनता और जमीन में अनाज ज्यादा पैदा होता। लेकिन परमेश्वर की इस देन का उपयोग करना हम नहीं जानते। सिन्दी से शराब बनाकर अपनी आत्मा और शरीर को हम बिगाड़ते हैं और जमीन गन्ने में रुकती है। तो अब इसमें परमेश्वर का क्या दोष है? उसने तो हमको एक भारी चीज दी थी, लेकिन उसका उपयोग हमने नहीं किया।

"हमारे पास जमीन पड़ी है। उसमें से हर चीज हमको मिलती है। लेकिन उसका उपयोग हम सिर्फ पैसे के लिए करते हैं। पैसे के लोभ से ही जमीन का उपयोग करने की दृष्टि रहती है, तो जमीन में से तंबाकू बनती है। परमेश्वर ने हमें क्या-क्या दिया और हमने उसकी देनों को कैसे बरबाद किया, इसका मैं कहाँ तक वर्णन करूँ?

"मैं सुनता हूँ कि यहाँ पहले लोग थोड़ी कपास भी अपने उपयोग के लिए बोते थे। लेकिन आज लोगों ने कपास बोना

छोड़ दिया। वे पैसे के लोभ में पड़कर सारा कपड़ा बाहर से खरीदते हैं। नतीजा उसका यह हुआ कि आप परावलम्बी बन गये और अपना भार आपने व्यापारियों पर डाल दिया। मैं यह नहीं कहता कि इस जमीन में अगर गन्ना अच्छा होता है, तो गन्ना मत बोओ। लेकिन मैं कहता हूँ कि कुछ तो जमीन कपास के लिए रखो। इस तरह, अगर देखें, तो कई चीजों का अच्छा उपयोग हमको सूझेगा।

"देखिये, हम लोगों की गायें और भैंसें हमको गोबर देती हैं। हम उस गोबर को जलाते हैं, तो हमारी सारी खाद खतम हो जाती है। इसी तरह मनुष्य का मल और मूत्र भी इधर-उधर गिरता है, और अपनी सारी दुनिया हम अमंगल बनाते हैं। उससे हमारी सेहत बिगड़ती है, हमारी सभ्यता बिगड़ती है। अगर इस मल-मूत्र को जमीन के अंदर रखें और उस पर मिट्टी डालें, तो परमेश्वर की कितनी अपार कृपा है, उसका अनुभव हमें आयेगा। भगवान् ने हमें गाय-बैल दे दिये। अगर हम उन गायों का दूध बढ़ाते हैं और बैलों को मजबूत बनाते हैं, उनको पूरा खिलाते हैं, तो उनसे बहुत सेवा होती है। यह तो परमेश्वर की देन का अच्छा उपयोग होगा। लेकिन अगर हम गायों को ठीक खिलाते नहीं और उनको कम दाम में बेच डालते हैं, तो गायों की हत्या होती है। इसका मतलब यह हुआ कि भगवान् की देनों का हमने दुरुपयोग किया। परमेश्वर की देनों का हम ठीक उपयोग करें और उसका स्मरण करें, तो इस दुनिया में कोई मनुष्य दुःखी नहीं रह सकता।

सर्वोदय मुश्किल क्यों ?

"हम सर्वोदय-सर्वोदय चिल्लाते हैं, कहते हैं कि सबका भला होना चाहिए। लेकिन परमेश्वर अपने मन में हँसता होगा

और कहता होगा कि भाई, यह काम इतना मुश्किल क्यों लगता है। अपनी संतान के लिए जीवन मुश्किल हो, ऐसा कोई पिता नहीं चाहता। तो उस परम पिता ने हमें निर्माण किया और हमारे लिए ये सारे उपकार पैदा किये। पर हम उनका अच्छा उपयोग नहीं करते, आपस में झगड़ते है और कहते हैं कि सर्वोदय कब होगा, कब होगा।

ध्यान का महत्त्व

"गांधीजी अपनी प्रार्थना में ईश्वर का नाम लेते थे, तो ईश्वर के साथ अल्ला का नाम भी लेते थे। अब ईश्वर और अल्ला में कोई भेद तो नहीं है। लेकिन कुछ पागल हिन्दुओं ने कहा कि हम अल्ला का नाम नहीं सहन करते। वैसे ही रघुपति राघव राजाराम कहते है, तो कुछ मुसलमान कहते हैं कि यह राम काफिरों का शब्द है। हम इनकी प्रार्थना मे नहीं जायेंगे। इस तरह भगवान् के नाम में भी हमने भेद निर्माण किये। जब यहाँ तक हमारी बुद्धि भ्रष्ट हो गयी, तो हम सुखी कैसे बन सकते हैं? फिर तो आपस में लड़ना-झगड़ना ही है। इस तरह सारे झगड़े अपने देश में हैं और बाहर के देशों मे भी झगड़े ही झगड़े चल रहे हैं। आप कोई भी अखबार देखिये, तो किसीका खून किया, कहीं लूटा, कहीं लड़ाई हुई, यही पढ़ने को मिलेगा। उधर कोरिया की लड़ाई चलती है, इधर काश्मीर का मामला चल रहा है। बोल रहे हैं कि तीसरी लड़ाई, महायुद्ध कब होगा? मैं कहता हूँ कि तीसरा महायुद्ध कब होगा, कब होगा, यों कहते जायेंगे और उसीका ध्यान करेंगे, तो वह जरूर होगा। क्योंकि जिस चीज का हम ध्यान करते हैं, वह चीज हमारे सामने खड़ी होनी ही चाहिए। ऐसा ध्यान करो कि हम सारे

परमेश्वर के पुत्र है, और हम सब एक कुटुंब के है, तो आपमें कोई झगड़ा होगा ही नहीं।

जनसंख्या का भार नहीं

"लोग कहते है कि हिन्दुस्तान में जनसंख्या बढ़ गयी है। मैं कहता हूँ कि आज भी हिन्दुस्तान में इतनी शक्ति है कि हम अगर परमेश्वर की देनों का उपयोग करें, तो हिन्दुस्तान मे प्रेम के साथ रह सकते हैं। यह बात भी सही है कि मनुष्य को विषय-वासना रोकनी चाहिए। लोग संतान कम-ज्यादा गिनते है। मैं कहता हूँ कि विषय-वासना कम करो। अगर हम विषय-वासना को नहीं जीत सकते, तो हम एक-दूसरे से प्रेम नहीं कर सकते। अगर हम विषय-वासना को जीतते हैं, तो जो भी प्रजा होगी, वह परमेश्वर की भक्त होगी, और उसका दुनिया पर भार नही होगा। इस दुनिया मे मनुष्य ज्यादा हैं या कम हैं, इसका पृथ्वी कोई भार महसूस नहीं करती। लेकिन मनुष्य सज्जन हैं या दुर्जन, इसका भार महसूस करती है। पृथ्वी को मनुष्य की संख्या का भार नहीं, मनुष्य के दुर्गुणों का भार लगता है। हम काम-क्रोधादि को जीतें, एक-दूसरे से प्यार करें, परमेश्वर की देनों का सदुपयोग करना सीखें, अपनी हरएक कृति का संबंध परमेश्वर से जोड़ें, सुख और दुःख मे उसका स्मरण करें, तो सर्वोदय ही होगा, और युद्ध नहीं होगा।"

जुल्मों का मुकाबला कौन कर सकता है ?

१ शाम को कांग्रेस के कार्यकर्ताओं के साथ बातें हुईं। निजामाबाद जिला अनाज के मामले में स्वावलंबी है। वहाँ के निजामसागर की नहरों ने खुश्की को तरी में बदल दिया है और उपज अनेक गुना बढ़ गयी है। रास्ते के दोनों ओर जहाँ तक निगाह

जाती, मीलों जमीन धान की खेती से हरी-भरी नजर आती। मेदक में बीच-बीच में कहीं तालाब दिखाई देते हैं। पर खुश्की की ही जिराअत है। अनाज का सवाल है। "राशन की दूकानें भी बहुत थोड़ी है। और जो है, उनका कोटा भी देहातवालों के हिस्से में पूरा नहीं पड़ता। अफसरों के कारण लोग तंग हैं।" आदि शिकायतें भी कार्यकर्ताओं ने कीं। वैसे ही अनाज की कमी, तिस पर ये ओले। दोनों फसलें इस बार खतम हो गयीं। इस पर भी लेवी और लगान का जुल्म! "यदि हमारे राज में भी ऐसे जुल्म हों, तो क्या उनका प्रतिकार न किया जाय?" एक भाई ने सहसा सवाल पूछा। "जुल्म के खिलाफ खड़ा होना हमारा कर्तव्य है", विनोबा ने समझाया, "पर यह वही कर सकता है, जो जनता की सेवा में नित्य लगा रहता है। कांग्रेसवाले सेवा तो करते नहीं। इनके हाथ से थोड़ी-बहुत जो सेवा होती है, उसमें भी चुनाव की दृष्टि नहीं रहती, ऐसा नहीं कहा जा सकता। ईसाई बनाने के अंतिम उद्देश्य से मिशनरी लोग जिस तरह सेवा करते रहते हैं, वैसे ही उनका भी चलता है। सेवा के काम में समाजवादी आपको सहयोग देना चाहेगा, तो आप 'नहीं लेंगे, क्योंकि उसकी प्रतिष्ठा बढ़ेगी,' जो चुनाव पर असर करेगी। बिहार में गांधी-निधि के समय ऐसा हुआ है। असल बात यह है कि प्रजा को हमारे बारे में यह यकीन होना चाहिए कि ये हमारे सेवक हैं, इनके मन में और कोई भावना नहीं है। ऐसी सेवा करनेवाले सेवक कांग्रेस में आज नहीं के बराबर हैं। यहाँ इतने लोग सिंदी पीते हैं। लेकिन कितने कांग्रेसवाले उन्हें जाकर समझाते हैं? क्या पाँच आदमियों को भी उन्होंने सिंदी के व्यसन से छुड़वाया है? यहाँ इतने ईसाई मिशन चलते हैं। मराठवाड़ा में क्यों नहीं चल सकते? यहाँ पर लोग इतने पिछड़े

हुए हैं, परंतु उन्हें उपेक्षा से देखा गया। गांधीजी ने रचनात्मक काम की इतनी संस्थाएँ खड़ी कीं—हरिजन-सेवक-संघ, कस्तूरबा ट्रस्ट, चरखा-संघ आदि। पर कितने कांग्रेसवाले इन कामों में हिस्सा लेते हैं? वे समझते हैं, यह काम हमारा नहीं, दूसरों का है।"

क्या पार्लमेंटरी काम सेवा नहीं है ?

प्रश्न : "तो क्या आप पार्लमेंटरी काम को देश के लिए जरूरी नहीं समझते? और अगर कांग्रेसवाले उसमें हिस्सा लेते हैं, तो क्या वह सेवा नहीं है?"

विनोबा : "यानी आप लोग पार्लमेंटरी काम ही करना चाहते हैं न? बस, यही तो मैं कह रहा था। तो फिर आपकी ओर यदि जनता और सरकार, दोनों शक की निगाह से देखें, तो आपको शिकायत क्यों करनी चाहिए? दूसरे लोग काम करते हैं, तो उन्हें आप भी शक की निगाह से देखते हैं।"

प्रश्न : "तब फिर कांग्रेस के लोगों को क्या करना चाहिए?"

विनोबा : "सेवा के कामों में जुट जाना चाहिए। जब लड़ाई का काम नहीं रहता, तो फौजियों से खेती का काम करवाते हैं। कांग्रेसवालों को अब रोज विशेष क्या काम रहता है? मेंबर बनवाना, रजिस्टर रखना, चुनाव कराना, पत्र-व्यवहार करना, बस! फिर उनके काम का हाल यह कि 'इफेक्टिव' मेंबर बनाने का कानून बना, तो हजारों 'डिफेक्टिव' मेंबर भी बना लिये गये। जहाँ कांग्रेस पावर लेनेवाली संस्था बन गयी, वहाँ गरीबों को उसमें क्या स्थान मिलनेवाला है? फिर मेंबर बनाना, मेंबरशिप के फार्म किन्हें देना, किन्हें न देना, वक्त पर देना, न देना आदि कितनी झंझटें इसमें नित पलती रहती हैं। क्या यह सब सेवा है?"

पुरानी प्रतिष्ठा कब तक ?

प्रश्न : "विनोबाजी, तो हमें क्या करना चाहिए ? क्या कांग्रेस को छोड़ देना चाहिए ? कभी-कभी यह विचार बड़ा तीव्र हो उठता है।"

विनोबा : "छोड़ें नहीं। इतनी बड़ी संस्था है, उसका उज्ज्वल इतिहास है। लेकिन आज उसके सदस्यों के सामने कोई प्रोग्राम नहीं है, यही बुराई है। कांग्रेसवालों को प्रोग्राम बनाकर काम में लग जाना चाहिए। मद्रास और बंबई सरकार ने शराब-बंदी का कानून बनाया। क्यों नहीं कांग्रेसवाले इस प्रोग्राम को कामयाब बनाने में जुट गये ? मेरी समझ में नहीं आता कि ऊपर के दफ्तरों से जो सर्क्युलर कांग्रेस के छोटे दफ्तरों में आते हैं, उनमें प्रोग्राम का कहीं जिक्र क्यों नहीं रहता ? सेवा भी न करें और प्रतिष्ठा भी कायम रहे, यह कैसे हो सकता है ? पुरानी प्रतिष्ठा पर आप लोग काम चला रहे हैं। पर यह अधिक दिनों तक तो नहीं चल सकता।"

मार्क्स और अहिंसा

कार्यकर्ता एकाग्र होकर सुन रहे थे। मानो उन्हें इस तरह साफ बातें बतानेवाला ही अभी तक कोई नहीं मिला था। फिर, पिछले दिनों यहाँ जो काम हुआ, उसमें मार्क्स की विचारधारा रखनेवालों का नेतृत्व ही उन्हें नसीब हुआ था। उस संबंध में भी कुछ विचार कार्यकर्ताओं के मन में चल रहे थे। एक भाई ने पूछा :

"मार्क्सिजम पर विश्वास करनेवाला अगर हिंसा करता है, तो गलती तो नहीं करता ?"

विनोबा : "मार्क्स अगर हिन्दुस्तान में होता, तो न इस तरह

करता, न सोचता ही। वह बुद्धिमान् आदमी था। जहाँ जनता की अपनी हुकूमत है, वहाँ हिंसक शक्तियों पर काबू पाने के लिए आपकी सरकार को काफी शक्ति लगानी पड़ेगी। फिर उसे जन-सेवा का मौका कम मिलेगा। इधर मार्क्सवादी को भी, जो कि हिंसा करता है, सेवा का अवसर नहीं मिलेगा। सेवा के अभाव में और हिंसक प्रवृत्तियों के कारण चुनाव में यशस्वी होने की बात तो दूर रही, खड़े रहने का भी मौका नहीं मिलेगा। आखिर पावर तो चुनाव जीतने से ही हाथ में आ सकता है न?"

कम्युनिस्टों का भविष्य

प्रश्न : "क्या मौजूदा तरीकों से हुकूमत कम्युनिस्टों को रोक सकती है? पाँच साल से हुकूमत कोशिश कर रही है, पर न कम्युनिस्टों का प्रचार कम हुआ, न जुल्म कम हुआ।"

विनोबा : "लेकिन इस काम में केवल कम्युनिस्ट ही तो नहीं हैं। डाकू भी हैं, गुंडे भी हैं। इन दूसरे लोगों से प्रजा दिन-ब-दिन तंग आती जाती है। जहाँ प्रजा तंग हुई, कम्युनिस्टों का काम खतम हुआ। जब कम्युनिस्ट और डाकू, दोनों डाका डालते हैं, तो डाकुओं की प्रतिष्ठा बढ़ती है, कम्युनिस्टों की घटती है; और कम्युनिस्ट फिर एक रोज ऐसे ही खतम हो जाते हैं।"

प्रश्न : "कम्युनिस्टों के तोड़-फोड़ के तरीकों के बावजूद जनता के मन में उनके लिए सहानुभूति क्यों है?"

विनोबा : "जब जनता देखेगी कि कम्युनिस्टों के साथ जाने से कोई लाभ नहीं, बल्कि नुकसान ही है, तो वह खुद ही उनका साथ छोड़ देगी।"

सही रास्ता

प्रश्न : "लेकिन आज तो स्थिति यह है कि मालगुजार रिआया को तंग करता है। कोर्ट में बरसों मामले चलते हैं। रिआया

मालगुजार के सामने टिक नहीं पाती। उससे बाज आने के लिए वह कम्युनिस्टों का सहारा लेती है। ऐसी हालत में क्या किया जाय ?"

विनोबा : "दूसरा और सही रास्ता दिखाया जाय।"

प्रश्न : "वह क्या ?"

विनोबा . "जनता में जाकर सेवा में जुट जाना और आवश्यकता पड़ने पर सत्याग्रह का सहारा लेना। लेकिन सत्याग्रही सबको निर्भय करके सत्याग्रह का सहारा लेता है। गांधीजी के बारे में सबको ऐसा विश्वास था और इसीलिए वे लोगों को अनुप्राणित कर सके थे। जिसे ऐसा दर्शन होगा, वही यह काम कर सकेगा।"

रात को देखा गया कि हमारे निवास के द्वार पर हथियारबंद पुलिस का पहरा बैठा है। डी० एस० पी० महोदय की आज्ञा से वे आये थे। उसी वक्त पत्र लिखकर पुलिस हटाने की प्रार्थना की। प्रार्थना को स्वीकार करते हुए डी० एस० पी० ने बताया कि यह हिस्सा कम्युनिस्टों के उपद्रवों से पीड़ित है। सरकार को अपनी जिम्मेदारी अदा करनी चाहिए। वे बड़े असमंजस में थे। लेकिन हम भी लाचार थे। विनोबाजी गहरी नींद सो रहे थे। उन्हें पूछ भी नहीं सकते थे और जानते थे कि विनोबाजी इस इन्तजाम को हरगिज पसंद नहीं करेंगे। और फिर उनके लिए कम्युनिस्ट भी कोई पराये तो थे नहीं, जो उनसे रक्षा का सवाल खड़ा होता। कम्युनिस्टों से, किसी से भी किसी भी समय उनके लिए रक्षा का सवाल ही नहीं था।

यस्मिन् सर्वाणि भूतानि आत्मैवाभूद्विजानतः।
तत्र को मोहः कः शोक एकत्वमनुपश्यतः॥ ...

वडियारम्
३१-३-'५१

सिंदी छोड़ो, हिंदी पढ़ो

वडियारम् यानी उदीयवरम् यानी उदयपुर। रास्ते मे नारसिगी भी पड़ता है। उदीयवरम् के पास ही छेगुंठा है। छेगुंठा यानी छेकुठा यानी छह तालाव। तीनों गॉवों का कुछ लेखा नीचे दिया गया है, जिससे पता चलेगा कि सिन्दी शराव ने कितने भयानक रूप में इस हिस्से को घेर लिया है।

सिंदी न पीनेवाले

गोव	वंजारे	ब्राह्मण	कलाल	वैश्य	कुल
नारसिंगी	४०	६	२०	४०	१०६
छेकुंठा	–	–	–	१०	१०
उदीयवरम्	–	–	–	३०	३०

पीनेवाले

	हरिजन	किसान	मुसलमान	वुनकर	कुल
नारसिगी	१५०	६१४	१००	३०	८६४
छेकुंठा	४०	२१५	१५	२०	२६०
उदीयवरम्	६०	३७०	२०	२०	४७०

	जुमला मकान	न पीनेवालों का प्रमाण फी सदी	पीनेवालों का प्रमाण पी सदी
नारसिंगी	१०००	१०	९०
छेकुंठा	३००	३।	९६॥।
उदीयवरम्	५००	६	९४

नारसिंगी के कार्यकर्ता उदीयवरम् आये थे। उन लोगों ने वहाँ हिन्दी की परीक्षाएँ भी शुरू की हैं। उन लोगों ने सन्देश माँगा। विनोबा ने सहसा कह दिया—'सिन्दी छोड़ो-हिन्दी पढ़ो'। युवकों ने 'मंत्र' की तरह उसे पकड़ लिया। रास्तेभर यही नारा लगाते हुए नारसिंगी लौटे।

ईसाई मिशन के बीच

उदीयवरम् में हम लोग एक ईसाई-मिशन में ठहरे थे। करीब पचीस बरस से वह मिशन यहाँ काम कर रहा है। अब तक दो हजार हरिजनों को ईसाई बना चुका है। यहाँ से नजदीक मेदक है। मेदक का मिशन काफी बड़ा माना जाता है। कलकत्ता का सबसे बड़ा है। मेदक का नम्बर दो। हमारे स्वागत के लिए जो लोग आये थे, उनमें मिशन के धर्मगुरु सबसे आगे थे। गाँववाले जो भजन गा रहे थे, उनमें 'विट्ठल' नाम की उपासना ज्यादा थी। जिधर-उधर विट्ठल की गर्जना ही सुनाई देती थी। इस तरफ, आदिलाबाद में भी विट्ठल नाम ही काफी गरजता था। जाहिर है कि महाराष्ट्र के सन्तों में से कोई अक्सर इधर आते रहे होंगे या इनमें से कोई पंढरपुर की यात्रा के लिए जाते रहे होंगे। जो भी हो, आज तो इनके यहाँ न केवल महाराष्ट्र का संत आया था, बल्कि सभी संस्कृतियों और धर्मों का योग्य तथा सम्यग् दर्शन रखनेवाला महान् योगिराज ही आया था।

प्रार्थना में विनोबा ने ईसाई-धर्म की प्रार्थना करने के लिए ईसाई-मिशन के धर्मगुरु से कहा और उन भाई ने समयोचित प्रार्थना की।

सत्पुरुषों में भेद नहीं

अपने प्रवचन में विनोबाजी ने ईसाई मिशन में ठहर सकने के बारे में अपनी खुशी जाहिर करते हुए कहा

"हमारे इस बड़े देश में बहुत प्राचीन काल से अनेक सत्पुरुष पैदा हुए। ईसाई लोगों के गुरु ईशु क्राइस्ट नाम के थे और वे बड़े सत्पुरुष थे। वैसे ही इसलाम धर्म के बड़े संस्थापक हो गये मुहम्मद पैगम्बर। वे भी एक बड़े सत्पुरुष थे। इस तरह के सत्पुरुष हर जाति में, हर कौम में और हर भाषा में पैदा हुए। परमेश्वर की मानवों पर यह कृपा है कि मानवों को बीच-बीच में राह बताने के लिए वह अच्छे मनुष्यों को भेजता है। इन दिनों हमारे देश में महात्मा गांधी इस तरह के सत्पुरुष हो गये। ये सारे जो सत्पुरुष हुए, उनमें कोई फर्क नहीं था। सबके दिल एक थे। उन सबका एक ही जाति थी। उन सबका एक ही धर्म था। परमेश्वर की भक्ति करना, मानवों पर प्रेम करना, यही उनका धर्म था।

आचरणरहित अभिमान

"अभी आप लोगों ने ईसाई-प्रार्थना सुनी। उसमें यही कहा गया है कि परमेश्वर प्रेममय है और उसकी भक्ति से हमारे हृदय प्रेममय और पवित्र हो जाय। लेकिन आश्चर्य की बात तो यह है कि मुहम्मद के अनुयायी और ईसा के अनुयायी तथा हिन्दू धर्म के अनुयायी आपस में प्रेम से नहीं रहते। यह बड़े आश्चर्य की बात है, इसमें कोई शक नहीं। अपने-अपने गुरु का नाम लेना तो अच्छी बात है। लेकिन उस गुरु के नाम का भी एक अभिमान बनाकर दूसरा में और अपने में फर्क पैदा करना बुरी बात है। गुरु ने जो शिक्षण दिया, उसका पालन तो हमने

किया नहीं। लेकिन अभिमान रखते है और दूसरो से द्वेष करते हैं। हम जानते हैं कि हिन्दू-धर्म ने यह शिक्षण दिया कि हरएक जीव मे आत्मा मौजूद है। लेकिन उधर हजारो जातियाँ बनाकर हम लोगो ने द्वेष बढा दिया। ईसा ने तो हमेशा प्रेम का सन्देश दिया। लेकिन ईसा के नाम का अभिमान रखनेवाले दुनियाभर मे जहाँ देखो वहाँ लडाइयाँ करते रहे। पिछले चालीस साल मे दो महायुद्ध हुए। दोनो ईसाइयो के बीच हुए। ईसा गुरु ने तो यह कहा था कि हमको अहिंसा रखनी चाहिए। किसीकी हिंसा नहीं करनी चाहिए। यानी जो गाधीजी की शिक्षा थी, वही ईसा की थी। लेकिन ईसाई लोगो ने जितने शस्त्रास्त्र बढाये, उतने सारी दुनिया मे किसीने नहीं बढाये। मुसलमान लोग अपने धर्म को इसलाम कहते है। इसलाम का अर्थ है शाति। अगर किसीको वे नमस्कार करते हैं, तो कहते हैं, "सलाम अलयकुम्" यानी आपको शाति रहे। लेकिन उन लोगो का जो वरताव रहा, उसे देखते हुए लोगो को शका होती है कि क्या इसलाम मे भी शाति की शिक्षा हो सकती है? इस तरह उन-उन गुरुओ का हमने अभिमान रखा, पर आचरण कुछ नहीं किया। और हमारा जीवन जैसा पहले विगडा हुआ था, वैसा ही आज भी है।

धर्म का संख्या-बल से कोई सम्बन्ध नहीं

"हम लोग बिगडे हुए थे, इसलिए हमको सुधारने के लिए ये गुरु हमारे पास आये। तो हम क्या करते हैं? हमारा जीवन तो सुधारते नहीं और कहते हैं कि दूसरे हमारे धर्म मे आ जायें। हर कोई यही देखता है कि मेरे धर्मवालो की सख्या बढे। कोई यह नहीं देखता कि धर्म तो एक आचरण की चीज होती

है, संख्या से उसका क्या मतलब है। मैंने सुना कि यहाँ के इर्दगिर्द के देहातों में तीन हजार ईसाई बन गये। अगर उनका जीवन सुधर गया है, तो मैं कहूँगा कि अच्छी बात है। लेकिन अगर नहीं सुधरा है, तो हिन्दू नाम के बदले ईसाई नाम होने से क्या फर्क हुआ? जैसे पहले सिंदी शराब पीते थे, वैसे ही अगर अब भी सिंदी शराब पीते रहे, जैसे पहले झूठ बोलते थे, वैसे अब भी बोलते रहे, तो सिर्फ नाम बदलने से क्या हुआ? समझना चाहिए कि जो मनुष्य झूठ बोलनेवाला है, दूसरे से द्वेष करनेवाला है, वह न हिन्दू है, न मुसलमान है, न ईसाई है। वह तो धर्महीन मनुष्य है। लेकिन हमारी दशा आज यह है कि हिन्दुओं में से अगर कोई बदमाशी करता है, गुण्डा है, तो उस गुण्डे का अभिमान हिन्दू लोग रखते हैं। अगर कोई मुसलमान गुण्डापन करता है, तो मुसलमान उस गुण्डे का अभिमान रखते हैं। ऐसे ही कोई ईसाई अगर दुर्जनता करता है, तो ईसाई लोग उसको ढाँकते हैं।

सब धर्मों का रहस्य

"यह बुरी दशा देखकर सब नौजवान लोग यह कहने लगे हैं कि हमें यह धर्म चाहिए ही नहीं। लेकिन वह भी उन लोगों की गलती है। धर्मवाले लोग धर्म पर नहीं चलते, यह कोई धर्म का दोष नहीं है। यह तो हम लोगों का दोष है कि हम धर्म की दीक्षा तो लेते हैं, लेकिन आचरण नहीं करते। मैं तो यही कहूँगा कि हमारे हिन्दुस्तान में ऐसी कोई जाति नहीं है, जिसमें अच्छे गुरु पैदा नहीं हुए, और जिसको कोई शिक्षण देने के लिए दूसरे गुरु की जरूरत है। यह कोई जरूरी नहीं है कि तेलुगु लोगों को ज्ञान देने के लिए मलबार के कोई सज्जन

आ जायँ या महाराष्ट्र के लोगों को ज्ञान सिखाने के लिए कोई पंजाबी गुरु आ जायँ। हरएक जमात में सत्पुरुष हुए हैं। मैं तो इतना ही कहूँगा कि अपने-अपने पड़ोस में जो सत्पुरुष हुए उनके कहने के मुताबिक चलो। और हरएक धर्मवाले और हर-एक गुरु के शिष्य अगर अपना जीवन सुधारेंगे, तो उनके जीवन को देखकर सब लोगों के दिल खुश हो जायँगे।

"इस तरह हरएक धर्मवाले अपने-अपने धर्म के शिक्षण का आचरण करके एक-दूसरे को मदद दे सकते हैं और सब मिल-कर दुनिया का आनंद बढ़ा सकते हैं। हम लोगों को ऐसा भेद-भाव नहीं रखना चाहिए कि फलाना ईसाई है या फलाना मुस्लिम है या फलाना हिन्दू है। परमेश्वर के सामने हम खड़े होंगे, तो वह हमको यह नहीं पूछेगा कि तुम ईसाई थे, हिन्दू थे या मुसलमान थे। बल्कि यह पूछेगा कि तुम सदाचार करने-वाले थे या दुराचार करनेवाले? कोई ब्राह्मण भी अगर दुरा-चार करता है, तो परमेश्वर को उसकी कोई कीमत नहीं है। और कोई चांडाल भी अगर भक्ति करता है, तो परमेश्वर का वह मान्य है।

"तो इस तरह एक-दूसरे पर प्यार करो, सच्ची राह पर चलो, यही कहने के लिए सब गुरु आये और यही शिक्षण हमको उनसे लेना है। आज आप लोगों के सामने यही बात मैं कहूँगा और यह आशा करूँगा कि यहाँ पर मैं आया, तो इतना भी लाभ आप उठा लें। मैं ईसाई-धर्म के रहस्य को अत्यंत प्रेम के साथ स्वीकार करता हूँ। सब धर्मों में जो अच्छी बात है, उसको मैं कबूल करता हूँ। हिन्दुओं में मैं अपने को हिन्दू मानता हूँ, ईसाइयों में मैं अपने को ईसाई मानूँगा और मुसल्मानों में मैं अपने को मुसलमान मानूँगा। यही मानो कि पाषाण और

पत्थर में जैसे कोई फर्क नहीं है—पाषाण यानी पत्थर और पत्थर यानी पाषाण—वैसे ही हिन्दू और मुसलमान और ईसाई यानी सज्जन, सत्पुरुष, इतना ही अर्थ है। तो यह सब धर्मों का रहस्य आप अपने दिल में रखिये और अपने जीवन को उन्नत बनाने की कोशिश कीजिये। आखिर में आप लोगों को. . . प्रणाम करता हूँ।"

ग्रामराज्य की दिशा में

: २८ :

तूपराण
१-४ '५१

तूफान का प्रकोप

पिछले दिनों तूफान ने कितना भयंकर नुकसान किया था, इसकी कल्पना कुछ तो भिसनूर आदि स्थानों को देखने से आती थी। कामारेड्डी से भिसनूर, रामायमपेठ, वडियारम् तथा तूपराण तक यानी करीब पन्द्रह-बीस मील, रास्ते के दोनों तरफ, दरख्तों के पत्ते झड़े हुए थे। तूपराण में तो ढाई सौ मकानों की छतें टूट गयी थीं। एक-एक घर के बीस-बीस, तीस-तीस हजार कवेलू टूट गये थे। कुछ मकान, जो बरसों पुराने थे, छत के टूटने पर बिलकुल दब गये थे। न छत दुरुस्त हो सकती थी, न मकान। मकान नया ही बनाने की जरूरत थी, जिसके लिए मकानवाले में सामर्थ्य नहीं था।

काम का हिसाब!

गाँव में चार हजार की बस्ती है। तीन हजार एकड़ जमीन है। "चार हजार लोगों में से दो हजार लोग तो भी काम करने लायक होंगे। आठ घंटे रोजाना के हिसाब से सोलह हजार घंटे का काम चाहिए। और ३६५ दिन के लिए चाहिए"— विनोबा ने कार्यकर्ताओं को गाँव का हिसाब समझाना शुरू किया। अब इन सोलह हजार घंटों के लिए क्या काम ढूँढ़ा जाय? खेती में इतना समय देने की जरूरत ही नहीं रहती। कितना ही समय बेकार जाता है। विनोबा ने पूछा: "गाँव की

चिन्ता करने के लिए तथा गॉव के सब लोगों को काम देने के लिए क्या गॉववाले कभी एकत्र होते हैं ? हमें परिवार के सुख-दुख की तरह गॉव के सुख दुख का विचार करने की आदत डालनी चाहिए। आप पूछते है कि काग्रेसवालों मे फ्रस्ट्रेशन (मायूसी–हताशा) क्यों है ? लेकिन मायूसी नहीं होगी, तो क्या होगा ? काग्रेसवाले किसी सेवा के काम मे जुट जायेंगे, तभी फ्रस्ट्रेशन रुकेगा। इस गॉव मे मुश्किल से पौन एकड जमीन फी आदमी है। दूसरा कोई उद्योग नहीं है। चार हजार जन-सख्या के लिए आज बाहर से कपडा आता है। अगर कोई दूसरे उद्योग यहॉ होते, तब भी मैं समझ सकता कि कपडा बनाने के लिए फुरसत नहीं। पर जब कोई दूसरा उद्योग भी नहीं है, तब क्यो नहीं अपना कपडा आप बना लेते ? फिर इतने लोगों की खाद जो व्यर्थ जाती है, उसका उपयोग क्यों नहीं कर लेते ? और काग्रेस-वाले क्यों नहीं इस काम मे अगुआ बनते ?"

विनोबा ने और एक बात सुझायी "गॉव में भजन-मडलियॉ हैं। आप लोग वहॉ जायॅ। भजनो का कार्यक्रम समाप्त होने पर वहॉ गॉव के सुख-दुख की चर्चा करें।"

अस्पताल चाहिए, तो श्मशान भी

प्रश्न "महाराज, हमारे यहॉ अस्पताल की भी बहुत जरूरत है।"

विनोबा "हॉ, क्योकि खाने को नहीं मिलता है, इसलिए लोग जरूर बीमार पडते होगे। तो अस्पताल भी चाहिए, और अस्पताल के साथ-साथ एक श्मशान भी चाहिए, क्योकि लोग बीमार भी पडेंगे और मरेंगे भी।"

हम दरिद्री नहीं

प्रश्न : "कांग्रेस के पास कोई प्रोग्राम नहीं है ?"

विनोबा : "कांग्रेस के पास क्या है, क्या नहीं, इसकी चर्चा करने के लिए हम नहीं आये हैं। हम कांग्रेस की तरह दरिद्री नहीं हैं। हमारे पास हमारी अपनी चीज है, जिसे लेकर हम आये हैं। हमारा अपना प्रोग्राम है, जिसे आप लोगों को देने आये हैं। और इन्सान के नाते इन्सानों से बात करने आये हैं। इसलिए सबसे जरूरी यह है कि गाँव में गाँव की दृष्टि से विचार शुरू होना चाहिए। इसीलिए हम कहते हैं कि जगह-जगह सर्वोदय-समाज की स्थापना होनी चाहिए। फिर गाँव के सुख-दुःख के बारे में सोचना शुरू होगा। चार हजार के गाँव में कम-से-कम सौ लोग तो पढ़े-लिखे होंगे। रात्रि और सवेरे की पाठशाला द्वारा गाँव की शिक्षा का काम शुरू होगा। खाद का सवाल है। एकाध खेत में प्रयोग करने पर औरों पर असर होगा। फसल का रूप देखेंगे, तो वे भी खाद का सदुपयोग करेंगे। चार हजार की बस्ती में चौबीस हजार की खाद होगी। यह तो सहज एक-दो बातें मैंने बता दीं। फिर कपास का सवाल है। कपड़े का है। तेल-घानी का है। मैं सिर्फ कुछ बातों का ही उल्लेख कर रहा हूँ। चार हजार लोग और तीन हजार एकड़ जमीन! कितना वक्त पड़ा है। और आज तो प्रजा बढ़ गयी। जमीन कम हो गयी। पर सौ साल पहले तो ज्यादा जमीन जोतकर भी लोग कपड़ा बना लेते थे—न सिर्फ अपने लिए बनाते थे, बल्कि विदेश भी भेजते थे। फिर आज यह मुमकिन क्यों नहीं ? केवल आलस के कारण! मुसलमानों के सौ मकान हैं। इन सौ मकानों की स्त्रियाँ गोशे में हैं और बेकार रहती हैं। क्यों नहीं वे अपना कपड़ा बना लेतीं ? इसमें मिल के कपड़े से तुलना करने की जरूरत

नहीं। जितना कपड़ा बना, उतना देश का उत्पादन बढ़ा ही समझिये।"

श्री गोपाल रेड्डी नामक सुयोग्य कार्यकर्ता को कमेटी बनाने का काम सौंपा गया। कमेटी बनी। उसका मार्गदर्शन करते हुए विनोबा ने तूपराण के मकानों की टूटी हुई छतों की चर्चा की। लाखों कवेलू की आवश्यकता थी। कुम्हार तो गाँव में केवल चार ही थे। वे कितने कवेलू बना सकते हैं? "नौजवान लोग कवेलू बना सकते हैं। कुम्हार को मदद दे सकते हैं। लोगों को कवेलू दे सकते हैं। तूपराण के नौजवान घरों के टूटे छप्परों के लिए कवेलू बनाने के काम में लग जायँ, तो तूपराण में क्रांति हो जायगी। यह आप लोगों की परीक्षा का समय है।"

सबके लिए कार्यक्रम देते हुए कहा :

"जो श्रम दे सकता है, श्रम दे।

"जो पैसा दे सकता है, पैसा दे।

"और कुम्हार कवेलू बना दें।

"भावना यह पैदा करनी है कि इस मौके पर सबको सहयोग देना है।"

गाँव के बारे में सोचने का अभ्यास

तूपराण के लोगों से प्रार्थना-प्रवचन में गाँव की कमेटी का जिक्र करते हुए कहा :

"यह कमेटी सेवा के लिए बनी है। इसे अधिकार कुछ भी नहीं है। कमेटी के लोग न किसी पार्टी के होंगे, न किसी राजकीय पक्ष से उनका कोई संबंध होगा। एक बात मैं आपसे कहना चाहता हूँ। आपके गाँव के बारे में अगर आप नहीं सोचेंगे, तो बाहर से कोई आकर आपके लिए सोचेगा और आपका भला करेगा, यह ख्याल गलत है। इसलिए आपको अपने-अपने परि-

वार के बाहर दृष्टि ले जाकर गाँव के बारे में सोचने का अभ्यास करना चाहिए। इस तरह के अभ्यास से सारा गाँव ही एक दिन एक परिवार बन जायगा। फिर जिस तरह माँ घर के सब लोगों को खिलाये बिना खाती नहीं, उसी तरह यह कमेटी भी देखेगी कि गाँव में कोई भूखा तो नहीं रहा, सबको खाना मिल चुका है या नहीं। यह देखकर ही वह खाना खायगी। इस तरह गाँव की जिम्मेदारी उठानेवाली यह कमेटी गाँव में गाँव का राज्य कायम कर सकती है।

"स्वराज्य का सच्चा अर्थ यही है कि हरएक गाँव अपने-अपने पाँवों पर खड़ा हो जाय और बलवान् बन जाय। जिस राज्य में और देश में बलवान् गाँव होंगे, वह राज्य और वह देश बलवान् होगा। लेकिन जहाँ के गाँव कमजोर होंगे, वह राष्ट्र और वह राज्य भी कमजोर होगा। हम लोगों के हाथ में स्वराज्य आया, इसका मतलब यही समझो कि हरएक गाँव का फिर से संगठन करने का मौका हमें मिला है। अभी तो इतना ही समझो कि सारे देश को स्वराज्य मिल गया है, लेकिन उसके अंदर के ग्रामों को अभी स्वराज्य हासिल करना बाकी है। स्वराज्य भी एक ऐसी अजीब चीज है कि मेरा स्वराज्य आप नहीं दे सकते। मेरा स्वराज्य मुझे ही हासिल करना होता है। मौके पर यह बन सकता है कि दूसरा मनुष्य मेरे लिए खाना लाकर मुझे खिलाये। लेकिन यह कभी नहीं बन सकता कि दूसरा मनुष्य मुझे स्वराज्य दे। जैसे हरएक मनुष्य स्वर्ग और नरक पाता है, तो अपने ही पुण्य से और पाप से पाता है, वैसे ही गाँव का पुण्य और गाँव का पाप गाँव को खुद भुगतना होगा और उसीसे गाँव की उन्नति या अवनति होगी।

"आज चर्चा हो रही थी, तब लोग सारे जिले की बात करते

लगे। मैंने कहा, जिले की बात मत करो। इस गाँव की बात करो। वे लोग कहते थे कि इस जिले में एक दवाखाना खोलने का विचार हो रहा है और उसके लिए पैसा भी इकट्ठा किया जा रहा है। मैंने कहा, ऐसा हो रहा है, तो अच्छी बात है। लेकिन उतने से इस गाँव की बीमारी दूर होनेवाली नहीं है। क्योंकि जिले के किसी बड़े शहर में वह दवाखाना खुल जायगा और जो लोग वहाँ तक पहुँच सकेंगे, उनकी सेवा वह दवाखाना करेगा। लेकिन अगर हमें गाँव के बारे में सोचना है, तो यही करना पड़ेगा कि गाँव में ही कुछ वनस्पतियाँ और दवाइयाँ बोनी होंगी। और ताजी वनस्पतियाँ लेकर गाँव के बीमारों को देनी होगी। अगर कोई यह कहे कि हम हरएक गाँव में दवाखाना खोलेंगे और वहाँ बाहर से डॉक्टर लायेंगे, जो गाँव की सेवा करेगा, तो मैं कहूँगा कि भाई, यह नयी बीमारी गाँव में मत लाइये। मैं तो यही कहूँगा कि गाँव की बीमारी का इलाज गाँव की वनस्पति से ही होना चाहिए। परमेश्वर की यह कृपा है कि उसने मनुष्य को जहाँ पैदा किया, वहीं उसको सारी सहूलियतें दी हैं। मनुष्य को भूख है, तो उसको खाना मिलने की योजना भगवान् ने की है। जहाँ मनुष्य को उसने भूख दी, वहाँ भूखनिवारण की अक्ल भी दी। वैसे ही जहाँ बीमारियाँ हैं, वहाँ उन्हें दूर करने का इलाज भी जरूर होना चाहिए। अगर यह आशा करें कि गाँव की बीमारी का इलाज हैदराबाद या मेदक के डॉक्टर करेंगे, तो उन डॉक्टरों का बोझ इस गाँव पर पड़ेगा। इसके सिवा और कुछ होनेवाला नहीं है।

"भाइयो, मैंने एक चीज आपके सामने विस्तार से रखी है। उस पर आप सोचें और ऐसा सर्वोदय-समाज अपने गाँव में बनायें।"

स्वराज्य अभी दूर है

: २६ :

कूचारम्
२-४-'५१

छोटा-सा किन्तु आदर्श गाँव। बड़ी सड़कें और साफ नालियाँ। गाँव के साथ ही, सवर्णों के मकानों से बिलकुल सटकर, हरिजनों के मकान। वैसे ही साफ-सुथरे भी। कुएँ पर आदर्श स्वच्छता। इर्द-गिर्द छोटी पहाड़ियाँ। शान्त, स्वच्छ, अनुकूल वातावरण। विनोबा का बुखार अभी गया तो था ही नहीं। चलना बुखार में ही हो रहा था। पसीना भी खूब निकला था। फिर स्नान, विश्राम आदि हुआ। शाम को भी बुखार था, बुखार में ही प्रवचन। आज सबने बहुत आग्रहपूर्वक कहा कि सभा में न आइयेगा। हम लोग सभा को सँभाल लेंगे। एक फर्लांग के करीब जाना था। पर बुखार में ही गये और इर्द-गिर्द के गाँवों से आये हुए सैकड़ों ग्रामवासियों से मिले। खुद ही प्रार्थना की—संस्कृत के श्लोक, फिर तेलुगु के भी। ओलों के कारण फसल नष्ट हो गयी थी, मकान टूट गये थे और इन सब के कारण लोगों के साधन-हीन जीवन में निराशा छा गयी थी। लेकिन इन सबके बावजूद सर्वोदय का सन्देश सुनने के लिए सैकड़ों लोग दूर-दूर से स्त्री-बच्चों सहित सभा में उपस्थित थे। पावन किसान के दर्शनों से पावन भावनाएँ उमड़ पड़ीं।

विनोबाजी ने कहा : "मैं सोचता था कि जब भगवान् की कृपा से ही बारिश होती है और भगवान् की कृपा से ही फसल आती है, तो ओले गिराने में भी भगवान् की ही मर्जी होगी। मैं

मानता हूँ कि इसमें भी उसकी दया काम करती होगी। वह देखना चाहता है कि हम लोग ऐसे मौकों पर एक-दूसरे की कैसी सहायता करते हैं। यानी वह हमारी परीक्षा लेना चाहता है। वह देखना चाहता है कि, जो दया वह हम पर नित्य बरसाता रहता है, उसका कुछ अंश हममें भी है या नहीं। अगर ऐसे मौकों पर हम एक-दूसरे की मदद नहीं करेंगे, तो परमेश्वर की दया के लायक नहीं होंगे।

मौका न खोयें

"होना यह चाहिए कि जहाँ आपत्ति है, वहाँ हम फौरन दौड़ जायें। और जो भी मदद पहुँचाई जा सकती हो, पहुँचायें। लेकिन हम लोग वह तो करते नहीं—करते यह हैं कि सरकार की तरफ देखते रहते हैं। और सोचते हैं कि सरकार क्या मदद करेगी। यह तो अपने धर्म को भूल जाना है। सरकार तो अपना काम जरूर करेगी, उसको करना भी चाहिए। लेकिन सरकार की शक्ति की एक मर्यादा होती है। लोक-शक्ति अमर्याद होती है। अगर हमारे घर में हमारा लड़का बीमार पड़ता है, तो हम सरकार की राह नहीं देखते। बल्कि हम फौरन हमसे जो बन सकता है, करने की कोशिश में लग जाते हैं। वैसी ही कौटुंबिक भावना हमारी समाज में होनी चाहिए। जैसे नदी में प्रवाह रहता है और पानी सतत बहता रहता है, वैसे हमारा प्रेम जिनको हमारी मदद की जरूरत है, उनकी तरफ बहना चाहिए। समझना चाहिए कि ईश्वर हमारी परीक्षा लेना चाहता है और उस परीक्षा में हम अगर पास नहीं होते हैं, तो एक बड़ा मौका खोते हैं। इस तरह नहीं सोचना चाहिए कि मैं मदद नहीं करूँगा, तो उससे क्या हानि होगी, दूसरे तो करेंगे। सोचना यह चाहिए कि दूसरे तो मदद करेंगे,

लेकिन ऐसे मौके पर मैं अगर मदद न करूँ, तो अपना मौका खोता हूँ।

स्वराज्य का लक्षण

"हमारे जीवन में दूसरों को मदद करने के जो भी मौके मिलें, वे बड़े भाग्य के अवसर हैं, ऐसा समझना चाहिए। तो हरएक को यही सोचना चाहिए कि इस मौके पर मैंने क्या मदद दी। यह नहीं सोचना चाहिए कि दूसरों ने क्या दी या सरकार ने क्या दी। दूसरे जो करना होगा वह करेंगे या नहीं करेंगे। वह उनका नसीब है। लेकिन मुझे तो मेरा काम करना ही है। ऐसी जाग्रति हमारे मन में होनी चाहिए। स्वराज्य का लक्षण ही यह है कि उसमें हरएक मनुष्य यही सोचता है कि मैंने इस देश के लिए क्या किया, मैं इस देश के लिए क्या करता हूँ। क्या मैं अपने देश के लिए, अपने पड़ोसियों के लिए, गरीबों के लिए आज कुछ करता हूँ? इस तरह जिस देश के सारे लोग सोचते हैं, उस देश में स्वराज्य है। जिस देश के लोग अपने कर्तव्य का विचार नहीं करते, बल्कि दूसरे क्या करेंगे, सरकार क्या करेगी, यही सोचते हैं, वे लोग परतंत्र हैं, पराधीन हैं, गुलाम हैं। स्वराज्य यानी हर-एक अपनी जिम्मेदारी महसूस करे।

"हमारे शरीर में आँख अपना काम करती है, कान अपना काम करते हैं। आँख यह नहीं सोचती कि कान क्या करते हैं। वह तो अपना कर्तव्य सोचती है। इस तरह हरएक अवयव अपने अपने कर्तव्य में जागरूक है, इसलिए अपनी देह में अपना राज्य चल रहा है। मान लीजिये कि किसीके कान बहरे हैं और आँखें तो अच्छी हैं। लेकिन आँखें यह सोचने लगें कि कान अपना काम नहीं करते, तो हम भी अपना काम क्यों करें, तो शरीर की क्या हालत होगी? जब हरएक इन्द्रिय दूसरी इन्द्रियों

की तरफ नहीं देखती है, बल्कि अपनी जिम्मेदारी को समझकर उसको पूरा करती है, तो यह शरीर अच्छा चलता है। लेकिन इस देश में लोगों की जबान से अक्सर मैं यह सुनता हूँ कि फलाना काम नहीं करता है, दूसरा काम नहीं करता है। पर वह खुद क्या काम करता है, इसके बारे में वह बोलता ही नहीं। यह देखकर मुझे लगता है कि स्वराज्य अभी बहुत दूर है।

लोग गरीब—सरकार गरीब

"एक तरह का स्वराज्य तो हमें मिल गया, लेकिन वह सच्चा स्वराज्य नहीं है। वह तो इतना ही हुआ कि दूसरे देश के पंजे से हमारा देश छूट गया। हमारे घर में शेर घुस गया था, उसको बाहर निकाल दिया। पर इतने से हमारा काम नहीं होता है। यह कोई नहीं कहेंगे कि भाई, शेर तो चला गया, अब रसोई करने की क्या जरूरत है। बल्कि यही कहेंगे कि अब शेर बाहर चला गया है, तो शुरू करो अपना घर का काम। हरएक गाँव, हरएक घर और हरएक मनुष्य को यह सोचना चाहिए कि स्वराज्य आया है, उसका मतलब मुझ पर जिम्मेदारी आयी है। गाँव में सैकड़ों काम ऐसे होते हैं, जो गाँववाले अगर एक-दूसरे को मदद दें तो खुशी से हो सकते हैं। अगर हरएक गाँव यही कहे कि हमको बाहर से मदद मिलनी चाहिए, तो हरएक गाँव को कहाँ से मदद मिलेगी? समझना चाहिए कि हम लोग गरीब है, तो हमारी सरकार श्रीमन्त कैसे हो सकती है? वह भी गरीब ही होगी।

तालीम याने उद्योग

"देखिये, मनुष्यों के हिसाब से अपने देश की सरकार की संपत्ति कितनी है, और अमेरिका की सरकार की संपत्ति कितनी

है। तो हमारी सरकार को हमें बलवान् बनाना है। यह दृष्टि हमारी प्रजा में जब आयेगी, तब वह खुद अपना काम करने लगेगी और स्वराज्य का अनुभव हम लोगों को होगा। हाँ, यह हो सकता है कि आपके गाँव में आप कोई उद्योग खड़ा करना चाहें और कोई जवान लोग उसके लिए तैयार हो जायँ। अब उनको कहीं से तालीम देकर लाना है, तो उस काम के लिए सरकार से आप मदद माँग सकते हैं। यानी सरकार की तरफ से तालीम की एक छोटी-सी मदद हमको मिल सकती है, और वह माँगनी चाहिए। लेकिन तालीम यानी उद्योग की तालीम। पढ़ना-लिखना तो गाँववालों को अपने गाँव में खुद कर लेना है। जो धंधे या उद्योग गाँव में मौजूद नहीं हैं, उनके लिए सरकार कुछ स्कॉलरशिप दे सकती है, और व्यवस्था कर सकती है। हर गाँव में जो खेती होगी, उसमें परिश्रम करना गाँववालों का ही काम रहेगा। लेकिन खेती में अगर कोई जन्तु बढ़ जाते हैं और उससे खेती नष्ट होती है, तो उसके लिए क्या इलाज करना, यह सरकार को पूछ सकते हैं और सरकार से ऐसी सलाह मिल सकती है। यही समझो कि जैसे अपने कुटुम्ब का सारा कारोबार हम खुद करते हैं और अपने पड़ोसियों से कभी थोड़ी मदद चाहते हैं तो मिल जाती है, उसी तरह एक गाँव को दूसरे गाँव की कुछ मदद मिल सकती है। लेकिन मुख्य जो काम करना होगा, वह गाँववालों को अपने पाँव पर खड़े होकर ही करना होगा। यह समझो कि मुझे अपने ही पाँव पर खड़ा होना है, अपने हाथ से काम करना है, अपनी आँखों से देखना है, अपने कानों से सुनना है। वैसे दूसरों को भी इन्हीं इन्द्रियों से काम लेना होता है। फिर भी हम एक दूसरे को कुछ मदद देते हैं। यानी हम पशु बनकर एक-दूसरे को

मदद नहीं करते, बल्कि अपने-अपने शरीर का पूरा उपयोग करके समर्थ बनते हैं और समर्थ बनकर दूसरों की मदद लेते हैं तथा दूसरों को मदद देते हैं। मैं यह नहीं कहता कि आपकी आँख से मुझे देखना है, आपके कान से मुझे सुनना है। मैं तो अपनी आँख से देखने की जिम्मेदारी मानता हूँ और आपकी मदद लेता हूँ। इसी तरह एक-दूसरे का एक-दूसरे पर थोड़ा-थोड़ा उपकार हो सकता है।

"इस तरह स्वावलम्बन और परस्पर सहकार, ये दो चीजें स्वराज्य में हरएक को सीखनी चाहिए। इन दोनों की अपनी-अपनी मर्यादा क्या है, यह हरएक को पहचानना चाहिए। एक मनुष्य पर भी यह चीज लागू है और गाँव पर भी लागू है।"

जमियतवाले भी यहाँ आकर विनोबाजी से मिल गये। पिछली बार विनोबाजी हैदराबाद आये थे, तब से आज की परिस्थिति में क्या फर्क है, इस बारे में उन्होंने वाकिफ किया। उस्मानाबाद जिले में तथा खास हैदराबाद शहर में मुसलमानों को मदद पहुँचाने की खास जरूरत उन्होंने बतायी। जमियतवाले चाहते थे कि मेवात में जैसे श्री सत्यमभाई विनोबाजी की ओर से काम कर रहे हैं, उसी तरह हैदराबाद में भी कोई उनका प्रतिनिधि रहे और इस काम को निबटा सके, तो अच्छा हो। लेकिन सत्यमभाई जैसे कार्यकर्ता सब जगह कहाँ से मिलें ?

अब हम हैदराबाद से कुछ ही दूरी पर थे। चौथे रोज हैदराबाद पहुँचना था। दो रोज यहीं विश्राम करने के लिए सबने कहा। हैदराबाद से मित्र लोग भी आये थे। बुखार की खबर जो पहुँच चुकी थी। परंतु निसर्गोपचार की श्रद्धा से और 'पंगुं लंघयते गिरिम्' की भावना से जिसका तन-मन व्याप्त है, उसे कौन समझाये ?

प्रार्थना ही मेरी मुख्य शक्ति : ३०

मेड्चल
३४'५१

आज हैदराबाद जिला शुरू होता है। अपार उत्साह से लोगों ने स्वागत किया। कूचारम् से मेड्चल आते समय, और इधर तूपराण से आगे जब छोटे बडे अनेक तालाब जगह-जगह पहाडियों के बीच, सडक से सटे हुए नजर आते हैं, तो 'सिमिटि सिमिटि जल भरहिं तलावा, जिमि सद्गुण सज्जन पहिं आवा'— तुलसीदासजी की यह पंक्तियाँ याद आये बिना नहीं रहतीं। इन तालावों में, सब तरफ से पानी को खींच लेने की कैसी अद्भुत शक्ति है! विनोबा कहते हैं "उनकी नम्रता के कारण ही यह संभव होता है। गुण-ग्रहण के लिए हम भी ऐसे नम्र क्यों नहीं बनते ?"

और तालाब के साथ-साथ तृण संकुल हरित भूमि का दर्शन भी होता था। इर्द गिर्द के छोटे-छोटे रास्ते तुलसीदासजी की अपेक्षा के अनुसार बहुत कुछ अदृश्य हो गये थे। पाखंडवाद के कारण कुछ समय के लिए यद्यपि सद्ग्रंथ, सद्विचार गुप्त हो गये हों, परंतु अब सर्वोदय का संदेश सूर्योदय की तरह लोक-मानस को प्रकाशित कर रहा था। हमारे चलने के लिए अब बडी सडक थी। सबके लिए सर्वोदय का राज-मार्ग भी बन गया था।

सृष्टि सौंदर्य को निहारते हुए, तरह-तरह के फूलों के वृक्षों को और बडी बडी सहज सुंदर विभिन्न आकृतियोंवाली चट्टानों को देखकर बडी प्रसन्नता अनुभव करते हुए विनोबा के साथ तेज

गति से सब चल रहे थे। बुखार के बावजूद भी, सबेरे का समय होने से विनोबा की चलने की गति खूब तेज थी।

मुकाम पर पहुँचते पर थोड़े विश्राम के बाद देखा तो बुखार नहीं था। आज दोपहर में न आये तो कितना अच्छा! साथियों ने मन ही मन प्रार्थना की।

पाकिस्तान और इसलाम

एक मुसलमान मित्र, नवाब मंजूरयारजंग बहादुर, मिलने आये। रजाकारों के जमाने में इन्होंने दाढसपूर्वक अपने ओहदे से इस्तीफा दे दिया था। विनोबाजी से कहने लगे: "आप हैदराबाद का हद में आये हैं। मेरा फर्ज है कि मैं आपसे मिलूँ।" बीमार होते हुए भी मिलने आये थे! कुछ देर तो स्वास्थ्य आदि की बातें हुईं। फिर विनोबा ने पूछा: "मुसलमानों की हालत अब कैसी है?"

"काफी सुधरी है। परंतु अब भी कुछ पढ़े-लिखे मुसलमान नेता बेचारों को भड़काते हैं। कुछ अखबार भी उर्दू के ऐसे हैं, जो पाकिस्तान का राग आलापते हैं। यही वजह है कि बीच-बीच में उदगीर, यादगीर, जालना जैसी घटनाएँ हो जाती हैं। इन्हें क्यों गोकुशी से बाज नहीं आना चाहिए? पर इन लोगों को भड़काया जाता है। यह खुदकुशी की वृत्ति है। यहाँ के मुसलमानों ने अब तक इस भूमि को अपनी भूमि माना ही नहीं है। इसलाम की सिखावन के ठीक खिलाफ उनका यह बर्ताव है। इसलाम मुसलमान से यह नहीं कहता कि तू खास एक मुल्क में या एक दायरे में बन्द हो जा। परन्तु पाकिस्तान लेकर मुसलमानों ने इसलाम के खिलाफ काम किया है। देश के दो टुकड़े करके उन्होंने इसलाम की सेवा नहीं की। पर बेचारे क्या करें? अभी उनकी उम्र भी क्या है? तेरह सौ साल तो हुए हैं। और फिर इस बीच जो

कुछ सीखा, वह तोड़ने-बिगाड़ने का ही। बनाने का काम कुछ इनसे बन ही नहीं पाया। हिन्दुस्तान के, और खासकर हैदराबाद के मुसलमानों के लिए मेरी निश्चित राय है कि इन्हें अपनी कोई अलग जमात या अंजुमन नहीं बनानी चाहिए। यहाँ के लोगों के साथ इन्हींकी संस्था में रहकर सेवा करनी चाहिए।"

इधर जल्दी, तो उधर भी जल्दी

दोपहर में कार्यकर्ताओं की सभा भी हुई। कम्युनिस्टों का प्रश्न, अनाज का प्रश्न तथा दूसरे अनेक प्रश्न निकले। एक भाई ने पूछा : "आपकी पैदल यात्रा का उद्देश्य क्या है?" विनोबा ने जवाब दिया "यही कि आप लोगों से मुलाकात हो। आपके दर्शनों के लिए मैं निकला हूँ। इतने सारे नारायण के रूप आप हैं। पैदल न आता, तो आपको कैसे देख सकता? देश का दर्शन कैसे पा सकता? परिस्थिति को कैसे समझ सकता? आपको भी इससे सबक लेना चाहिए। हर बात में वाहन की यह गुलामी किसलिए? क्या इसलिए कि मनुष्य को काम करने की बहुत जल्दी है? इधर जल्दी है, तो उधर परमात्मा भी जल्दी करता है। पहले लोग सहज ही १००-१०० साल जीते थे। अब तो ५०, ६० साल में ही कूच करना पड़ता है। अगर रोज कुछ-न-कुछ चलना हुआ, तो उम्र बढ़ेगी। रेल में पैसा खर्च करने के बजाय उतने पैसे की अच्छी गिजा लेकर खाना ज्यादा अच्छा है।"

क्रान्ति हो जायगी

प्रश्न : "कंट्रोल के बारे में आपकी क्या राय है? दो-दो माह तक लोगों को रेशन की दूकान से अनाज नहीं मिलता है। ऐसी हालत में क्या करना चाहिए?"

विनोबा "देहातो को बाहर से कुछ मिलना नहीं चाहिए, परन्तु देहातों से लूटा भी नहीं जाना चाहिए। आप लोग मजदूरों को मजदूरी पैसों में क्यो देते हैं? अनाज मे क्यों नहीं देते? मैं यहाँ रहूँ, तो मैं लोगों से कहूँगा कि इनके यहाँ काम पर मत जाओ। 'हमें खाना खिलाओ, तब हम काम पर आयेंगे।' ऐसी होनी चाहिए मजदूरों की प्रतिज्ञा। या तो आपको उन्हें खिलाना होगा या भूखों मरने देना होगा। क्या यह मजाक है कि दो माह भी किसी गॉव के लोग भूखों रह सकते हैं? क्रांति हो जायगी। पर मजदूरों को जगाये कौन? मजदूर से काम लेते हैं, तो बदले मे उसे पैसे के बजाय धान दीजिये। हमने बहुत दफा समझाया है कि पैसे से बचो। पैसे के फेर मे मत पड़ो। पैसा झूठा है। उसकी कोई कीमत नहीं। वह तो प्रेस में छपता है। दिन-ब-दिन उसकी कीमत घटती ही जा रही है। लोग कहते हैं, अनाज के भाव घटते हैं, बढ़ते हैं। यह उल्टी भाषा है। भाव तो पैसे का घटता-बढ़ता है। उसके फेर से देहातवालों को मुक्त करो। आप अपने गॉव को सॅभालना चाहते हों, तो इस तरह सॅभाल सकते हैं। बाकी न तो मैं आप हूँ, न आपकी सरकार। मैं तो आपका सिर्फ सलाहकार हूँ।

सामाजिकता का अभाव

"बात असल यह है कि हमारे लोग योजना बनाते नहीं, योजनापूर्वक कोई काम करते नहीं। योजना होती, तो हिन्दुस्तान गरीब क्यों होता? आपके गॉव मे पचायत है। क्या वह गाँव के उत्पादन के बारे में कभी सोचती है? हिन्दुस्तान मे परिवार के बाहर सोचने का रिवाज ही नहीं है। गॉव के बारे में सोचना ये लोग जानते ही नहीं। अभी ये लोग मानव-समाज में रहते ही नहीं हैं। परिवार की चिंता तो पशु भी करते हैं।"

कम्युनिस्ट किनका साथी ?

कम्युनिस्टों के संबंध में पूछे गये एक सवाल का जवाब देते हुए विनोबाजी ने कहा : "कम्युनिस्ट शहरवालों का, मिलवालों का, धनवालों का साथी है। गरीबों के धंधे उसके सामने छीने जा रहे हैं, पर वह उन्हें रोकता नहीं, रोकना चाहता नहीं।" कम्यून तो गाँव में स्थापित होगा न ? गाँव को कम्युनिस्ट स्वावलंबी बनायेगा, तभी वह कम्यून कायम होगा। लेकिन कम्युनिस्ट तो श्रीमंतों की संपत्ति हासिल करना चाहता है। श्रीमंतों के पास संपत्ति है कहाँ ? संपत्ति तो किसान के पास है। वह अपनी संपत्ति श्रीमंतो को बेचता है, इसलिए श्रीमंतो के पंजे मे आता है। आज उसके पास केवल खानेभर के लिए अनाज रहता है, और वह भी मुश्किल से। गाँव को राष्ट्र समझकर उसे संपूर्ण सुखी और स्वावलंबी बनाने के लिए शहरवालों से बचाने का इलाज करना चाहिए। कम्युनिस्ट तो शहरवालों का ही पक्षपाती है। वह गाँव मे भेदभाव निर्माण करता है, गाँव के कुछ लोगों को दूसरे कुछ लोगों का द्वेष करना सिखाता है।

देश की विपदा, इनकी संपदा

"आखिर कम्युनिज्म मे सबकी भलाई की ऐसी कौन-सी चीज है, जो सर्वोदय में नहीं है ? सर्वोदय सबको सब सुख सदा के लिए मुहैया कर देना चाहता है। कम्युनिज्म इससे ज्यादा क्या कहता है ? कोई कम्युनिस्ट यह बताये तो सही कि उसने दस-पाँच साल किसी गाँव की सेवा की और वहाँ की पैदावार में इजाफा कर दिखाया। वह तो इसके विरुद्ध चाहता है। गाँव का दुःख जितना ज्यादा बढ़े, उतना उसे आनन्द होता है। क्योंकि फिर उसे और एक मौका मिलता है सरकार के खिलाफ जनता को

भड़काने का। अब ये ओले गिरे हैं और तमाम लोग दुखी और परेशान हैं। पर कम्युनिस्ट खुश है कि सरकार के खिलाफ बोलने का मौका मिलेगा।"

शिरकत नापसंद कांग्रेस

प्रश्न :"कांग्रेस ने हमेशा गरीबों की सेवा का दावा किया। पर आज जब हम जनता में जाते हैं, तो लोग पूछते हैं कि कांग्रेस अपना दावा पूरा क्यों नहीं करती ? क्या जवाब दिया जाय ?"

उत्तर : "दावा बहुत अच्छा है। पर दावे के अनुसार अगर कांग्रेस काम करे, तो बिना जवाब के जवाब दिया जा सकता है। आजकल तो कांग्रेसवाले सर्वोदय का भी नाम लेने लगे हैं। पर काम तो कुछ नहीं करते। एक रुपयेवाले मेंबर बनाने से ज्यादा काम उनके पास कुछ नहीं है। इसलिए मुझे भी कांग्रेस के बारे में चिंता हो रही है। कांग्रेस पुण्यवान् संस्था है और उसका पुण्य अभी क्षीण नहीं हुआ है। इसलिए प्रतिष्ठा बाकी है। आप लोग कपड़े के परदों पर 'स्टेट कांग्रेस जिंदाबाद' लिखते हैं। पर जिस कपड़े पर लिखते हैं, वह कपड़ा तो मुर्दा है। फिर स्टेट कांग्रेस जिंदाबाद कैसे हो। परंतु कांग्रेस की बात छोड़ दीजिये। वह आज सत्ता के पीछे पड़ी है। जिस तरह अल्ला शिरकत पसंद नहीं करता, कांग्रेसवाले भी किसी दूसरे की शिरकत (भागीदारी) पसंद नहीं करते। इसलिए वे सबका सहयोग लेकर काम नहीं कर सकते। परंतु यहाँ ऐसे भी लोग होंगे, जो गाँव की सेवा करना चाहते हैं, लेकिन कांग्रेस में नहीं हैं। वे सब मिलकर गाँव की सेवा में क्यों नहीं लग जाते ?"

प्रार्थना-प्रवचन में विनोबाजी ने कहा :

"८ मार्च से मैं वर्धा से हैदराबाद के लिए पैदल यात्रा में निकल पड़ा हूँ। कुछ रोज तो हमारा काम ठीक चला। लेकिन

चार दिन पहले मुझे बुखार आ गया, जो लगातार चार दिन रहा। हमारे साथी सोचने लगे कि क्या कुछ रोज विश्रांति लेनी चाहिए। मैंने कहा कि नहीं, हम रोज के नियम के मुताबिक चलते ही रहेंगे। क्योंकि मुझे विश्वास था कि भगवान् बीच में थोड़ी परीक्षा लेना चाहता है। इसके सिवा और कुछ नहीं है। परमेश्वर हमेशा भक्त की बीच-बीच में सत्त्व-परीक्षा लिया करता है। लेकिन जैसे वह परीक्षा करता है, वैसे वह शक्ति भी देता है। आखिर श्रद्धा रखकर हम चलते रहे और आज मैं देखता हूँ कि बुखार चला गया। अब लगता है कि जैसा हमने पहले तय किया था, वैसे दो-तीन रोज के अन्दर शिवरामपल्ली के सर्वोदय-सम्मेलन में पहुँच जायेंगे। लेकिन यह भी मनुष्य की कल्पनामात्र है। भगवान् ने जो चाहा होगा, वही होगा। मैं वर्धा से निकला, तब मन में भगवान् का नाम लेकर ही निकला। और आज भी उसीके बल पर मेरा सब काम चलता है। मैं देखता हूँ कि मनुष्य में अपना निज का कोई बल नहीं है। अगर वह भगवान् पर श्रद्धा रखकर चलता है, तो भगवान् कुछ बल देता ही है।

इन्शाल्ला

"मैंने कुरान में एक जगह एक किस्सा पढ़ा था। वह इस समय मुझे याद आ रहा है। बड़ा दिलचस्प किस्सा है। एक रोज कोई बात मुहम्मद पैगम्बर से पूछी गयी, तो उन्होंने कहा कि "हाँ, मैं उसे करूँगा।" लेकिन उन्होंने जैसा वचन दिया था, वैसा वे कर नहीं पाये। तब उनसे पूछा गया कि "आपने वादा किया था, वैसा आप क्यों नहीं कर पाये?" तो मुहम्मद पैगम्बर ने जवाब दिया कि "अगर भगवान् चाहेगा तो" इतना कहना मैं भूल गया और "मैं करूँगा" ऐसा अपने नाम से मैंने कहा,

इसलिए वह काम नहीं हो पाया। इसलिए मुसलमानों में "इन्शाल्ला" यानी अगर भगवान् चाहेगा तो, ऐसा बोलने का रिवाज पड़ा है। लेकिन सिर्फ बोलने की यह बात नहीं है, मन में वैसी भावना भी होनी चाहिए। अपने जीवन की कोई भी कृति हम भगवान् की इच्छा के बगैर नहीं कर सकते। वह चाहता है, तभी वह बनती है।

परमेश्वर की मदद माँगो .

"अपने निज के काम में अगर हम इतने असमर्थ हैं, तो जहाँ हम देश का काम करने जाते हैं, वहाँ *भगवान् की इच्छा* के बिना कैसे होगा ? इसलिए जब कभी मैं देश के काम के बारे में सोचता हूँ, तो मुझे परमेश्वर के स्मरण का महत्त्व उत्तरोत्तर अधिक ध्यान में आता है। स्वराज्य-प्राप्ति के बाद हमारे देश के सामने बहुत बड़ी समस्याएँ खड़ी हो गयीं। उनमें से कुछ समस्याओं का हल तो मिल गया, लेकिन बहुत सारी वैसी की वैसी मौजूद हैं। और मेरा तो विश्वास हो गया है कि बिना परमेश्वर की मदद माँगे और लिये इन कठिन समस्याओं को हम अपनी शक्ति से हल नहीं कर सकेंगे। मुझे एक भाई ने पूछा : "आपको जो कहना है, वह आप कोई स्वतन्त्र व्याख्यान में क्यों नहीं कहते। प्रार्थना के साथ उसको क्यों जोड़ देते हैं ?" मैंने कहा कि प्रार्थना ही एक मुख्य शक्ति मेरे पास है। इसलिए सबके साथ में उस प्रार्थना को करना चाहता हूँ। और जब मैं प्रार्थना के बाद थोड़ा बोलता हूँ, तो उसमें प्रार्थना की शक्ति का ही जो परिणाम होता है, सो होता है। बाकी मेरे निज के शब्दों में कोई खास शक्ति है, ऐसा मैंने अभी तक अनुभव नहीं किया है। यह एक बात, जो इन दिनों बहुत दफा मेरे मन में आयी, वह आपके सामने रख दी।

मानसिक शुद्धि की अनिवार्यता

"एक दूसरी बात कहना चाहता हूँ। कल कार्यकर्ताओं के साथ बात हो रही थी, तब मैंने पूछा कि पोतना का भागवत आप लोगों में से कितने लोगों ने पढ़ा है। वहाँ जो भाई इकट्ठे हुए थे, उनमें से सिर्फ एक ने कहा कि मैंने पढ़ा है। बाकी सबने नहीं पढ़ा था। जो लोग वहाँ थे, वे सब पढ़े लिखे थे और कुछ-न-कुछ काग्रेस का काम करनेवाले थे। तो मुझे आश्चर्य हुआ कि तेलुगु में जो किताब सबके दिलों पर असर करती है, यानी जो जनता की किताब है, उसको इन लोगों ने कैसे नहीं पढ़ा। फिर मैंने उनसे प्रार्थना की कि हर रोज आपको उस किताब का कुछ-न-कुछ अभ्यास जरूर करना चाहिए। हमारे शरीर को जैसे रोज साफ करने की जरूरत होती है, वैसे हमारे मन को भी रोज शुद्ध करने की आवश्यकता होती है। इसलिए सतों के वचनों का कुछ परिचय रोज रखना और उनका चिन्तन-मनन करना बहुत लाभदायी होता है। इस तरह अपने मन की शुद्धि का काम कार्यकर्ता नहीं करेंगे, तो उनकी कर्तृत्वशक्ति दिन-ब-दिन बढ़ने के बजाय क्षीण होती जायगी। इसके अलावा जिस किताब ने जनता में काम किया है और जनता के दिलों पर जिसका असर है, उस किताब से हमारे कार्यकर्ताओं का अगर परिचय न हो, तो वे ग्रामों में क्या सेवा कर सकेंगे? ग्रामों की सेवा अगर हम करना चाहते हैं, तो ग्रामवासियों की पवित्र भावनाओं के साथ हमारे दिल का सम्बन्ध जुड़ जाना चाहिए। मुझे लगा कि यह चीज मैं आप लोगों के सामने भी रखूँ।

स्त्रियाँ : सत्याग्रह-शक्ति का भंडार

'आखिर में यहाँ जो बहनें इकट्ठी हुई हैं, उनसे एक-दो बातें कहना चाहता हूँ। हैदराबाद राज्य में जब से मैंने प्रवेश किया

हमारी लड़ाई के औजार : ३१ :

बोलाराम
४-४-'५१

संयोगवश आज डेरा प्राकृतिक चिकित्सालय में ही था। बुखार के बावजूद पिछले कुछ दिनों से विनोबाजी की पद-यात्रा जारी थी। उनकी अपनी प्राकृतिक चिकित्सा ही चलती थी। ज्ञानपूर्वक भी और श्रद्धापूर्वक भी। आज डेरा भी प्राकृतिक चिकित्सालय में रहने के कारण एतद्विषयक कुछ प्रकट चिंतन होना स्वाभाविक था।

प्रस्तुत चिकित्सालय के संचालक श्री पारसमलजी जैन अपना अन्य व्यवसाय सँभालकर भी इस सेवा-कार्य मे प्रेम और निष्ठा के साथ तन्मय थे। एक एनिमा पॉट से कार्यारंभ हुआ था और अब संस्था काफी साधनसम्पन्न हो गयी थी। प्रातः पाँच बजे से चिकित्सा का आरम्भ होता था। पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियाँ अधिक लाभ देती दिखाई देती थीं। प्रार्थना-प्रवचन मे विनोबा ने कहा :

"हम लोग वर्धा से हैदराबाद पैदल यात्रा में जा रहे थे, और आपके गाँव का मुकाम हमने नहीं सोचा था। लेकिन यहाँ पर एक भाई प्राकृतिक चिकित्सा का काम कर रहे हैं। उनका आग्रह था कि उनके स्थान में हम एक दिन बितायें। उनके काम का अभी आरम्भ हुआ है, ऐसा तो नहीं कह सकते। लेकिन जो थोड़ा समय बचता है, उसमें प्राकृतिक चिकित्सा का काम वे कर लेते हैं। मैंने उनकी बात मान ली। क्योंकि

सर्वोदय की जो जीवन-योजना है, उसमें कुदरती इलाज के लिए एक विशेष स्थान है।

"इस मुसाफिरी में भी हम लोगों को उसके अनुभव आये हैं। चार दिनों से मुझे बुखार आता था। और अक्सर ऐसे मामूली बुखार में बिना दवाओं के केवल आहार के फर्क से जो हो सकता है, वह करने का हमेशा मेरा प्रयत्न रहता है। और हमारे गुरु ने हमें सिखाया है कि परमेश्वर का नाम लेना यही सबसे बड़ी दवा है, जिसको अनेक महापुरुषों ने आजमाया है। तो हम भी उस पर श्रद्धा रखते हैं। हमने मुसाफिरी जारी रखी। चलना जैसे रोज होता था, वैसा होता रहा। कुछ आहार में फर्क कर लिया। बाकी सारा कार्यक्रम जैसे का वैसा जारी रहा। चार दिन बुखार सतत आया। मैं तीन दिन की कल्पना करता था, लेकिन एक दिन वह और आगे बढ़ा। चार दिन के बाद वह गया। इस तरह भगवान् कसौटी करता है और अनुभव देता है कि साधारण बीमारी में कोई दवा वगैरा की जरूरत नहीं रहती। जीवन में थोड़ा परिवर्तन कर लिया, आहार में फर्क किया, कुछ विश्रान्ति पचनेन्द्रिय आदि को दे दी कि काम चल जाता है।

डॉक्टर और रोगों की वर्धमान मैत्री

"मामूली बीमारियों में इस तरह काम हो जाता है। और जो विशेष बीमारी होती है, उस पर कोई खास इलाज अभी किसीको सूझा नहीं है। तो उसके लिए केवल परमेश्वर के नाम का ही आधार रहता है। इस तरह से दवाइयों के लिए बहुत कम अवकाश है। लेकिन आजकल हम देखते हैं कि जिधर जाओ, उधर डॉक्टर भी बढ़े हैं और रोग भी बढ़े हैं। और दोनों एक दूसरे के शत्रु नहीं दीखते, बल्कि मित्र दीखते हैं। क्योंकि दोनों

बढ़ते चले जा रहे हैं। एक बढ़ता और दूसरा घटता, तो हम कह सकते थे कि वे एक दूसरे के शत्रु हैं। लेकिन जहाँ डॉक्टर मजे में बढ़ते जाते हैं और रोग भी मजे में बढ़ते जाते हैं, वहाँ यही अनुमान होता है कि दोनों मित्र हैं। और दोनों हाथ में हाथ मिलाये चलते हैं। यह हिन्दुस्तान के लिए बड़ा खतरा है कि हिन्दुस्तान की जनता को परदेशी औषधियों का आधार लेना पड़े। भगवान् ने अन्न हमारी भूमि में पैदा किया, तो हमारे रोगों का इलाज भी यहीं से होना चाहिए। लेकिन हर शहर में आप देखेंगे कि कोई छोटा-सा भी रोग हुआ, तो फौरन दवाई देते हैं और वह दवा परदेशी होती है। मानो यहाँ ऐसी कोई वनस्पति भगवान् ने नहीं रखी या यहाँ की कुदरत में ऐसी कोई शक्ति नहीं रखी कि एक छोटा-सा रोग भी दूर हो सके। लेकिन एक गुलामी जहाँ जाती है, वहाँ वह अपने साथ दूसरी कई गुलामियों को लाती है। तो जो राजकीय गुलामी, अंग्रेजों की सत्ता, हम लोगों पर चली वह तो गयी, लेकिन अपने साथ-साथ दूसरी कई गुलामियाँ जो वह लायी थी, वे अभी नहीं गयीं।

हमारा वैद्यशास्त्र

"वास्तव में हमारे देश में वैद्यशास्त्र का काफी अच्छा विकास हुआ था। हमारे एक मित्र हैं, जो हमेशा कहते हैं कि हिन्दुस्तान की भूमि में विद्याएँ तो बहुत प्रकट हुईं, लेकिन दो विद्याएँ अद्वितीय हैं। एक वेदान्त-विद्या और दूसरी वैद्य-विद्या। मैं इस चीज को वैसा कबूल नहीं करता। यह मैं कबूल करता हूँ कि यहाँ जो वेदान्त-विद्या प्रकट हुई, उसकी बराबरी करनेवाली विद्या दुनियाभर में कहीं नहीं हुई। लेकिन यहाँ की वैद्य-विद्या अद्वितीय है, ऐसा तो मैं नहीं कह सकता। दूसरे देश में भी काफी अच्छी

वैद्य-विद्या चली है। यूनान में चली है, अरबिस्तान में चली है। आजकल पाश्चात्य देशों ने दवाइयों में और शरीर के संशोधन में बहुत तरक्की की है, यह मानना पड़ेगा। तो हमारे देश में जो वैद्यशास्त्र निकला, वह कोई अद्वितीय था या परिपूर्ण था, ऐसा तो मैं दावा नहीं कर सकता। लेकिन फिर भी हमारे देश के लिए जो दवाइयाँ चाहिए, वे यहीं की वनस्पतियों से मिलनी चाहिए। और यहाँ का वैद्यशास्त्र यहीं की वनस्पतियों के बारे में सोचता है, इतनी विशेष बात हमारे लिए है। अर्थात् वैद्यशास्त्र के लिए यह कोई आश्चर्यकारक बात तो थी नहीं। क्योंकि हमारा जो वैद्यशास्त्र यहाँ पैदा हुआ, वह यहाँ की वनस्पतियों के बारे में न सोचे, तो और कौन-सी वनस्पतियों के बारे में सोचेगा? इसलिए यहाँ की वनस्पतियों का संशोधन उसने किया। और वही हमारे काम का है। लेकिन वह कच्चा है। पूरा नहीं है। हमारी बहुत सारी पुरानी वनस्पतियाँ ऐसी हैं, जिनको हम पहचानते नहीं हैं, जिनका नाम भी हम नहीं जानते। तो यह सारा संशोधन हमें करना है।

पिण्ड ब्रह्मांड

"इस संशोधन में हमें जितना समय लगेगा, उतना हम दें; लेकिन साथ-साथ हमें यह भी नहीं भूलना चाहिए कि परमेश्वर की लीला और उसकी योजना ऐसी है कि वह हर किसीको पूरी तरह से स्वावलंबी बना देता है। ज्ञान के साधन हरएक को दिये हैं, अन्नपचन की शक्ति हरएक को दी है, परिपूर्ण शरीर हरएक को दिया है, हवा-पानी हरएक के लिए मौजूद है। तो ज्वर का इलाज किस तरह करें, यह तरीका भी हरएक को दिया हुआ ही होना चाहिए। और वनस्पतियों का बहुत आधार भी लेने की आवश्यकता नहीं होनी चाहिए। मिट्टी का उपचार हो सकता

है, पानी का उपचार हो सकता है, उत्तम हवा का उपचार हो सकता है, प्रकाश का उपयोग हो सकता है। इस तरह वेदों मे सृष्टि देवता की उपासना अनेक प्रकार से बताई है और कहा है कि रोगो के इलाज मे पानी का कितना उपयोग है, सूर्य-किरणो का कितना उपयोग है। यह सब वेदो में भरा पड़ा है। हम अगर ज़रा भी सोचें, तो ध्यान में आ जायगा कि हमारा सारा शरीर इस ब्रह्मांड का बना है। शरीर में जो भी चीज भरी है, वह सारी ब्रह्मांड मे मौजूद है। बाहर पानी है, तो शरीर मे भी रक्त आदि भरा है; बाहर सूर्यनारायण है, तो शरीर मे ऑख है और प्रकाश है; बाहर वायु है, तो शरीर मे सॉस है। इस तरह जो चीज बाहर है, वह शरीर मे भी मौजूद है। यहॉ तक कि बाहर जो सोने की और लोहे की खाने हैं, वे भी हमारे शरीर मे मौजूद है। यानी हमारे रक्त आदि मे जो धातु पड़े हैं, उनमे लोहा भी है, तॉबा भी है और सुवर्ण भी है। ये सारी चीजें जो ब्रह्मांड मे है, वे पिण्ड मे भी पड़ी हैं। शरीर ही जब ब्रह्मांड का बना हुआ है, तो पृथ्वी, अप, तेज, वायु, आकाश, इन चीजों का खूबी के साथ निर्भयतापूर्वक प्रेम से अगर हम उपयोग करें, तो बहुत सारे रोगो का इलाज हो सकता है।

कुदरत की शक्ति

"इस तरह की प्राकृतिक चिकित्सा की विद्या गॉव-गॉव मे पढ़ाई जानी चाहिए। अगर गॉव के बारे मे हम यह सोचे कि हर गॉव में दवाखाना बने, तो एक तो बनाना अशक्य है; और दूसरे, अगर बना भी लिया और सारी बाहर की वनस्पतियॉ वहॉं आने लगीं, तो गॉव को लूटने का एक नया रास्ता खुल जायगा। दूसरे रास्ते पहले ही बहुत बन चुके हैं। उनमें यह और एक इजाफा अगर हुआ, तो गॉव के रोग कम नहीं

होंगे, बल्कि बढ़ेंगे। क्योंकि लोगों का आहार ही क्षीण हो जायगा। तो यह गॉव का इलाज नहीं हो सकता कि बाहर की वनस्पतियाँ यहाँ आयें और बाहर का डॉक्टर यहाँ काम करे। हो यही सकता है कि गॉव मे जो वनस्पतियाँ पैदा होती है, उनका उपयोग सिखाये। और बिना वनस्पति के भी कहीं एकाध फाका कर लिया, कहीं कुछ पानी का उपचार किया, कहीं एनिमा ले लिया। इस तरह अपना रोग कैसे दूर हो सकता है, यह तरीका लोगों को सिखाया जाय। अगर यह सिखाया जायगा, तो आप देखेंगे कि कम-से-कम खर्च मे लोगों की अच्छी-से-अच्छी सेहत बन जायगी। क्योंकि कुदरत में ऐसी शक्ति है कि वह शरीर को सुधारने के साथ-साथ कोई दूसरा बिगाड़ उसमे पैदा नहीं करती। औषधियो से यह होता है कि एक रोग दूर हुआ, ऐसा आभास जहाँ होता है, वहाँ फौरन दूसरा रोग हो जाता है। इस तरह रोगों का सिलसिला लगा रहता है। और जहाँ एक दफा किसी घर मे बोतल का प्रवेश हुआ कि वह बोतल उस घर से निकलती ही नहीं। उस मनुष्य को खतम करती है, लेकिन वह बाकी रहती है। यह हालत दवाइयों के कारण होती है

शहरों के लिए भी

"तो देहातों के लिए इन दवाइयों पर आधार रखना खतरनाक है। और शहरों के लिए भी वही चीज है। आखिर शहरों मे रोग क्यों बढ़े? इसलिए कि शहर के लोग ठीक व्यायाम नहीं करते। अपने घरों में बैठे रहते हैं। इसलिए अच्छी हवा उनको नहीं मिलती। खूब कपड़े पहनते हैं, इसलिए सूर्यकिरणों से वंचित रहते है। इस तरह परमेश्वर की दी हुई देनों का लाभ उठाने से वंचित रह जाते हैं। घर भी ऐसे होते हैं कि

जिनमे कुदरत से दूर रहना पड़ता है। काम भी ऐसा कि कुदरत के साथ कोई ताल्लुक नहीं। फिर रात को जागेंगे, सिनेमा देखेंगे, खराब किताबें पढ़ेंगे। इस तरह अपने शरीर को और मन को बिगाड लेते हैं, तो रोग बढ़ते हैं। और उनके उपचार के लिए फिर दवाइयाँ लेते हैं। डॉक्टर के पास जाते है। ऑपरेशन करवाना पडता है। कई तरह इंजेक्शन चाहिए। फिर मासादि चाहिए, निपिद्ध वस्तु का सेवन चाहिए। जो चीजे साधारणतया कोई खाता नहीं है वे खानी चाहिए, दूर-दूर से महँगी चीजें खरीदनी चाहिए। यह सारा उसके पीछे आता है। और वह शहरवाला सब तरफ से क्षीण हो जाता है। तो शहरों के लिए भी प्राकृतिक चिकित्सा ही उत्तम आधार है।

खुद सीखें

"अब प्राकृतिक चिकित्सा के बारे मे यहाँ विचार करूँ, तो उसमे बहुत समय लगेगा। विचार बहुत है और अनुभव भी कुछ लिया है। एक वस्तु सिर्फ कहना चाहूँगा। यहाँ जो भाई काम कर रहे हैं, उनको आप मौका दीजिये। वे अपना धधा करते हैं और बचे हुए समय मे यह काम करते हैं। लेकिन आप अगर उनको पूरा काम देंगे, तो वे वह धंधा भी छोड देंगे, और इसी काम मे लग जायेंगे। उनका उपयोग कीजिये और उस विद्या को खुद सीखिये, ताकि उन पर भी आधार रखने का मौका न आवे। और आपमे से हरएक मनुष्य कुदरती उपचार मे प्रवीण बन जाय। उसका ज्ञान हासिल करने के लिए बहुत ज्यादा समय की जरूरत नहीं है। हम क्या खाते हैं, किस चीज मे क्या परिणाम होता है, इस तरह का आत्म-परीक्षण करना अगर मनुष्य सीख जाय और थोड़ा सयम सीख ले, तो यह विद्या

हासिल हो सकती है। तो आप इन भाई से वह विद्या हासिल करें, यह आपको मैं सूचना करना चाहता हूँ।

कुदरती उपचार मे खेती का स्थान

"अब एक बात और। जहाँ प्राकृतिक उपचार का स्थान होता है वहाँ हॉट वाटर बेग रखते हैं, एनिमा रखते हैं, और भी कई तरह के ऐसे औजार रखते हैं। ये छोटे-छोटे औजार बडे काम के होते हैं और वे मनुष्य को मौके पर जो राहत देते हैं, वैसी राहत कभी कभी वनस्पतियों से भी नहीं मिलती। जरा एनिमा लिया तो जो पेट दुखता था, उसमे बहुत फर्क पडा। दूसरे बहुत-से उपचार किये गये, लेकिन पेट पर कोई असर नहीं हुआ। यह घटना तो हमने कई बार देखी है और अनुभव किया है। तो ये छोटे औजार काम के हैं। लेकिन मेरा मानना है कि इनके साथ-साथ कुदरती उपचार का सस्था के पास एक खेत भी होना चाहिए और मरीजों को उनकी सेहत देखकर खेत मे कुछ काम भी देना चाहिए।

हमारी क्रांति के नये औजार

"कुदाली, फावड़ा, चरखा आदि औजार भी कुदरती उपचार के औजार हैं, ऐसा मेरा दावा है। कोई कहेगा कि यह तो एक पागल मनुष्य आया है। जहाँ भी कोई बात निकलती है, तो कुदाली, फावडा, चरखा लाता है। उसको पूछते हैं कि भाई, हिन्दुस्तान की पैदावार कैसे बढेगी, हिन्दुस्तान लक्ष्मीवान कैसे बनेगा, तो कहता है कि कुदाली लो, फावडा लो, चरखा लो। उसको पूछते हैं कि तालीम किस तरह दी जाय, तो कहता है कि तालीम का जरिया कुदाली, फावडा और चरखा है। अब आज तो यह भी बोलने लगा कि कुदरती उपचार के औजार

कुदाली, फावड़ा और चरखा हैं। हर चीज के बारे में ऐसा ही कहता है। तो यह पागल है, ऐसा लोग कह सकते हैं। लेकिन मैं लोगों से कहूँगा कि मेरा पागलपन इतने में खतम नहीं हुआ है। मैं और आगे बढ़ गया हूँ। मैं यह भी कहता हूँ, और कई मर्तबा कह भी दिया है कि हमको जो लड़ाइयाँ लड़नी हैं, उनके औजार भी कुदाली, फावड़ा और चरखा हैं। सामाजिक क्रांति हमें करनी है। राजकीय क्रांति भी हमें करनी है। कोई यह न समझे कि हिन्दुस्तान में आज जो राज्य तंत्र चल रहा है, वह आदर्श है। सर्वोदय की पद्धति में जो राज्य-तंत्र आयेगा, उसमें और आज के तंत्र में बहुत फर्क होगा। तो हमें राज्य-तंत्र भी बदलना है। उसके लिए जो लड़ाइयाँ लड़नी हैं, उन लड़ाइयों के औजार भी मेरे मन में तो कुदाली, फावड़ा, चरखा और चक्की ही हैं। और मेरा अपना विश्वास हो गया है कि मनुष्य बीमार पड़े, ऐसी भगवान् की हरगिज इच्छा नहीं हो सकती। उसने मनुष्य को हर चीज दी है। साथ ही उसे भूख भी दी है। तो इसका अर्थ यह हुआ कि भूख के लिए परिश्रम करना परमेश्वर की आज्ञा है। लेकिन मनुष्य परिश्रम करना नहीं चाहता और खाना चाहता है। और जरूरत से ज्यादा भी खाना चाहता है। इधर परिश्रम न करे और उधर जरूरत से ज्यादा खाय। यह जब चलता है, तो परमेश्वर को क्रोध आता है और उसके क्रोध से वह हमें बीमारियाँ देता है। अगर हम ठीक कुदरती तौर पर जीवन बितायें और शरीर-परिश्रम से ही रोटी कमाने का निश्चय करें, तो आप देखेंगे कि बहुत सी बीमारियाँ खतम हो जायेंगी।

ईश्वरीय योजना में बीमारी का स्थान नहीं

"आप यह पूछ सकते हैं कि हमारे देश में कई लोग शरीर-परिश्रम से ही अपना गुजारा करते हैं, फिर इन्हें क्यों बीमारियाँ

होती हैं ? उसका कारण यह है कि उन पर परिश्रम का ज्यादा बोझ पड़ता है और उतने प्रमाण में उनको खाने को नहीं मिलता। दूसरे, जो लोग परिश्रम नहीं करते, वे उनके हिस्से का खाना खा लेते हैं। इस तरह परिश्रम करनेवाले लुट जाते हैं, और बीमारियों के शिकार हो जाते हैं। ये काम नहीं करते, इसलिए इनको बीमारियाँ होती है, और उनको खाना नहीं मिलता, इसलिए उन्हें बीमारियाँ होती हैं। इस तरह दोनों बीमार ही पड़ते हैं। लेकिन अगर दोनों शरीर-परिश्रम में लग जायँ और अनुकूल श्रम करें, नियमितता से जीवन बितायें और आहार की मात्रा देखकर अन्न-सेवन करें, ज्यादा न करें, तो इसमें जरा भी सन्देह नहीं कि ईश्वरीय योजना में मनुष्य को बीमार पड़ने का कोई कारण नहीं है।"

× × ×

दोपहर को कर्यकर्ताओं की सभा हुई थी। उसके पहले सामुदायिक कताई का कार्यक्रम था। कताई में गाँव की करीब पचास बहनें उपस्थित थीं। एक-दो तो खादी पहनी थीं। बाकी सबके बदन पर ठेठ मदरासी ढंग का मिल का या रेशमी कपड़े का पहनावा था। अक्सर विनोबाजी हर कातनेवाले के पास जाकर देख आते हैं, लेकिन आज चलने के लिए पूछा, तो कहने लगे : "क्या देखें ? एक भी बहन के बदन पर खादी नहीं है।" वे एक तरह की पीड़ा का अनुभव करते दिखाई दे रहे थे। फिर, चरखे आवाज भी काफी कर रहे थे। सूत बहुत टूटता था। बोलाराम कताई का केन्द्र माना जाता है।

कंट्रोल

कार्यकर्ताओं ने अनेक प्रश्न पूछे। वे ही प्रश्न ! परंतु विनोबा का जवाब हर वक्त नवीन। एक भाई ने पूछा : "सरकार कंट्रोल

क्यों नहीं हटाती ? लेवी के मामले में आजकल लोग अधिकारियों से मिलकर लेवी कम देते हैं और काला बाजार में ज्यादा कीमत लेकर माल बेचते हैं। गरीबों को अनाज नहीं मिलता।"

विनोबा ने कहा : "जो आता है, वह कहता है कि सरकार कंट्रोल क्यों नहीं हटाती। लाखों-करोड़ों जिस बात को समझते और कहते हैं, उसे आपकी सरकार नहीं समझती, ऐसा आप मानते हैं क्या ? यानी आपकी सरकार या तो बेवकूफ है या करोड़ों की दुश्मन है। मेरे मन में भी यह सवाल उठता है और मेरा खयाल है कि अगर वे लोग राक्षस होंगे, तो अब आइन्दा आप लोग उन्हें न चुनकर देवताओं को चुन लेंगे। आज हर कोई कंट्रोल के खिलाफ बोल रहा है। व्यापारी भी, जिन्हें कंट्रोल के कारण कोई खास कष्ट नहीं, बल्कि कुछ लाभ ही हो रहा है, उसके खिलाफ बोलते रहते हैं। सोशलिस्ट, कम्युनिस्ट, कांग्रेसी, किसान, यहाँ तक कि कॉलेज का साधारण लड़का भी कंट्रोल को गलत बताता है। तो यह कोई मजाक का विषय तो नहीं है। उस विषय का अभ्यास करना चाहिए—बिना अभ्यास किये केवल दोष निकालने की वृत्ति आत्मघात की वृत्ति है। दो बरस पहले मैंने कहा था कि सरकार ने गांधीजी के कहने से कंट्रोल उठा लिया था और जताया था कि सब लोग ईमानदारी से व्यवहार करें। परंतु व्यापारियों ने साथ नहीं दिया। वे अनाप-शनाप भाव बढ़ाते गये। तब व्यापारियों की सभा में इन्दौर में मुझे कहना पड़ा कि भाइयो, आपने आखिर गांधीजी को भी धोखा दिया। अब राष्ट्रीयकरण के सिवा चारा नहीं रहा। आप लोगों ने अपना हक खो दिया। मेरे वाक्यों को कुछ सोशलिस्ट मित्रों ने दोहराया भी था। आज भी मैं अपने उन शब्दों पर कायम हूँ। व्यापारी वादा करें, तो आज

भी उनके वादे पर विचार किया जा सकता है। परंतु आज तो सरकार और व्यापारियों के बीच अक्ल की लड़ाई चल रही है। दोनों की अक्ल का देश को लाभ मिलना चाहिए, परंतु दुर्भाग्य से ऐसा नहीं हो रहा है। कंट्रोल विरोधी विचारक अभी वर्धा में जमा हुए थे, परन्तु वे भी यह तय नहीं कर सके कि कंट्रोल एकदम से उठा ही लिया जाय।

"मैंने एक विचार इस सम्बन्ध में देश के सामने रखा है कि सरकार आज जो लगान पैसे में वसूल करती है, वह पैसे के बजाय अनाज में वसूल करे। दस-बीस साल के लिए इसकी मिकदार तय कर ले। इससे देशभर से अच्छा अनाज सरकार को मिल सकेगा, खुला बाजार रहेगा और अनाज के कंट्रोल की जरूरत नहीं रहेगी।

ग्रामोद्योगों का रिजर्वेशन

"फिर सवाल रहता है कपड़े के बारे में। कपड़े का जो सवाल है, उसका हल आज की परिस्थिति में सिवा खादी के और किसी तरह नहीं निकल सकता। सारी बुद्धि, शक्ति और संपत्ति लगाने पर भी ये मिलें, जो सत्रह गज कपड़ा देती थीं, बारह गज पर आ गयीं। अब शायद साढ़े ग्यारह पर आवें और अगले दस बरसों में क्या होगा, कोई नहीं कह सकता। फिर मिलों में यहाँ की रूई नहीं चलती। उनके लिए विदेश से रूई मँगानी पड़ती है। इसके लिए यहाँ की कपास बाहर भेजनी पड़ती है। अब सोचिये कि जो चीज सबको हर समय चाहिए, वह हम न बनायें, जो चीज पहले घर-घर गाँव-गाँव में बनती थी, वह छीन ली जाय और हम ऐसी अहम चीज के बारे में परावलम्बी बन जायँ, तो क्या होगा? मेरा कहना है कि जैसे जंगल 'रिजर्व' होते हैं, वैसे ही कुछ ग्रामोद्योग भी 'रिजर्व' होने चाहिए; और खादी उन 'रिजर्व'

किये जानेवाले धन्धों में मुख्य हैं। हाँ, अपने औजारों में हम सुधार करेंगे—करते भी रहे हैं। इस तरह यह अनाज और कपड़े का सवाल हम हल कर सकते हैं।"

कांग्रेस के ब्राह्मण

प्रश्न : "आजकल कांग्रेस की प्रतिष्ठा पहले जैसी नहीं रही। इसके लिए क्या किया जाय?"

उत्तर : "कांग्रेस के नेताओं ने चार आने के बदले कांग्रेस की सदस्यता-फी एक रुपया कर दी है। इसलिए कांग्रेस की ताकत चौगुनी बढ़ी, और प्रतिष्ठा भी चौगुनी हो गयी, ऐसा वे लोग समझ सकते है। लेकिन बात ऐसी नहीं है। अब कांग्रेस में मार खाने की बात तो रही नहीं। गांधीजी के जमाने में मार खाने की बात थी। आज तो लड्डू खाने की बात है। इसलिए कोई भी धनवान् चाहे तो दस हजार रुपया खर्च करके कांग्रेस के दस हजार मेम्बर अकेला बना सकता है। अब इस तरह कांग्रेस की प्रतिष्ठा कैसे बढ़ सकती है? बात असल यह है कि कांग्रेस को चाहिए था कि वह जनता को कोई प्रोग्राम देती। पर वह काम तो उसने संस्थाओं को सौंप रखा है। धनवान् लोग जैसे पूजा के लिए ब्राह्मण रखते हैं, वैसे ही कांग्रेसवालों ने रचनात्मक कार्यकर्ताओं को काम सौंप दिया है। एक काम चरखा-संघ को सौंप दिया, दूसरा तालीमी संघ को, तीसरा हरिजन-सेवक-संघ को। इस तरह ये सारे ब्राह्मण कांग्रेस को मिल गये। गांधीजी ने कांग्रेस को लोकसेवक-संघ में परिवर्तित कर देने के बारे में जो कहा था, वह तो नहीं हो सका। रचनात्मक काम करनेवाली संस्थाओं को कांग्रेस में जोड़ लिया गया। फिर प्रमाणित खादी की बात निकली, तो कांग्रेस ने उसकी जरूरत नहीं समझी।

यानी एक तरफ तो चरखा-संघ को पूजा का अधिकार दिया। फिर कहा—गणेश यह नहीं, कोई भी चलेगा।

सर्क्युलर की राह मत देखिये

"जो मंत्रीगण हैं, उनकी हालत यह है कि जब मिलते हैं, तो सिर को हाथ लगाकर कहते हैं कि सोचने के लिए समय ही नहीं मिलता। खाने को समय नहीं मिलता कहते, तो भी मैं समझ सकता था। बिना चिंतन किये, बिना विचार किये, बिना सोचे-समझे ये लोग काम कैसे कर सकते हैं, इसका मुझे आश्चर्य होता है। लेकिन उन लोगों को आश्चर्य नहीं होता। बल्कि उनका कहना है कि हमने तो सोचनेवाले भी रख दिये हैं। हमारे सेक्रेटरी लोग यह काम करते हैं। ऐसी हालत उन बेचारों की है।

"अब जो कांग्रेसवाले सरकार में नहीं हैं, वे आपस में लड़ते हैं। क्योंकि सभी जेल गये हुए होते हैं, सभी सत्ता के स्थानों पर अपना अधिकार जताते हैं। ऐसी हालत में कांग्रेस को कौन बचायेगा? हमारा खयाल है, कांग्रेसवालों को ऊपर के सर्क्युलरों की राह देखे बिना सेवा के कामों में लग जाना चाहिए। क्या भोजन के लिए हम सर्क्युलर की राह देखते हैं?" ...

यह शिक्षण हमें नहीं चाहिए : ३२ :

सिकन्दराबाद
५ ४ '५१

डरानेवाला ही डरता है

बोलारम से सिकन्दराबाद आते हुए बीच में तिरमलगिरि वालों के प्रेमपूर्वक आग्रह से वहाँ दस मिनट रुक जाने का रात को ६ बजे तय किया गया था। तत्पश्चात् लोगों ने रात ही रात में तोरण आदि बाँधकर सुन्दर सजावट की थी। दस मिनट विनोवा रुके, परन्तु उतनी देर में उन्होंने बालकों से सुन विनोद कर लिया। वहाँ से आगे सिकन्दराबाद जाते हुए रास्ते में एक देहात को देखने गये, जहाँ पहले मुस्लिम आबादी बहुत थी। परन्तु पुलिस-एक्शन के बाद वे सब मुसलमान लोग घर-बार छोड़कर चले गये थे। मुसलमान नेताओं से विनोबा ने कहा "अब उस गाँव के लोगों को अपने घरों में आ बसना चाहिए।" रजाकारों के जमाने में इन मुसलमान भाइयों ने अपने गैर-मुस्लिम भाइयों पर इतना अधिक जुल्म किया था कि अब तक उनकी हिम्मत फिर से आ बसने की नहीं हो रही है। जो दूसरों को डराता है, वह फिर बिना कारण भी डरता रहता है।

छुट्टियों में क्या करें ?

सिकन्दराबाद में हमें एक विद्यालय में ठहराया गया था। वहाँ कुछ विद्यार्थी भी विनोबा से मिलने आये। कॉलेज की अब तीन-साढ़े तीन महीनों की छुट्टियाँ होने जा रही थीं। इन छुट्टियों में क्या किया जाय ? उन छात्रों के इस प्रश्न को लेकर आज की

प्रार्थना-सभा में विनोबाजी ने शिक्षण के सम्बन्ध में अत्यन्त हृदयग्राही और उद्बोधक प्रवचन किया। उन्होंने कहा :

"दो साल पहले सिकन्दराबाद आना हुआ था। वह मुसाफिरी एक दूसरे उद्देश्य से हुई थी। इस मरतबा इस सर्वोदय की यात्रा में निकल पड़े। पैदल यात्रा में जिस तरह कुदरत का और मनुष्य का समीप से स्वच्छ दर्शन होता है, वैसा और दूसरे किसी तरीके से नहीं होता। कुल मिलाकर जो अनुभव हुआ, वह बहुत ही लाभदायी रहा। और हम मानते हैं कि हमारे देश का जो दर्शन उसमें देखने को मिला, वह यद्यपि कल्पना के बाहर तो नहीं था, फिर भी हम अगर पैदल नहीं निकले होते, तो वह दर्शन नहीं होता।

गाँव और शहर

"छोटे-छोटे गाँव जहाँ आये, वहाँ उन गाँवों की अपनी-अपनी खूबियाँ दीख पड़ीं। यद्यपि गाँवों में कुछ चीजें समान होती हैं, फिर भी हरएक गाँव एक तरह से जिन्दा होता है, मानो उसकी एक स्वतन्त्र आत्मा होती है। हर गाँव की अपनी विशेषता होती है। जैसे हम वही सूर्योदय हर रोज देखते हैं, फिर भी सूर्योदय देखने से किसीका जी ऊबा नहीं। एक दिन सूर्योदय के मौके पर जो दृश्य दिखा, वह दूसरे दिन कभी नहीं दिखा। हर रोज नया-नया ही दृश्य दीख पड़ा। वैसी ही कुछ हालत देहातों की है। हर देहात में कुछ विशेषताएँ होती हैं। वे सारी हमको देखने को मिलीं। लेकिन जहाँ बड़े-बड़े शहर आते हैं, वहाँ अगर एक शहर देख लिया, तो दूसरा शहर देखने की जरूरत नहीं रहती। परदेशी वस्तुओं से भरी हुई वही दूकानें हर जगह नजर आती हैं, मोटरों की दौड़धूप और चित्त की चंचलता भी वही हर जगह दीख पड़ती है। सिनेमा, खेल

आदि वही हर जगह होते है। हर जगह वही आनन्द की खोज और हर जगह वही आनन्द का अभाव। किसी भी शहर मे आप जाइये, उसका यही रूप दीखे पड़ता है। तो शहर म जाने पर फौरन वही विचार फिर से मन में आते है। और मैं अक्सर जहॉं किसी शहर में प्रवेश करता हूँ, वहॉं मुझे वैसे ही लगता है जैसे ज्ञानदेव ने कहा था. कोई एक जगल का जानवर था। उसको राजमहल मे ले गये। उसने राजमहल का वह सारा दृश्य देखा। जिधर देखो उधर कई चीजें भरी पड़ी है और कई मनुष्यों की दौड़धूप चल रही है। तो वह बिचारा जंगली जानवर एक कोने में जा बैठा और उस राज्य मे उसको सारा सुनसान लगा, वैसे ही जब कभी मैं शहर मे पहुँचता हूँ, तो मुझे भी लगता है। फिर भी शहर की जनता से भी संपर्क रखने की इच्छा रहती है। शहरो से काफी काम हो सकता है। शक्ति भी शहरो मे भरी पड़ी है। उसका हमे उपयोग करना है। इसलिए शहर मे आने की भी इच्छा होती है। लेकिन आने पर वही सवाल मन मे उठते हैं।

छात्रों के मानसिक आन्दोलन

"उन सब सवालों मे सबसे महत्त्व का सवाल जो मेरे मन मे आता है, वह यही कि शहर की तालीम का क्या करें? आज यहाँ आने पर हमारे मित्र का एक लड़का हमसे मिलने आया। वह कॉलेज मे पढ़ रहा है। हम जानते हैं कॉलेजों का हाल। फिर भी उससे पूछ लिया। उसने कहा कि पिता का आग्रह है और पढने की उम्र है, इसलिए पढ़ता हूँ। परीक्षा पास भी करता हूँ। होशियार लडकों मे गिनती है। लेकिन पढने में कोई दिलचस्पी नहीं है। जरा भी रस नहीं आता। व्यर्थ ही पढ़ रहा हूँ, ऐसा लगता है। बेकार-सा शिक्षण मिल रहा है, ऐसा

आभास होता है। और अब तो बड़ी छुट्टी मिल गयी है। यानी २२ मार्च को परीक्षा खतम हो गयी, तब से छुट्टी शुरू हो गयी। जून आखिर तक छुट्टी है। यानी लगातार सवा तीन महीने की छुट्टी है। इन छुट्टियों मे क्या करना, यह सवाल निकला। जब यह सारा मै सुनता हूँ, और हर जगह यही सुनता हूँ, तो लगता है कि हम शिक्षण के बारे में अभी भी कुछ नहीं सोचते हैं। हर कोई यही कहता है कि इस समय देश में काम करने की, अधिक अन्न उपजाने की जरूरत है। सब तरह से हमारे कर्म की मात्रा मे वृद्धि की जरूरत है। किसान धूप के दिनों में भी काम में लगा रहता है। बारिश के पहले जमीन की जो कुछ तैयारी करनी होती है, वह इन दिनों ही करनी होती है। तब यहाँ कॉलेज के शिक्षकों और विद्यार्थियों को तीन-तीन महीने की लगातार छुट्टी दी जाती है। तो मन मे लगता है कि क्या ये हाईस्कूल, कॉलेज आदि जो चलते हैं, वे आसमान मे चलते हैं या जमीन पर चलते हैं? और अगर जमीन पर चलते हैं, तो किस जमीन पर चल रहे हैं? हिन्दुस्तान से वे कोई ताल्लुक रखते हैं या नहीं? यह सवाल हमेशा उठता है। और जो अच्छे लड़के होते हैं, उनके मन मे यही चीज खटकती रहती है कि हम जो सीख रहे हैं, उसका आखिर हमारे देश के साथ क्या कोई सम्बन्ध है? आज देश की जो आवश्यकताएँ हैं, वे हमारे नेता तो हमको सुनाते रहते हैं और हम सुना करते हैं। लेकिन यहाँ वही अपना गणित, वही अपनी अंग्रेजी—जिसका कोई उपयोग देश के जीवन मे अभी तक नहीं देख रहे हैं। तो क्या हमारा समय बरबाद नहीं हो रहा है? इस तरह हमारे अच्छे-अच्छे लड़कों को, जब वे कॉलेज में पढा करते हैं, बहुत मानसिक तक्लीफ हुआ करती है। और ठीक भी है। क्योंकि उनकी उम्र ऐसी है, जब उनके

मन में अनेक आकांक्षाएँ उठती हैं, अनेक कल्पनाएँ मन में वे करते हैं, भविष्य के अनेक चित्र उनके मन के सामने उठ खड़े होते हैं। मैं फलाने के जैसा बनूँगा, जीवन में फलाना काम करूँगा। इतिहास की कई मिसालें उनके सामने होती हैं। उन मिसालों में से एकाध मिसाल मेरी भी होगी, ऐसी वे उम्मीद करते हैं। इस तरह मन में वे कई तरह के मोदक चखा करते हैं। उनके उस मानसिक विहार को, उनकी उस तत्त्वदृष्टि को, चाहे उसमें से कुछ भी फलित न निकलता हो, मैं बहुत पवित्र मानता हूँ।

मानव का वैशिष्ट्य

"इस तरह की मनोमय सृष्टि, ऐसी दिव्य कल्पना—आप चाहे इसे व्यर्थ कल्पना भी कह सकते हैं—जिसके जीवन में नहीं उठी, उसमें और जानवर में कोई फर्क नहीं है। मनुष्य का सिर भगवान् ने आसमान में रखा है। उसके पाँव ही पृथ्वी पर होते हैं। कोई मनुष्य अगर दो हाथों और दो पाँवों पर चलना शुरू कर दे, तो हमको वह जानवर की मूर्ति दिखेगा। हम कहेंगे कि मानवता इसमें से मिट गयी। मानव की विशेषता यह है कि पाँव उसके चाहे पृथ्वी पर रहें, पर उसका सिर आसमान में होना चाहिए। उसकी कल्पनाशक्ति जमीन के साथ नहीं होनी चाहिए। बल्कि वह निरंतर कुछ-न-कुछ विशाल कल्पनाएँ करता रहता है, और उस ध्येय के लिए जितनी भी कोशिश हो सके, करने का विचार करता है। इस तरह अगर हरएक मनुष्य नहीं करता, तो वह उसका कम नसीब है। तो जो विद्यार्थी कॉलेज आदि में पढ़ा करते हैं, उनके मन में ऐसे विचार उठा करते हैं। उनमें से दस-पाँच विद्यार्थी ऐसे होते भी हैं, जिनकी कल्पना सत्य सृष्टि में प्रकट होती है, आविर्भूत होती है।

विद्यार्थियों की सहजस्फूर्ति

"जीवन का हमेशा ऐसा ही स्वरूप होता है। कोई भी चीज जब पैदा होती है, तब पहले वह मन में होती है। मनोमय संकल्प होता है। संकल्प से फिर आगे वाणी को प्रेरणा मिलती है। जो विचार मन में आता है, वह मनुष्य बोलने लगता है, दूसरे को कहने लगता है। लोग पूछेंगे कि अरे भाई, तू मन में विचार करता है और वाणी से भी बोलता है, लेकिन तू काम क्या करता है? तो वह जवाब देगा कि भाई, इसके बाद ही काम होनेवाला है। पहले मन में संकल्प, उसके बाद वाग्स्फूर्ति, उसके बाद हाथ-पाँव को प्रेरणा। यह सारी प्रेरणा की विधि है। इसी तरह दुनिया में कार्य होता है। तो विद्यार्थियों के जीवन में भी कई संकल्प उठते हैं। वाणी भी उनकी चलती है। वे आपस में चर्चा किया करते हैं। बड़े-बड़े नेताओं पर भी टीका करते हैं। वे जानते हैं कि हम कौन हैं और नेता कहाँ है। नेताओं की बुद्धि थोड़ी ही हममें है। फिर भी वे निरपेक्ष विचार करते हैं, और जैसा मन में आता है, वैसा बोल भी देते हैं। तो वह उनकी काव्यशक्ति है, उनकी सहजस्फूर्ति है, उनकी निरंकुश वृत्ति है। वह उनकी सहज प्रतिभा है, वह उन्हें परमेश्वर की प्रेरणा होती है, ऐसा ही मैं कहूँगा। वह उनकी तरुणाई की स्फूर्ति है। उस स्फूर्ति में वे कुछ दिन बिताते हैं और उसके बाद कुछ कृति का आरंभ करते हैं। कृति का सारा नकशा इसी तरह होता है। विद्यार्थियों का और दूसरों का भी नकशा यही है। तो ये सारे विद्यार्थी अपने मन में सोचा करते हैं कि हम जो सीख रहे हैं, उसका परिस्थिति से कोई सम्बन्ध नहीं है।

शिक्षण का फलित

"खैर, शिक्षण में तो दो चीजें देखनी होती हैं। एक तो यह कि

जो भी शिक्षण दिया जाता है, वह आज जनता के खर्च से दिया जाता है। अत: उसका प्रत्यक्ष व्यवहार में कुछ-न-कुछ उपयोग होना चाहिए। जो तालीम ले रहे हैं वे तालीम लेने के बाद ऐसे काबिल बनने चाहिए कि जिससे वे दुनिया की सेवा करने में आगे बढ़े। और जितना उन्होंने पाया था, उससे दसगुना वापस दिया, ऐसा कह सकने की हालत होनी चाहिए। जैसे कोई चीज खेत में एक सेर बोई जाती है, तो उसमें से २५ सेर निकलती है, वैसे ही विद्यार्थियों के चित्त में जो विचार-बीज बोया गया, वह दसगुना, बीस गुना बढ़कर पैदा हो, ऐसी उम्मीद की जाती है। शिक्षण में जो सिखाया जाता है, उसका व्यवहार पर अनेक-गुना परिणाम होना चाहिए। जितना खर्च किया होगा, उससे बहुत अधिक फलित उसमें से निकलना चाहिए। यह एक आशा रखी जायगी।

मन ही सर्व शक्तियों का भंडार

"शिक्षण से दूसरी आशा यह रखी जायगी कि जिनको शिक्षण दिया जाता है, उनको उनकी उम्र के लिए, उनके निज के विकास के लिए जो भी जरूरी खुराक है, वह वहाँ मिलनी चाहिए। वह तो आज के शिक्षण में हम देखते ही नहीं हैं। वहाँ तो सिर्फ स्मरणशक्ति का प्रयोग होता है, कुछ थोड़ा तर्क का उपयोग होता है। इसके सिवा बुद्धि की दूसरी कोई शक्तियाँ हैं और उनका भी विकास करना होता है, उनके विकास के कोई तरीके होते हैं, उसका भी एक शास्त्र बना हुआ है, उस शास्त्र का शिक्षण के साथ सम्बन्ध है—इन सबका जो शिक्षण-पद्धति अभी चल रही है उससे कोई सम्बन्ध नहीं है। वास्तव में मन की जितनी शक्तियाँ हैं, वे ऋषियों ने हमको समझायी हैं। और हम भी अनुभव से देखेंगे, तो हमको भी मालूम होगा

कि जितनी शक्तियाँ इस दुनिया में हैं, वे सारी मन में होती हैं। "अनंतं हि मनः अनंता विश्वेदेवाः"—विश्वदेव अनन्त हैं, मन भी अनन्त है। उसकी एक-एक मनोवृत्ति और मानसिक शक्ति का विश्लेपण करते हैं, तो उसके कई गुणों का हमको आभास होता है। आत्मा सच्चिदानन्द है और उसके सान्निध्य से मन में अनन्त गुणों की छाया प्रतिबिंबित होती है। अनन्त गुण मन मे प्रकाशित होते हैं। हमने कई महापुरुष ऐसे देखे हैं, जिनके गुणों की अगर गिनती करें, तो कोई पार नहीं आयेगा। सैकड़ों गुणों का नाम लेना पडता है और कहना पडता है कि इस महा-पुरुष में इतने गुण थे।

व्रतसम्पन्नता का तेज

इस तरह गुणों के विकास के लिए बहुत अवकाश है। और मन मे ऐसी अनेक शक्तियाँ पडी हैं। लेकिन उन शक्तियों के विकास का कोई कार्यक्रम हमारे शिक्षण में है ही नहीं। हम लोगों को अनुभवी पुरुषों ने सिखाया कि मुख्य शिक्षण तो यही लेना है कि हमें अपने-आपको अपने शरीर से भिन्न अपने मन और बुद्धि से भी भिन्न पहचानना चाहिए। यह जो अपनी निज की पहचान है, वह सब गुणों मे श्रेष्ठ है। यह पहचान जहाँ हुई, जहाँ अपना अस्तित्व हमें सब इंद्रियों और बुद्धि, मन आदि से भिन्न महसूस हुआ, वहाँ हमने ऐसा महान् अनुभव हासिल किया, जिसके द्वारा बाकी सारे गुणों का विकास हम कर सकते हैं। तो उसका तो हमारे शिक्षण में कोई पता ही नहीं है। शरीर से अपने को भिन्न पहचानना, मानसिक विकारों से अपने को भिन्न पह-चानना, मन में अगर कोई कल्पना आयी, तो उसको एकदम से प्रकट न करना, उसका वहाँ विकास होने देना, उसकी वहाँ परीक्षा करना, कुछ धीरज रखना, उसका विश्लेपण करना, उसमें अगर

ऐसा कोई अंश दिखे कि जो काम का नहीं है, तो उसे निकाल देना, और इस तरह अपनी मनोवृत्ति का विश्लेषण करके जो अच्छा अंश उसमें से मिले, वही दुनिया के सामने रखना, यह सारा मानसिक विश्लेषण का और चित्त के विकास का एक महान् कार्य है। यह कार्य अगर शिक्षण में नहीं होता, तो शिक्षण का कोई अर्थ ही नहीं है। शिक्षण में मुख्य वस्तु यह देखनी चाहिए कि जो वहाँ शिक्षण ले रहा है, उसके गुणों का विकास किस तरह हो रहा है और वह अपने-आपको अपनी परिस्थिति से और देहादिक साधनों से भिन्न पहचानता है या नहीं, उसका काबू इन सब पर है या नहीं। प्राचीन काल से उपनिषदों में ऐसा माना जाता था कि गुरु के पास जाकर अगर विद्यार्थी विद्या हासिल कर लेता है, लेकिन व्रत में संपन्न नहीं है, तो वह विद्यास्नातक भले ही कहलाये, लेकिन पूर्ण स्नातक नहीं हो सकता। उसको विद्यास्नातक होने के साथ-साथ व्रतस्नातक भी होना चाहिए। अर्थात् कुछ व्रतों के पालन में उसको सफल होना चाहिए। उसे अपने-आप पर काबू पाना चाहिए। जिस घोड़े पर हम सवार हैं, उस घोड़े को किस तरह चलाना, उस घोड़े के काबू में न जाना, बल्कि उसको अपने काबू में रखना, और उस घोड़े से अच्छी तरह काम किस तरह लेना यह सारी आत्मदमन की कला, आत्मनियमन की कला, आत्मा के उपयोग की कला सीखना ही शिक्षण का एक महत्त्व का उद्देश्य होना चाहिए। इसीको व्रतस्नातक कहते हैं।

"तो ऐसे कई व्रत हैं, जिनको हमें ठीक तरह से समझ लेना चाहिए, जिनका पालन करने की शक्ति हमें हासिल कर लेनी चाहिए और उस कसौटी पर अपने को कस लेना चाहिए। इस तरह विद्यार्थी जब कसा हुआ तैयार होता है, तब वह आगामी सेवा के लिए कारगर साबित होता है, उत्तम नागरिक बनता है।

वह जहाँ दुनिया में प्रवेश करता है, वहाँ वीरवृत्ति से, आत्म-विश्वास से प्रवेश करता है। आज विद्यार्थी जब कॉलेज के बाहर निकलता है, तो उसकी आँख के सामने अँधेरा होता है। किसी तरह वह कहीं प्रवेश पा लेता है। लेकिन जहाँ उसको जाना है, वहीं वह जाता है और अपने मन की इच्छा के मुताबिक ही जाता है, ऐसी बात नहीं होती। जहाँ वह फेंका जाता है, वहाँ वह जाता है। इस तरह सारा नसीब का खेल होता है। लेकिन जो विद्यार्थी उत्तम ढंग से व्रतसंपन्न हो गया, जिसने अपनी आत्मा का दमन कर लिया और उस पर विजय प्राप्त कर ली, जिसका विकास अच्छा हुआ, और जिसने व्यवहारोपयोगी विद्या संपादन कर ली, वह जब दुनिया में प्रवेश करेगा, तब सिर झुकाकर नहीं, बल्कि सबके सामने सीना तानकर पूर्ण आत्म-विश्वास से चलेगा और "नमयतीव गतिः धरित्रीम्"—उसकी गति से यह धरती दब जायगी। ऐसे वीरावेश से वह दुनिया में प्रवेश करेगा।

विनयसंपन्नता की आवश्यकता

"इसका अर्थ यह नहीं है कि वह उद्धत बनेगा। उसमें नम्रता भी रहेगी। क्योंकि जो मनुष्य ज्ञान हासिल कर चुका, वह यह महसूस करता है कि ज्ञान कितना अनंत है और उसमें से मुझे कितना छोटा-सा हिस्सा मिला है। इसलिए सच्चा ज्ञानी और सच्ची विद्या पाया हुआ मनुष्य जितना विनयसंपन्न होगा, उतना विनयसंपन्न वह नहीं होगा, जिसने विद्या नहीं पाई है। क्योंकि विद्या का नाप उसको नहीं मिला है। जिसने विद्या के सागर का दर्शन किया, उसके ध्यान में आता है कि ज्ञान का न कोई पार है, न अंत है, और मुझे जो ज्ञान हासिल हुआ है, वह एक अंशमात्र है। इसलिए जिंदगीभर मुझे ज्ञान की खोज जारी

रखनी चाहिए। मैंने जो विद्या पाई, वह तो केवल आरंभमात्र है, सरस्वती के स्थान में वह थोड़ा-सा प्रवेशमात्र है। इसलिए मुझे जिंदगी के आखिर तक अपनी विद्या बढ़ाते ही जाना चाहिए। फिर भी दुनिया की विद्या ऐसी अपार बच रहेगी कि मैं केवल एक अंश ही हासिल कर सकूँगा। इस चीज का उसको पूरा भान होगा, इसलिए वह हमेशा नम्र रहेगा। इसीलिए हम लोगों ने विद्वान् मनुष्य के लिए विनीत शब्द बनाया और "प्रजानाम् विनयाधानात्"–प्रजा को विनयसंपन्न बनाना चाहिए, ऐसा कहा। यानी शिक्षण के लिए विनय शब्द का प्रयोग हुआ। तो वह विनयसंपन्न तो होगा ही। अगर ऐसा वह नहीं है, तो उसने विद्या पाई ही नहीं है। इसलिए नम्रता का होना अत्यंत आवश्यक है।

आजीवन 'स्वाध्याय-प्रवचन'

"लेकिन नम्रता के साथ-साथ दृढ़ निश्चय, आत्म-विश्वास, धैर्य, निर्भयता इत्यादि सब गुण उसमें होंगे। यानी धृति उसमें होगी। बुद्धि के साथ धृति भी होनी चाहिए। वह उसमें होगी और जहाँ वह संसार में प्रवेश करेगा, वहाँ विजयी वीर की वृत्ति से प्रवेश करेगा। वेदों में एक मंत्र है। वेदाध्ययन की समाप्ति की जाती है, तब वह बोला जाता है : "मह्यं नमताम् प्रदिशश्चतस्रः"— ये चारों दिशाएँ मेरे सामने झुकेंगी। इस तरह की विद्या अगर मनुष्य प्राप्त करता है, तो उस विद्या से वह सारी दुनिया की सेवा करता है। उसका जीवन भार-भूत नहीं होता। ऐसी विद्या प्राप्त करते समय भी उसके मन में पूरा समाधान रहता है। विद्या की खूबी ही यह है। जैसे अन्न खाने में आज अन्न खाया और दो दिन के बाद तृप्ति हुई, ऐसा नहीं होता। जब खाया, तभी उसका मजा मालूम होता है। तृप्ति का और तुष्टि का अनुभव

उसी क्षण होता है। वैसे ही ज्ञान का होता है। जहाँ सच्चा ज्ञान मिल रहा है, वहाँ 'चेहरा भी चमक दिखलाता है'। विद्यार्थी को अपार आनंद होता है। और उससे उसकी ज्ञान की तृष्णा बढ़ती जाती है। ज्ञान-प्राप्ति में मेरा समय बेकार जा रहा है, ऐसा उसको आभास ही नहीं होता, लेकिन क्योंकि अभी इस तरह का ज्ञान नहीं मिलता, इसलिए सारा समय बेकार जाता है। इसलिए ज्ञान के नाम पर जो मिलता है, उसमें कोई रस की अनुभूति नहीं होती। दिलचस्पी नहीं बढ़ती और उत्तरोत्तर ज्ञान-तृष्णा नहीं बढ़ती। इसलिए कब यह कॉलेज खतम हो और कब मैं उसमें से छूट जाऊँ, ऐसा लगता है। वास्तव में जिसने ज्ञान को जान लिया, वह तो निरंतर ज्ञान की साधना करता ही रहेगा। उपनिषदों ने हमें यह समझाया है कि गृहस्थो, तुम जब गृहस्थ बनोगे, तब ब्रह्मचर्याश्रम में थे, उससे आगे बढ़ोगे। तुम्हारा एक कदम आगे बढ़ेगा। तुम्हारी उन्नति होगी। जो भी सेवा का काम वहाँ होगा, वह तो करोगे ही। लेकिन साथ-साथ सारी दुनिया को धार्मिक भी बनाओगे। और *"शुचौ देशे स्वाध्यायम् अधीयानः"*—अपने घर में पवित्र स्थान बनाकर वहाँ निरंतर अध्ययन करोगे। इस तरह अध्ययन की अपेक्षा ब्रह्मचर्य के बाद यानी विद्याध्ययन की समाप्ति के बाद भी अपेक्षित है। सारी जिंदगी अध्ययन होना चाहिए, ऐसा हमें ऋषियों ने समझाया है।

"जिसको एक दफा अध्ययन का स्वाद मिला, वह उस चीज को कभी छोड़ ही नहीं सकता। तो ऋषि कहता है कि हर-एक काम करो, लेकिन उसके *साथ-साथ* "स्वाध्यायप्रवचने च" "ऋतं च स्वाध्यायप्रवचने च" "सत्यं च स्वाध्यायप्रवचने च"—सत्य बोलो तो उसके साथ स्वाध्यायप्रवचन करो, "तपश्च स्वाध्यायप्रवचने च"—तप करो तो उसके साथ स्वाध्यायप्रवचन

करो, और जन-सेवा करो, तो उसके साथ स्वाध्यायप्रवचन करो। और अग्नि की सेवा करो, तो उसके साथ स्वाध्यायप्रवचन करो। जितने भी काम करो, उनके साथ गृहस्थाश्रम में भी स्वाध्याय-प्रवचन चलना ही चाहिए, ऐसी अपेक्षा होती है। और वह ठीक भी है। उसमें कोई ऐसी चीज नहीं है, जो पूरी नहीं की जा सकती। क्योंकि जिसने विद्याभ्यास के जमाने में वह रस चखा, उसका यह रस उत्तरोत्तर वृद्धिंगत होता है। फिर जहाँ वह नागरिक बनता है, वहाँ कई तरह के अभ्यास करता है।

"लेकिन आज हम देखते हैं कि अध्ययन का तो हमारे देश में अभाव-सा हो गया है। यद्यपि यह देश प्राचीन है और यहाँ अध्ययन पुराने जमाने से निरंतर चला आ रहा है। अध्ययन की एक अखंड परम्परा बरसों तक यहाँ चली थी, और जिस जमाने में बाकी की दुनिया के सारे लोग घोर अन्धकार में पड़े थे और विद्या से अपरिचित थे, उस जमाने में यहाँ विद्या थी। यहाँ के लोग बड़ी फजर उठते थे। "अनुयुचाणः अध्येति न स्वपन्"—बड़ी फजर में सोते नहीं रहते थे, बल्कि अध्ययन करते थे। इस तरह से अध्ययन की परम्परा अति प्राचीन काल से यहाँ चली आयी है। फिर भी अब हम देख रहे हैं कि किसी विषय का अच्छा अध्ययन किया हुआ मनुष्य मुश्किल से यहाँ मिलता है।

प्राणहीनता देनेवाला वर्तमान शिक्षण

"हमने स्वराज्य तो हासिल कर लिया है। स्वराज्य में कई तरह की जिम्मेदारियाँ हम पर आ पड़ी हैं। उन सारी जिम्मेदारियों को हम तभी अच्छी तरह निभा सकते हैं, जब हरएक विद्या में, हरएक तरह की शाखा में प्रवीण लोग हममें हों, और निरन्तर कुछ-न-कुछ अध्ययन करते रहें। तभी हमारे देश का

काम भी आगे बढनेवाला है। लेकिन अध्ययन करनेवाले लोग मैं यहाँ बहुत कम देखता हूँ। उसका सारा कारण इस शिक्षा-पद्धति मे है। क्योकि वह जब मनुष्य दाखिल होता है, तो दस पाँच साल सीखने के बाद उसका सारा रस शुष्क हो जाता है। उसकी प्राण शक्ति क्षीण हो जाती है। और मानसिक शक्ति भी बढती नहीं है। इन्द्रियों की शक्ति क्षीण होती है। आप देखते हैं कि स्कूल मे जाने के कारण आँख की शक्ति क्षीण हो गयी, शरीर-शक्ति क्षीण हो गयी, मानसिक शक्ति भी जीर्ण हो गयी, बुद्धि की कई शक्तियो का विकास ही नहीं हुआ और सबसे बडी बात यह कि विद्यार्थियों मे प्राणहीनता आ गयी है। उन्हें आत्मा का भान नहीं, देह से हम भिन्न हैं—इसका पता नहीं, अपने साधनों पर उनका काबू नहीं। तो क्या शिक्षण मिलता है?

"मै जब यह वर्णन करता हूँ, तो मुझे खुशी नहीं हो रही है। मुझे बहुत दुख होता है कि हमारे जिस देश मे इतनी सारी विद्याएँ बढी हुई थीं, वहाँ आज क्या है? रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने क्या कहा है? "प्रथम सामरव तव तपोवने, प्रथम प्रचारित तव वन गहने, ज्ञान धर्म कत काव्य काहिनी, अयी भुवन मन मोहिनी"—अई भुवन के मन को मोहन करनेवाली माता, यहाँ सूर्योदय पहले हुआ था, यहाँ सामगायन पहले हुआ था, और यहाँ की विद्या की किरणे सारी दुनिया मे फैली हुई थीं। ऐसे स्मरण जहाँ हम अपने मातृ-भूमि के लिए रखते हैं, वहाँ जो कुछ चल रहा है, उसका वर्णन करने में मुझे सुख नहीं होता, बल्कि अत्यन्त दुख होता है।

शिक्षण-परिवर्तन से सभी समस्याएँ सुलझेंगी

"स्वराज्य के बाद पुरानी शिक्षण पद्धति वैसी ही जारी है, यह बात मेरी समझ मे नहीं आती। स्वराज्य आने के बाद जो

चीजें पहले चलती थीं, उनमे से बहुत-सी बाद मे भी चलती रहेंगी, यह मैं जानता हूँ। लेकिन शिक्षण भी चलता रहेगा, यह मेरी कल्पना में भी नहीं था। मैं यही मानता था कि जहाँ स्वराज्य आयेगा, वहाँ शिक्षण फौरन बदल जायेगा। शिक्षण अगर स्वराज्य आने के बाद भी नहीं बदलता है, तो उससे स्वराज्य का कोई मतलब ही नहीं होता। जिस शिक्षण-प्रणाली को हम बरसो तक कोसते रहे, जिसने हमारा नुकसान किया ऐसा सब लोग बोलते हैं, और जो शिक्षा-पद्धति हमें गुलामी मे रखने के उद्देश्य से न भी चालू की गयी हो, लेकिन जिसका परिणाम यही हुआ कि हम अच्छे गुलाम बने, उस शिक्षा-पद्धति को यदि हम स्वराज्य के बाद भी जारी रख सकें, उसको सहन कर सके तो इसका मतलब यही होता है कि हम इस विषय मे सोचते ही नहीं हैं। हमारे सामने दूसरी कई समस्याएँ हैं। उन समस्याओं ने हमारा सारा दिमाग व्यस्त कर दिया है। और उन समस्याओं के हल में हम मशगूल हैं। हमको कुछ सूझता नहीं है। लेकिन मैं कहता हूँ कि जो हमारी कठिन समस्याएँ है, वे भी तभी हल होंगी, जब अपनी शिक्षा मे हम फर्क करेंगे।

"इसलिए आप सब नागरिकों को एक आवाज से कहना चाहिए कि यह शिक्षा हमें नहीं चाहिए। इसमे जरूर परिवर्तन होना चाहिए।"

हैदराबाद की जिम्मेवारी

हैदराबाद
६-४-'५१

हैदराबाद शहर के निवासियों ने विनोबाजी का अभूतपूर्व स्वागत किया। सवेरे पाँच बजे से लोग जगह-जगह जमा हो गये थे। हुसेनसागर तालाब से चमनबाग तक सारे रास्ते रामधुन गूँज उठी। बीच में एक हरिजन छात्रालय को भेंट देकर सात बजे के पहले-पहले चमन आ पहुँचे। मूसा नदी के किनारे चमन एक सुंदर बगीचा है। यहीं से बापूजी की भस्म का संगम में विसर्जन हुआ था। आज दिन भर मिलनेवालों का ताँता-सा लगा रहा। दोपहर को सामुदायिक कताई में करीब डेढ सौ भाई-बहन उपस्थित थे।

कार्यकर्ताओं की सभा में अनेक प्रश्नोत्तर हुए।

प्राकृतिक चिकित्सा की प्रतिष्ठा क्यों नहीं ?

पहला प्रश्न निसर्गोपचार के क्षेत्र में बरसों से सेवा-कार्य करते रहनेवाले एक कार्यकर्ता का था: अभी तक प्राकृतिक चिकित्सा के कार्य को प्रतिष्ठा क्यों नहीं मिली ?

विनोबा ने उनका दुःख समझकर उन्हें सांत्वना देते हुए कहा : "जिस तरह हम लोग यह कह सकते हैं कि हमने तीस साल से सिवा खादी के और किसी वस्त्र का उपयोग किया ही नहीं, वैसे क्या यह कह सकते हैं कि हमने इलाज भी प्राकृतिक चिकित्सा के सिवा दूसरा करवाया ही नहीं ?"

उनकी निष्ठा और लगन को बल देते हुए विनोबा ने आगे कहा : "लेकिन हमें तो फल की अपेक्षा रखे बिना काम ही काम करते रहना है। प्राकृतिक चिकित्सा के क्षेत्र में तो यह और भी आवश्यक है। हमारा काम यशस्वी होगा, तो हमारे मरीज ही हमारे प्रचारक बन जायँगे और काम की प्रतिष्ठा तो बढ़ेगी ही।"

हरिजन शब्द का प्रयोग

एक भाई ने पूछा : "आजकल हरिजन मेहतर ही समझे जाने लगे हैं, तो हम खुद ही अपने नाम के साथ 'हरिजन' शब्द क्यों न लगायें ?"

विनोबा : "आपको अधिकार है, बशर्ते कि आप खुद मानव-मानव में कोई फर्क न करें।"

सर्वोदय की कसौटी

प्रश्न : "कांग्रेस के बड़े-बड़े नेता मंत्रि-मंडल में हैं। सर्वोदय को मानना और मंत्रि-मंडल में रहकर सर्वोदय-विरोधी आचरण करना, यह कैसे उचित है ?"

विनोबा : "सर्वोदय एक विचार है। वह न तो कोई कानून है, न संप्रदाय। वह तो एक ध्रुव है। उसकी ओर देखते हुए चलते रहना है। आप आर्यसमाजी हैं। आर्यसमाज के नियमों के अनुसार चलने की कोशिश आप करते हैं, तो आप आर्यसमाजी रह सकते हैं। आर्यसमाज एक संप्रदाय है। सर्वोदय संप्रदाय नहीं है। उसमें दाखिल होने के कोई नियम नहीं हैं। बीड़ी पीनेवाला या शराबी सर्वोदय विचारवाला नहीं हो सकता, ऐसा नहीं कह सकते। हो सकता है, ऐसा भी नहीं कह सकते। अपने लिए कठोर कसौटी रखनी चाहिए। दूसरों के लिए वे जो कहें, सत्य समझना चाहिए। इसलिए सर्वोदय-

विचारवाले लोग हर जगह हो सकते हैं—सरकार में भी और व्यापार में भी। वे सर्वोदय की दिशा में बढ़ते रहेंगे। अर्थात् हम सर्वोदय की कसौटी पर दूसरों को नहीं, अपने आपको ही कस सकते हैं।"

प्रश्न : "क्या सर्वोदय-समाज एक राजनैतिक पार्टी के रूप में काम करेगा ?"

उत्तर : "सर्वोदय-समाज केवल व्यक्तियों के लिए है। संस्था या संघ के लिए नहीं। सर्वोदय में करोड़ों लोग शामिल हो सकते हैं। परन्तु चुनाव के लिए सर्वोदय के टिकट पर खड़े नहीं किये जा सकते।"

रचनात्मक कार्य और सरकार

प्रश्न : "रचनात्मक कार्य सरकार के जरिये कराना अच्छा है या जनता की ओर से ही होना चाहिए ?"

उत्तर : "दोनों कर सकते हैं। ढंग दोनों का अलग-अलग होगा। जो चीज आम जनता में चलानी है, लेकिन लोगों में अभी प्रिय नहीं है, वह सरकार नहीं कर सकती। लोगों के लिए आवश्यक, किन्तु लोगों को प्रिय न लगनेवाली बात करने के लिए सुधारक लोग चाहिए। लोकनेता केवल सेवक नहीं होते। वे समाज को आगे ले जानेवाले भी होते हैं। लेकिन सरकार तो वही कर सकती है, जो लोग चाहते हैं। लोग शराबबंदी नहीं चाहेंगे, तो सरकार नहीं कर सकती। सेवक उसके लिए कोशिश कर सकता है। यानी सरकार लोकमान्य तामीरी काम कर सकती है। लोकसेवक क्रांतिकारी कार्य भी कर सकता है।"

प्रश्न : "इतनी कोशिशों के बाद भी खादी का प्रचार ठीक-ठीक होता दिखाई नहीं देता। सरकारी मदद से इसका प्रचार कराने के संबंध में आपकी क्या राय है ?"

उत्तर : "चाय का प्रचार तो सरकारी मदद के बिना भी घर-घर हो गया। मामूली लिप्टन ने वह कर दिया। खादी का प्रचार इतना आसान नहीं है। खादी का कार्यक्रम आज के प्रवाह के विपरीत है। लेकिन उसका बीज बोया जा चुका है। वह उगेगा या नहीं, इसीमें लोगों को शंका थी। ऐसे काम आरंभ में कठिन ही होते हैं। गांधीजी की खूबी यह थी कि उन्होंने प्रचलित राजकारण में खादी और हरिजन-सेवा जैसी अलग-अलग धाराएँ छोड़ दीं। अब आज यदि सरकारें केवल खादी को चलाना चाहें, तो मैं उसका विरोध नहीं करूँगा। पर मुझे इसमें शंका है। क्योंकि अगर वह यह कहे कि हमें मिलें नहीं चाहिए, हम खादी ही चलायेंगे, तो वह डॉवाडोल हो जायगी। लोग चुनाव के लिए आवाहन देंगे। खादी के मसले पर चुनाव हो, तो खादीवाला हार जायगा और मिलवाला चुना जायगा।"

एक भाई—"तो आप जैसों को खड़ा होना चाहिए, विनोबाजी !"

विनोबा—"मैं तो बुरी तरह हारूँगा।"

सारी सभा हास्य-लहरों में डूब गयी !

चर्चा के बाद प्रार्थना हुई। चमन की हरियाली पर स्वच्छ नीलाकाश के नीचे करीब दस हजार लोगों ने सर्वोदय का संदेश सुना। प्रार्थना के बाद जो दो मिनट की शांति रखने को कहा जाता है, उसका तो आज मानो प्रत्यक्ष परस ही हुआ—इतनी अद्‌भुत शांति छोटे-बड़े सबने रखी। भाषण कई दृष्टियों से महत्त्वपूर्ण था। विनोबा ने कहा :

"आज करीब एक महीना हुआ है पैदल यात्रा करते हुए। अभी मैं आपके गाँव आ पहुँचा हूँ और कल परमेश्वर की कृपा से शिवरामपल्ली जाना होगा। आप लोग जानते हैं, वहाँ एक सर्वोदय-सम्मेलन हो रहा है। उसके लिए हम पैदल निकल पड़े

हैं। आप लोगों में से भी बहुत सारे वहाँ पहुँच जायेंगे और जो कुछ वहाँ पर प्रार्थना आदि मे सुनने का अवसर मिलेगा, उसमें शरीक होंगे, ऐसी मैं उम्मीद करता हूँ।"

आज सुबह पाँच बजे हम सिकंदराबाद से निकले और यहाँ पैदल आये। बीच में लोगों ने हम पर काफी प्रेम बरसाया। हम नहीं जानते कि उस प्रेम के लायक हम कब बनेंगे। उसके लिए अभी तो हम इतना ही कर सकते हैं कि आप लोगों का शुक्रिया मानें।

हरिजनों के अलग छात्रालय क्यों?

"लेकिन उसमें एक घटना हुई, जिसका मुझे कुछ रंज रहा। वह मैं आप लोगों के सामने रख देना चाहता हूँ। और वहीं से मुझे जो कुछ कहना है, उसका आरंभ भी हो जाता है। हुआ यह कि बीच में हमें रोक लिया गया और एक हरिजन छात्रालय में ले गये। वहाँ पर कोई बीस-पचीस हरिजन छात्र खड़े थे। उनसे मुलाकात हुई। हमने पूछा कि यहाँ हरिजनों के अलावा और भी कोई दूसरे लड़के रहते हैं? तो जवाब मिला कि नहीं, सिर्फ हरिजन ही यहाँ रहते हैं। तो यह सुनकर मुझे अच्छा नहीं लगा। मैंने वहाँ भी बताया और वही बात यहाँ भी रखना चाहता हूँ कि इस तरह हरिजनों के अलग छात्रालय चलाना कोई अस्पृश्यता मिटाने का सही तरीका नहीं हो सकता, बल्कि वह अस्पृश्यता टिकाने का ही तरीका हो सकता है। पहले जब ये छात्रालय शुरू हुए, तब इनकी जरूरत उस हालत में रही होगी। उसकी बहस में मैं नहीं पड़ता। लेकिन आज जो स्थिति है, उसमें मेरा मानना है कि हरिजनों के अलग छात्रालय नहीं चलने चाहिए, बल्कि सब छात्रालयों में उनको जगह देनी चाहिए। उनकी तालीम के लिए जो भी सहूलियतें दी जा सकती हैं, वे जरूर दी

जानी चाहिए। लेकिन उनको अलग जाति के प्राणी समझकर रखना किसी भी तरह उचित नहीं है। इन दिनों अगर हम यह तरीका अख्तियार करेंगे, तो उससे हम अपना मकसद हासिल नहीं करेंगे, बल्कि उलटी दिशा में चले जायेंगे। मैंने तो सुना कि यह हालत इस एक ही छात्रालय की नहीं है, बल्कि सारे राज्य में ऐसा ही कुछ चलता है; और इस तरह अलग-अलग छात्रालय रखने से हरिजनों की सेवा होती है, ऐसा लोगों का खयाल है। यह मैं जरूर समझ सकता हूँ कि जिन्होंने यह शुरू किया है, उन्होंने हरिजन-छात्रों की सेवा के खयाल से ही किया है और छूत अछूत का भाव मिटाने की भी उनकी मशा है। लेकिन बावजूद उनकी इस मशा के और सद्भाव के यह वह तरीका नहीं है, जिससे हमारा सारा समाज एकरस बन जाय।

समाज को एकरस बनाने की आवश्यकता

"हमको जो काम करना है, वह यही है कि हिन्दुस्तान का सारा समाज एकरस बन जाय। इतने बड़े समाज में मुख्तलिफ विभाग हो सकते हैं। उसमें कोई बात नहीं है। कई धंधे रहते हैं। उनको करनेवालों के मानसिक संस्कार अलग-अलग होते हैं। यह सारी विविधता समाज में रहेगी। लेकिन विविधता के रहते हुए भी अदर से एकता महसूस होनी चाहिए, जिससे सारा समाज एकरस प्रतीत हो। आजकल तो यहाँ तक हालत है कि राज्यों के चुनावों में जहाँ कोई जाति और धर्म का सवाल नहीं होना चाहिए, वहाँ भी चुनाव में जब लोग खड़े किये जाते हैं, तब उनकी जाति और धर्म देखे जाते हैं। और जाति तथा धर्म का खयाल करके ही चुनाव के लिए आदमियों को खड़ा करना पड़ता है। यह सारी दुर्दशा है। इससे हमें मुक्त होना है, यह ध्यान में रहना चाहिए।

"और यह तभी बन सकता है, जब हम हर एक हिन्दुस्तानी को सिर्फ हिन्दुस्तानी के नाते ही देखेंगे। इतना ही नहीं, बल्कि वह एक इन्सान है, इस खयाल से देखेंगे तभी यहाँ का समाज एकरस होगा और हिन्दुस्तान के जरिये दुनिया में जो बड़ा काम होनेवाला है, उसकी पात्रता हममें आयेगी।

हिन्दुस्तान से आशा

"जहाँ मने हिन्दुस्तान के हाथ से होनेवाले बड़े काम का जिक्र किया, वहाँ आप लोग सुनना चाहेंगे कि वह बड़ा काम कौन-सा है। हिन्दुस्तान के लिए परमेश्वर ने एक बहुत ही भारी काम सौंप रखा है। अगर ऐसा उसका विचार नहीं होता, तो हम जैसे टूटे-फूटे लोगों को अहिंसा के तरीके से आगे बढ़ाना, उनको एक बड़ी भारी हुकूमत के पंजे से छुड़ाना और उनके हाथ में हिन्दुस्तान की सत्ता देना, यह सारा नाटक परमेश्वर किसलिए करता? यह उसने इसलिए किया है कि उसकी मंशा है कि हिन्दुस्तान के जरिये एक विचार, जिसकी सारी दुनिया को आज भूख है, फैले।

दुनिया में अहिंसा ही चलेगी

"आप लोगों को इतना तो मालूम है कि यहाँ हम लोगों ने गांधी-जी का एक शब्द ले लिया है, उनकी मृत्यु के बाद। वह शब्द है, सर्वोदय। अब यह शब्द हिन्दुस्तान भर में चल पड़ा है। हिन्दुस्तान के बाहर के लोग भी इस समाज में दाखिल होना चाहते हैं। और यहाँ तक कहते हैं कि हमें कोई ऐसा चिह्न बताओ, जिसके रखने से हम सर्वोदय के सेवक के तौर पर जाहिर हों। हम अहिंसा के प्रेमी हैं, इसका इजहार हो। इस तरह हिंदुस्तान के बाहर के लोग पूछते हैं। यानी सारी दुनिया में एक ऐसी जमात, फिर वह छोटी ही क्यों न हो, तैयार हो रही है, जो अपने को

एक ही कौम, एक ही उम्मत, एक ही जमात मानती है और अहिंसा मे ही दुनिया का भला और छुटकारा देखती है। यह जमात आज छोटी जरूर है, लेकिन आगे वह बढनेवाली है। इसलिए बढनेवाली है कि दिन ब दिन सायन्स की प्रगति होने वाली है। जब कोई मुझसे पूछते हैं कि क्या दुनिया मे अहिंसा फैलेगी, अहिंसा के लिए दुनिया मे मौका है ? तो मैं कहता हूँ कि अहिंसा के ही लिए दुनिया मे मौका है। और इसका सबूत यही है कि दुनिया अब पुराने जमाने की हालत मे रहना नहीं चाहती, बल्कि सायन्स की प्रगति करना चाहती है। जहाँ सायन्स की प्रगति होती है, वहाँ सारी दुनिया, सारा समाज एक बन जाता है। और ऐसी एक शक्ति हाथ में आती है, जिसका जोड हम अगर अहिंसा के साथ न करे, तो मनुष्य की हस्ती ही खतरे मे पड जाती है।

अहिंसा और विज्ञान

"तो अब मनुष्य के सामने यह सवाल नहीं है कि आप हिंसा को पसद करते हैं या अहिंसा को पसद करते हैं। बल्कि यह सवाल है कि आप सायन्स को पसद करते हैं या नहीं ? अगर आप सायन्स को पसद करते हैं, तो आपको हिंसा छोडनी ही होगी। और अगर आप हिंसा को पसद करते हैं, तो आपको सायन्स छोडना होगा। दोनों एकसाथ नहीं चलेंगे। अगर ये दोनो बढते हैं, तो दोनों मिलकर मानव-जाति का खातमा करेंगे। इसलिए अगर हिंसा को चाहते है, तो सायन्स की प्रगति रोकिये। फिर हिंसा कुछ न कुछ चलेगी। और अगर सायन्स की प्रगति को रोकना नहीं चाहते, बढाना चाहते हैं, तो हिंसा को छोडिये। यानी हिंसा या अहिंसा यह सवाल नहीं है, बल्कि सायन्स को चाहने न चाहने का सवाल है।

"मै तो सायन्स को चाहता हूँ, उसमे विश्वास रखता हूँ। सायन्स से ही मानव का जीवन प्रेममय हो सकता है, परस्पर सहकारमय हो सकता है, ज्ञानमय बन सकता है। उसके विचार का स्तर भी ऊँचा हो सकता है। यह सारा विज्ञान से होता है। इसलिए विज्ञान की प्रगति को मै रोकना नहीं चाहता, बल्कि उसको बढाना चाहता हूँ। इसीलिए जानता हूँ कि उसकी तरक्की के साथ हिंसा चलनेवाली नहीं है। तो, हिंसा को छोडना ही होगा। ऐसा सकल्प सायन्स को बढाने के लिए जरूरी है। अगर ऐसा सकल्प में नहीं करता, तो सायन्स का ही शत्रु बन जाता हूँ। आज दुनिया सायन्स को छोडना नहीं चाहती। इससे जो लाभ हैं, वे जाहिर हैं।

इसलिए सारे समाज मे अभी एक ऐसा विचार फैला है— हिंदुस्तान मे और हिन्दुस्तान के बाहर—कि अगर मानवों के मसला को हल करने का कोई अहिंसक तरीका सूझे, तो जरूर उसको खोजना चाहिए और हासिल कर लेना चाहिए। सायन्सवाला को लगता है कि गाधीजी ने जो प्रयोग हिंदुस्तान में किया, उसमें से शायद दुनिया को यह तरीका मिले। दुनिया इसी आशा से हिन्दुस्तान की तरफ देखती है।

हैदराबाद की जिम्मेवारी

"और आज, जब मैं हैदराबाद मे आया हूँ, तो मुझे यह भी कहने की इच्छा होती है कि आपका छोटा-सा हैदराबाद सारे हिंदुस्तान का एक नमूना है। क्योंकि हिन्दुस्तान मे जितना विविधताएँ हैं, वे सब यहाँ मौजूद हैं। यहां हिन्दू और मुसल-मान काफी तादाद मे हैं। अनेक धर्मवाले भी यहाँ इकट्ठे हो गये हैं। यहाँ विविध भाषाएँ विकसित हो रही हैं। इसलिए यह छोटा सा राज्य और यह छोटा सा शहर हिन्दुस्तान की एक प्रतिमा,

हिन्दुस्तान का एक छोटा-सा रूप है। तो जो सवाल हम यहाँ हल करेंगे, उससे सारे हिन्दुस्तान का सवाल हल करने की कुंजी मिल जायगी और सारी दुनिया के सवाल को भी हल करने की कुंजी मिल जायगी। तो हैदराबादवालों की जिम्मेवारी समझाने के लिए मैंने प्रास्ताविक तौर पर ये कुछ शब्द कहे हैं।

"तो आप लोगों को मैं जाग्रत कर देना चाहता हूँ। आप यह मत समझिये कि हम एक छोटे शहर के रहनेवाले हैं। बल्कि यह ध्यान में रखिये कि आप ऐसे शहर के नागरिक हैं, जो सारे हिंदुस्तान का प्रतिनिधित्व करता है। तो यहाँ अगर आप एक अच्छाई का, भलाई का नमूना बता सकें, जिससे कि यहाँ की समस्याएँ हल हुई, तो आप समझ लीजिये कि आपने सारे हिन्दुस्तान की एक बड़ी भारी खिदमत की। तो यह एक उत्तम मौका आप लोगों को मिला है। यहाँ आपकी हुकूमत कायम हुई है। कुछ लोगों ने कहा कि यहाँ के कार्यकर्ताओं में अनुभव की कमी है। तो मैंने कहा कि भाई मैं तो उलटा मानता हूँ। यानी हिन्दुस्तान में कांग्रेस ने साठ साल तक जो अनुभव लिया, वह तो यहाँ के लोगों को मुफ्त में मिला है। और उसके साथ-साथ उन्होंने जो अपना अनुभव हासिल किया होगा, वह अलग। इस तरह से यहाँ के लोगों को ज्यादा अनुभव है, ऐसा समझना चाहिए। जो लड़का एक विद्वान् पिता के घर में पैदा होता है, उसको पिता की विद्या तो पहले से ही प्राप्त होती है; साथ-साथ वह अपनी विद्या भी बढ़ाता है, तो वह पिता से भी बढ़कर विद्वान् होता है। यही हालत हैदराबाद की है, और हैदराबादवाले हिन्दुस्तान को राह दिखा सकते हैं।

गाँवों में रामराज्य की संभावना

"हैदराबाद राज्य में मैं अभी पैदल चलता हुआ आया, तो रास्ते

में ऐसे कई गाँव मिले, जिनको छोड़ने की इच्छा नहीं होती थी। वहाँ की मानवता किसी भी दूसरी जगह की मानवता से कम नहीं थी और वहाँ मैंने प्रेमभाव भरा हुआ पाया। वह एक ऐसा वातावरण था, एक ऐसी हवा थी कि जहाँ अगर सेवकगण रह जायँ, तो एक स्वावलंबी स्वराज्य जैसी वस्तु हम दिखा सकते हैं। आपका यह प्रदेश पिछड़ा हुआ है, ऐसा कहते हैं। अच्छी सड़कें यहाँ नहीं हैं, ऐसा भी कहते हैं। बात तो ठीक है। लेकिन यह जो पिछड़ी हुई हालत है, उसीका अगर हम लाभ उठायें, तो आगे बढ़ सकते हैं। क्योंकि जहाँ ये सड़कें वगैरा होती हैं, वहाँ दूसरी सहूलियतें तो हो ही जाती हैं। साथ-साथ दुनिया की कई बुराइयाँ भी वहाँ आ पहुँचती हैं। तो वे बुराइयाँ अभी तक कई गाँवों में नहीं पहुँची हैं। ऐसे गाँवों में अगर हमारे कार्यकर्ता रह जायँ और उस-उस गाँव के लिए सोचने लगें, तो एक-एक गाँव में एक-एक रामराज्य स्थापित कर सकते हैं। यह स्थिति मैंने कई हिस्सों में देखी।

"फिर मैंने सोचा, यहाँ अनेक जमातें इकट्ठी होती हैं और अनेक भाषाएँ इकट्ठी होती हैं। ये लोग अगर थोड़ी कोशिश करेंगे, तो सारे हिन्दुस्तान के अगुआ बन सकते हैं। और ऐसी कोशिश यहाँ क्यों नहीं होगी? अगर यह ठीक तरह से अनुभव हो और ध्यान में आ जाय कि हम अगर इस तरह करते हैं, तो सारे हिन्दुस्तान को एक उत्तम मार्ग बताते हैं और यहाँ बैठे-बैठे हिन्दुस्तान की सेवा करते हैं, तो यहाँ के छोटे-छोटे कार्यकर्ता अपने को छोटा नहीं मानेंगे, बल्कि यह महसूस करेंगे कि हम तो परमेश्वर का कार्य करनेवाले उसके भक्तगण हैं। फिर वे अपने सारे भेद भूल जायेंगे और जनता की सेवा में लग जायेंगे। तो उससे उनके चित्त का समाधान होगा, हैदराबाद राज्य को लाभ होगा और उसके साथ-साथ सारे देश को लाभ होगा।

राष्ट्रभाषा का मसला

"देखिये, यहाँ पर इतनी भाषाएँ हैं : मराठी भाषा है, कन्नड़ है, तेलुगु है, उर्दू है और हिन्दी है। ये पाँच भाषाएँ यहाँ चलती हैं। अगर आप एक-दूसरे की भाषा सीखने की कोशिश करें और उसके लिए लिपि एक बना दें, तो देखेंगे कि हिन्दुस्तान का मसला आप हल कर सकते हैं। नागरी लिपि में उर्दू लिखी जाय। हिन्दी और मराठी नागरी में लिखी ही जाती है। कन्नड़ और तेलुगु भी नागरी में लिखी जायँ। अगर आप यह आरंभ करें, तो हिन्दुस्तान का एक बड़ा भारी मसला हल हो जाता है। हिन्दुस्तान में जो दूसरी जबानें हैं, वे एक-दूसरी से बहुत अलग नहीं हैं। लेकिन उनकी लिपियाँ अलग हैं। ये दीवाल की तरह खड़ी होती हैं और भाषाओं का अध्ययन करने की हमारी हिम्मत नहीं होती। मैं तो हिन्दुस्तान की बहुत सारी लिपियाँ सीख चुका और भाषाएँ भी सीख चुका हूँ। अपने अनुभव से मैं कहता हूँ कि एक-एक भाषा सीखने में मुझे बहुत तकलीफ हुई है। आँख को भी तकलीफ हुई है। तो यदि आप नागरी लिपि में ये सारी जबानें लिखते हैं, कुछ किताबें भी तैयार करते हैं और आपकी स्टेट अगर इसका जिम्मा उठाती है या कोई परोपकारी मंडली ऐसी पुस्तकों के प्रकाशन का जिम्मा उठाती है, तो समझ लीजिये कि एक लिपि का एक बड़ा भारी विचार आप हिन्दुस्तान को देते हैं।

"इससे यह होगा कि उर्दू अगर नागरी में लिखी जाने लगी, तो हिंदी पर उर्दू का बहुत असर होगा और हिन्दी ठीक रास्ते पर रहेगी। मेरे कहने का यह मतलब तो नहीं है कि कन्नड़ या उर्दू या तेलुगु लिपि न चले। इन लिपियों में भी खूबियाँ हैं। इसलिए ये भी चलें, लेकिन इनके साथ-साथ अगर ये सारी भाषाएँ

नागरी में लिखी जाती हैं, तो अच्छी हिन्दुस्तानी कैसी हो सकती है, इसका नमूना आपने पेश कर दिया। सारे हिन्दुस्तान को एक कौमी जबान चाहिए, यह सब लोग मानते हैं। लेकिन उस कौमी जबान का रूप क्या होना चाहिए, इस विषय में काफी बहस हुआ करती है। यह सारी बहस खतम हो जायगी और यहाँ आप ऐसी खूबसूरत हिन्दुस्तानी सारे राष्ट्र के लिए देंगे कि जिसको बाकी के सारे लोग सहज ही उठा लेंगे। यहाँ उर्दू तो पहले से ही चलती है और उसकी काफी प्रगति भी हुई है। वह उर्दू अगर थोड़ी आसान करके नागरी लिपि में लिखी जाय, तो आपने राष्ट्रभाषा के लिए बड़ा भारी काम किया और हिन्दुस्तान का मसला हल कर दिया।

"ऐसा आप करेंगे तो यहाँ की जमातें एक-दूसरे की भाषा प्रेमभाव से जल्दी ही सीख लेंगी। यह तो मैंने सहज आपके सामने विचार रख दिया। इस पर से आपके ध्यान में आ जायगा कि हिन्दुस्तान के मसले आप किस तरह आसानी से हल कर सकते हैं।

खादी और हरिजन-सेवा की अनुकूलताएँ

'अभी आप देखेंगे कि इस हैदराबाद राज्य में खादी के लिए जितनी सहूलियतें हैं, जनता में उसके लिए जो शक्यताएँ हैं, उतनी हिन्दुस्तान के दूसरे हिस्सों में नहीं हैं। तो अगर आप रचनात्मक काम करनेवाले इस काम में लग जायँ और हरएक को कातना-बुनना सिखा दें, तो जो परम्परा यहाँ मौजूद है उसका पूरा लाभ मिलेगा और आप देखेंगे कि यहाँ खादी पनपेगी, ग्रामोद्योग पनपेंगे। आप यह भी देखेंगे कि यहाँ की जनता में छूत-अछूत का भाव इतना नहीं है, जितना हिन्दु-

स्तान की दूसरी जगहो मे है। उसके कई कारण हैं। मुख्य कारण तो यही है कि यहाँ की अनेक जमातें और कोमे, किसी भी कारण से कहिये, एक दूसरे से मिलती-जुलती रही हैं। नतीजा उसका यह हुआ कि जमातो के बीच जो कठोरता व्यवहार में दूसरी जगह दीख पडती है, वह कट्टरपन और कठोरता यहाँ इतनी नहीं है। तो यहाँ छूत-अछूत का सवाल भी आप बहुत शीघ्रता से मिटा सकते हैं। मैंने आपके देहातो मे कई जगह पूछा कि हरिजनो के बारे मे क्या स्थिति है, तो लोग यही कहते हैं कि हाँ, हरिजन हमारे ही हैं। उनके लिए अलग स्कूल चाहिए, ऐसा कहीं भी नहीं सुना। यह हालत हिन्दुस्तान के दूसरे भागो मे नहीं है। तो यह सारा लाभ आपको मिल सकता है।

सर्वोदय की ज्योति

"मेरा कहना यह है कि आप लोग अपना दिल बडा बनाइये। आप समझिये कि आपको एक बडा भारी मौका मिला है। जब तक यह हैदराबाद स्टेट आज के जैसी कायम है, तब तक आपको यह एक मौका मिला है। हाँ, मैं यह नहीं सुझाना चाहता कि यहाँ के भाषावार विभाग उन उन भाषावाले प्रातो मे न मिले। यह सारा मैं कहना नहीं चाहता। यह तो जैसा आप चाहेंगे, वैसा कर सक्ते हैं। लेकिन जब तक यह स्टेट एक है, तब तक एक बडी भारी चीज करने का आपको मौका मिला है। जिसका लाभ उठाइये और यहाँ की सारी कोमे मिलकर एक जमात हैं, सब भाई भाई हैं, यह आप सिद्ध करके बताइये। यही आप लोगो से मेरी अर्ज है। ऐसा हुआ तो कहा जायगा कि शिवरामपल्ली म जो सर्वोदय सम्मेलन हुआ, वह सार्थक हुआ और सर्वोदय की ज्योति सारी दुनिया के सामने हैदराबाद ने प्रकट की।"

गाँवों के लोग हमें बुला रहे हैं : ३४ :

शिवरामपल्ली
७-४-'५१

हैदराबाद की जनता ने ऐसे तो कल ही पूरी भक्तिभावना से और बहुत ही शाही ढंग से संत का स्वागत किया था। इस अवसर की प्रतीक्षा भी वे गत एक माह से उत्सुकतापूर्वक कर रहे थे। हैदराबाद आने के निमित्त ही पदयात्रा का संकल्प कार्यान्वित हुआ था। इसलिए उस संकल्प मे हैदराबादवासियों को अपनी भी कुछ जिम्मेवारी महसूस हो रही थी। फलतः अपने इस अति महँगे और अनोखे अतिथि के आगमन के निमित्त उनकी सारी भावनाएँ कल सहज ही उमड़ पड़ीं। और आज हैदराबाद नगरी से शिवरामपल्ली जाते हुए उस उत्साह और भावना मे और भी अधिक बाढ़ आ गयी। स्वागत के जुलूस में कल बहनें कम प्रमाण में दिखाई दे रही थीं। परंतु आज दृश्य दूसरा ही था। हैदराबाद मुस्लिम संस्कृति से प्रभावित होने के कारण सामाजिक रूढ़ियों में परदे की प्रथा ने गहरा प्रभाव यहाँ के समाज-जीवन पर डाल रखा है। परंतु आज संत-दर्शन की लालसा ने ये सारे बंधन ठुकरा दिये। कभी घर से बाहर न निकलनेवाली बहनें सैकड़ों की तादाद में हाथ में मंगल-कलश, फूल-मालाएँ और दीपक लेकर अपनी भावांजलियाँ अर्पण करने के लिए बहुत सवेरे से रास्ते पर जमा हो गयीं। संत के दर्शन ठीक हो सकें, इसलिए ठौर-ठौर प्रकाशवान रोशनी का प्रबंध था। सारा रास्ता साफ सुथरा और पानी से छिड़काया देकर रखा गया था। उस दर्शना-

भिलाषी उत्सुक भीड़ को विनोबा के साथ चलनेवाले जन-समुदाय के प्रवाह ने और भी घना रूप दे दिया, जिसके कारण बहनों को अपनी अञ्जलियाँ संत के चरणों में धरते-धरते अपने को सँभालना भी कठिन हो गया। छोटे-छोटे बालकों को और उनकी माताओं को तो बडी असुविधा का सामना करना पड़ा। इधर पीछे से बढ़ती चली आनेवाली भीड़ को आगे की स्वागत-सामग्री का पता भी नहीं था। और उसमें विनोबा की वह तूफानी चाल। जो पीछे रहा, वह रह ही गया। आखिर एक स्थान पर तो इतना जन-समूह जमा हो गया कि जन्माष्टमी को गोकुल-वृंदावन में या आषाढ़ी-कार्तिकी को भीमा के किनारे पंढरपुर मे होता हो। एक अद्भुत दृश्य था।

आखिर जब भीड़ पर काबू पाना कार्यकर्ताओं के लिए असंभव हो गया, तो विनोबा ने खुद ही कुछ सोचा और एक-ब एक दौड़ना शुरू किया, जिससे जो साथ हो लिये, वे तो हो लिये; किन्तु काफी लोग पीछे छूट गये और भीड भी कुछ सँभली। सहयात्रियों ने तथा नगरवासियों ने भी काफी संख्या में साथ दिया। वृद्धा माता जानकीदेवीजी बजाज जैसों ने भी पाँव में चोट और शरीर में ज्वर होते हुए विनोबाजी के कदम पर कदम रखकर साथ-साथ दौड़ने का साहस किया। उनके उत्साह से युवकों को भी दूना जोश मिला। विनोबाजी के रूप में उस राम के सेवक को दौड़ते देखकर लग रहा था कि कोई महान् प्रेरणा ही साकार होकर दौड़ रही है और अपने देशवासियों को भी तेजी से अपने साथ आगे ही लेती चली जा रही है।

शिवरामपल्ली में आश्रमवासी जन, स्वागत-समिति के सदस्य, बाहर से आये हुए सेवक-गण, सभी ने अत्यन्त सादगी और नम्रता से विनोबा का स्वागत किया। श्री लक्ष्मीनहन और

ज्ञानवहन ने कुंकुमादि के साथ ज्यों ही नारियल (श्रीफल) भेंट किया, तो उसे यात्रा के आदिपर्व की समाप्ति के उपलक्ष्य में प्रभु-प्रसाद मानकर विनोबा ने शिरोधार्य कर लिया। दोनों हाथों से उस श्रीफल को मस्तिष्क पर रखकर राम-धुन गाते हुए उस आँगन में प्रवेश किया, जहाँ अब सात दिन तक सज्जनों का मेला जुटनेवाला था तथा जिसकी समाप्ति विनोबा के लिए अपने नये प्रवास की प्रभाती बननेवाली थी।

आज शाम का प्रार्थना-प्रवचन हैदराबाद तक की पदयात्रा की दृष्टि से आखिरी था। इस प्रवचन में विनोबा ने अपने गत एक मास के अनुभवों का सार बड़े मार्मिक एवं हृदयग्राही शब्दों में बताया। उन्होंने कहा कि "देहातों की हालत हम कल्पना करते थे, उससे भी बदतर दिखाई दी। घर-बैठे हम इतनी कल्पना नहीं कर सकते हैं। कई देहात तो ऐसे मिले कि अगर शिवराम-पल्ली आने की आवश्यकता न होती, तो चंद रोज वहीं रह जाने की इच्छा होती।" कारण बताते हुए विनोबा ने कहा: "एक स्थान को देखना, वहाँ की कमियाँ महसूस करना, वहाँ की समस्याओं को समझना, उन समस्याओं को हम हल कर सकते हैं, ऐसा विश्वास अनुभव करना, और फिर भी उस स्थान को छोड़कर आगे बढ़ना अच्छा ही नहीं लगता था।"

जहाँ-जहाँ संभव हुआ, विनोबाजी ने पदयात्रा में स्थानिक कार्यकर्ता की खोज करके उसे काम की प्रेरणा देकर उसके द्वारा वहाँ का काम चलता रहे, ऐसी योजना की थी। परंतु देश को तो लाखों कार्यकर्ताओं की आवश्यकता थी, इसलिए विनोबा ने अपना पुराना सुझाव दोहराया कि "कार्यकर्ता, जो अक्सर शहरों में रहते हैं—क्यों न अपना निवास देहातों में रखें? हरएक के नाम पर अगर एक देहात रहेगा, तो बहुत भारी काम होगा।"

आज शाम का प्रवचन प्रदर्शन के उद्घाटन का भी निमित्त बना था। इसलिए यात्रा में खादी के संबंध में जो विशेष दर्शन हुआ, उसका भी जिक्र किया। विनोबा ने कुछ लोगों की इस मान्यता को गलत बताया कि शायद खादी का काम आगे भी न चले। यात्रा में जो लोग उनसे मिलने आते—जिनमें तज्ञ भी थे—उनसे उन्होंने पूछा था कि खादी के सिवा कौन जरिया है, जिससे देहात के लोगों को राहत पहुँचायी जा सके, उन्हें ढाढ़स बँधाया जा सके। कोई जरिया किसीने नहीं सुझाया था। "अगर किसीके पास कोई सुझाव हो, तो मैं चर्चा करने को तैयार हूँ"—उन्होंने एलान किया।

उन्होंने कहा : "जमीन का बँटवारा होने पर भी बिना चरखे के किसानों की हालत नहीं सुधरेगी। खद्दर का मंत्र, जो हमें गांधीजी ने दिया है, कमजोर नहीं हुआ है, मजबूत हुआ है। गांधीजी के जाने के बाद कोई ऐसी परिस्थिति नहीं हुई है कि हम खादी को अलग करके भी अपनी समस्या हल कर सकें।" इसलिए उन्होंने इस बात पर भी जोर दिया कि जिस चीज का कच्चा माल गाँवों में पड़ा है, उसका पक्का माल गाँवों में ही बनना चाहिए और वे धन्धे गाँवों के लिए रिजर्व होने चाहिए।

देहात के लोग गांधीवालों से जो आशा-अपेक्षा करते हैं, उसका जिक्र करते हुए विनोबा ने कहा : "देहात की सेवा तो दूसरे बहुत सारे लोग भी करते हैं, परंतु देहातवाले आशा रखते हैं कि गांधीजी के पीछे उनके सेवकगण अब उनकी सेवा में लग जायँगे। वे गांधीवालों से आशा क्यों करते हैं? इसलिए कि दूसरे लोगों की सेवा नाममात्र की होती है—स्फूर्तिदायी नहीं होती। निष्क्रिय तो होती ही नहीं। और इस वक्त

आवश्यकता है निष्काम सेवा की। याने ऐसी सेवा की, जिसके पीछे दूसरा कोई उद्देश्य न हो, सिवा इसके कि जिनकी हम सेवा करते है, उनकी उस सेवा के जरिये हिम्मत बँधायी जाय, मदद पहुँचायी जाय।" विनोबा ने स्पष्ट कहा कि "आजकल जो सेवा की जाती है, वह अपने मनोवांछित कार्य के खयाल से की जाती है और वह भी बहुत कम।"

और फिर अत्यंत करुणा-भरे भावो से कहा :

"भाइयो, हमने अपनी यात्रा मे ऐसे अनेक गाँव देखे, जहाँ ज्ञान का प्रचार केवल शून्य है, जहाँ किसी तरह की रोशनी नहीं पहुँची है, जहाँ न कोई स्कूल है, न बच्चो के विकास का कोई विचार ही है; उन सारे गाँवो के लोग हमें बुला रहे हैं। और कह रहे हैं कि भाइयो, स्वराज्य मिला है, जिनके नाम से और जिनके लिए आपने स्वराज्य हासिल किया—उनकी सेवा के लिए अब फुरसत पाइये और आइये।"

...

७ से १३ अप्रैल : शिवरामपल्ली
१४ अप्रैल : गोपुरी

शिवरामपल्ली के एक सप्ताह के निवास में विनोबाजी ने संमेलन में आये हुए मित्रों के सामने तो अपने विचार रखे ही, प्रांत-प्रांत के कार्यकर्ताओं से वे अलग से भी मिले, व्यक्तिगत भी और समुदाय में भी। समेलन में जो चर्चा हुई तथा विनोबाजी ने समय-समय पर जो विचार प्रकट किये, सर्वोदय-समाज के भावी कार्यक्रम की दृष्टि से, उनको विनोबा ने फिर इस प्रकार सूत्रबद्ध भी कर दिया :

"अंतःशुद्धिर्बहिःशुद्धिः श्रमः शांतिः समर्पणम्"

अपने अंतिम भाषण में उन्होंने स्वयं ही इस सूत्र का थोड़े में भाष्य भी पुनः कर दिया—अंतःशुद्धि याने हृदय की शुद्धि—याने अपने व्यवहार की शुद्धि। बहिःशुद्धि अर्थात् गाँव-गाँव में सार्वजनिक सफाई। श्रम में सिर्फ परिश्रम करने का विधान नहीं है, तद्विषयक निष्ठा बढ़ाने की अपेक्षा है। शांति अर्थात् जगह-जगह शांति-सेना का निर्माण और अंत में "समर्पण" जिसमें माँग तो प्रतीक के तौर पर सबसे एक गुंडी वार्षिक की ही की है—परंतु भावना सारे जीवन के समर्पण की निहित है, जीवन, उसके अहंकार के साथ।

सर्वोदय-संमेलन के लिए शुभ कामनाएँ भेजते हुए पं० जवाहरलालजी ने लिखा था कि "सारी दुनिया में कुछ अंधेरा-सा छाया है—हमारे देश में भी पुरानी रोशनी बहुत धीमी हो

गयी है। अक्सर अँधेरा मालूम होता है। चारों तरफ से बड़े-बड़े प्रश्नों ने हमें घेर लिया है। ऐसे समय हम सबका कर्तव्य है कि रोशनी की तलाश करें। इसमें सर्वोदय बहुत सहायता दे सकता है और उसकी तरफ हमारी निगाहें है।"

विनोबाजी ने उपर्युक्त संदेश का जिक्र करते हुए अपने प्रवचन में कहा कि "यह संदेश बहुत विनय-संपन्न है। पुरानी रोशनी से मतलब साफ था।" उन्होंने यह भी कहा कि "जवाहरलालजी बापू की राह पर चलने का प्रयत्न करते हैं। संदेश हमें सावधान करता है और दिशा भी बताता है, यद्यपि दिशा-दर्शन का अहंकार उसमें नहीं है। दिशा यह कि हमें भी रोशनी की तलाश करनी चाहिए।"

दो-तीन रोज जो चर्चा संमेलन में हुई, उसको इस दृष्टि से विनोबा ने उपयुक्त बताया। आर्थिक समता के संबंध में पूछे गये एक प्रश्न के उत्तर में विनोबा ने एक नया दृष्टिकोण सबके सामने रखा। संमेलन की फलश्रुति में यह विचार अत्यन्त महत्त्व का मानना चाहिए। उन्होंने कहा: "मानव का विकास लाखों वर्षों से होता आ रहा है। इस विकास-क्रम में उसने हजारों वर्ष दया के विकास में लगाये। अब दो हजार वर्षों से समता के विचार का भी विकास हो रहा है"—लेकिन उन्होंने कहा—"समता के विचार का विकास भी हजारों साल लेनेवाला है।" दया का निषेध करके समता की स्थापना करने की लालसा रखनेवालों को उन्होंने आगाह किया कि समता का विरोध विषमता से होता है, दया से नहीं। तो सोचने का ऐसा ढंग हमें सूझना चाहिए कि जिससे दया का विकास करनेवालों का सारा पुण्यबल, उनकी सारी तपस्या—समता के विकास के उद्योग में हमें मिल जाय।

सोचने का ढंग भी बताया : "हम यों कहें कि दया का विकास करते-करते आखिर अनुभव से हम इस नतीजे पर आये हैं कि समता निर्माण करना ही सच्ची दया है। सच्ची दया तब होती है, जब हम समता स्थापित करते हैं। दया का विकास करने के कारण ही और उस अनुभव से ही हमें सूझा है कि अब हमें समता स्थापित करनी चाहिए। इस तरह हम सोचेंगे, तो पूर्वजों की सारी तपस्या हमें मिल जायगी—और उस पर एक नयी तपस्या हम खड़ी कर सकेंगे।" विनोबा ने समझाया कि दया के विकास की परंपरा का खंडन करके समता को नये विचार के रूप में प्रस्थापित करने का प्रयत्न गलत होगा।

समता को दस-पाँच साल में स्थापित करने की कल्पना करनेवालों को आगाह करते हुए उन्होंने कहा : "जैसे दया भी मिथ्या हो सकती है और एक ओर अहंभाव तथा दूसरी ओर दीनता पैदा करती है, वैसे समता भी कहीं मिथ्या न बने और उसके कारण हम विवेक न खो बैठें। क्योंकि विवेक को मिटानेवाली समता भी मिथ्या साबित होगी।"

एक तरह से उन्होंने समता की साधना के बाद का अगला कदम भी बता दिया कि "यदि समता की स्थापना में विवेकहीनता का दोष रह गया, तो संभव है लोग "विवेक-विकास" के प्रयोग में लग जायँ और उसमें भी हजारों वर्ष लगा दें।"

अंत में चित्त संशोधन का महत्त्व बताकर कहा कि "समता का विवेकयुक्त और पूर्ण दया के रूप में हमें विकास करना है—यों समझकर अपने चित्त का संशोधन हमें करना चाहिए।"

वर्धा से चलते समय विनोबा ने अपने लक्ष्मीनारायण मंदिर के व्याख्यान में जिस बात का संकेत किया था कि पता नहीं फिर कब मिलेंगे, और शायद यह मुलाकात आखिरी ही

हो—उसका मानो रहस्य बताते हुए ही विनोबाजी ने अपना भावी कार्यक्रम भी संमेलन के सामने रख दिया :

"इसके आगे मैंने सोचा है कि ईश्वर की इच्छा होगी, तो कम्युनिस्ट लोगों ने जहाँ काफी काम किया है और कुछ ऊधम भी मचाया कहा जाता है, उस सारे प्रदेश में पैदल घूम लूँ। ऐसा एक-दो महीने का कार्यक्रम रखा जा रहा है। मेरी ख्वाहिश है कि सरकार इसमें मुझे पूरी मदद दे। मैं सरकार से यही मदद चाहता हूँ कि कम्युनिस्ट लोग मुझसे खुले दिल से बेरोक-टोक मिल सकें। इतना अगर सरकार की ओर से हो जाय, तो मेरी यात्रा न सिर्फ मेरे लिए, बल्कि अपने देश के लिए भी काफी लाभदायी होगी, ऐसी मुझे उम्मीद है।"

भावी कार्यक्रम का जो सूत्र विनोबा ने समेलन को भेंट किया था, उसमें शांति-सेना की बात थी। उसका प्रयोग खुद भी कहीं करें, इस भावना से भी विनोबाजी ने यह अपना अगला कार्यक्रम संमेलन के सदस्यों के सामने रखा। हैदराबाद के मित्रों के बीच की सामुदायिक चर्चा में उन्होंने बताया कि उनके मन में हैदराबाद की यात्रा का संकल्प तभी से था, जब बचपन में उन्होंने इतिहास का अध्ययन किया था। उसी समय उनको लगा था कि यह उपेक्षित भूमि है। और एक बार यहाँ घूम आना चाहिए। उन्हें खुशी थी कि अब वह संकल्प पूरा हो रहा है और वापसी में नलगुंडा-वरंगल होते हुए जाने का विचार उन्होंने किया है।

हैदराबाद के मित्रों से उन्होंने साफ कहा कि "जैसे अफीम के कारण चीन गुलाम हुआ था, वैसे सिन्दी के कारण ही यह तेलंगाना भी गुलाम रहा है। यहाँ आम लोगों में जो जड़ता नजर आती है, उसका सम्बन्ध भी सिन्दी के साथ है।

इस व्यसन से लोगों को छुड़ाना केवल सरकारी कानून का काम नहीं है। लोगों का स्वभाव ही बदल देने की बात है—पुरुषार्थ की बात है—यह मेरा अपना विश्लेषण है .....अगर आपको जँच जाय, तो आप सबको उस सुधार की प्रेरणा होगी।"

समाजवादी मित्रों ने कहा : "जमींदारी का मसला सिन्दी के मामले से ज्यादा अहम है। जमींदारी के कारण ही कम्युनिज्म फैला है।" तो विनोबा ने समझाया कि "उनका खयाल गलत है—कम्युनिज्म तो इसलिए फैल सका है कि दूसरे लोगों ने कोई काम ही नहीं किया है और कम्युनिस्टों ने किया है।"

विनोबाजी परंधाम में स्वावलम्बी खेती का प्रयोग कर रहे थे। तमिलनाड़, केरल, आन्ध्र और हैदराबाद के मित्रों की संयुक्त सभा में उनसे एक भाई ने इस सम्बन्ध में एक प्रश्न पूछा—विनोबा ने जो उत्तर दिया, उसमें से फिर एक दिलचस्प प्रश्नोत्तरी ही निर्माण हो गयी। उस भाई ने पूछा :

प्रश्न : "स्वावलम्बी खेती के प्रयोग का काम आप किन-किन दृष्टियों से हाथ में लेते हैं ?"

विनोबा : "जितनी दृष्टियाँ होंगी, उन सब दृष्टियों से हम काम हाथ में लेते हैं। हम गणिती हैं, छोटे से काम से अधिक लाभ लेना चाहते हैं। अल्प बुद्धि से अल्प लाभ ही होता है। हम खेती, खेती में सुधार करने की दृष्टि से करते हैं। हम खेती इसलिए भी करते हैं कि किसानों के जीवन से एकरूप हो सकें, उनके जीवन में नयी बातें दाखिल कर सकें, समग्र जीवन जीने की क्षमता उनमें निर्माण कर सकें, उन्हें बाजार के चंगुल से मुक्त कर सकें। यह सब बिना खेती के नहीं हो सकता। और अगर १००-२०० आदमियों का कोई परिवार ऐसा प्रयोग करे, जिससे बाजार की आवश्यकता न रहे और समग्र जीवन का दर्शन हो,

तो गाँववाले भी उसका अनुसरण कर सकते हैं। एक और दृष्टि—जो बुनियादी दृष्टि है, और जो हमारी खेती के काम में रहेगी—है शरीर-परिश्रम-निष्ठा बढ़ाने की। आज लोग खुद काम न करके दूसरों के परिश्रम को लूट रहे हैं। यह लूट तभी रुक सकती है, जब हरएक मनुष्य खेती में काम करने लग जाय। मेरी योजना के अनुसार हर मनुष्य को खेती में कुछ-न-कुछ काम करने को मिलना ही चाहिए। बढ़ई को भी मिलना ही चाहिए और प्रोफेसर तथा न्यायाधीश का भी कुदरत के साथ सम्बन्ध होना ही चाहिए।

"इस तरह हमारे खेती के काम में कई उद्देश्य हैं। आज तक हम इस काम में नहीं पड़ सके, क्योंकि हमें सरकार से लड़ना था। अब वह हालत नहीं रही।"

प्रश्न : "क्या खेती हरएक को मिल सकेगी ?"

विनोबा : "जरूर। आज जिसे हम खराब जमीन समझते हैं, अगर उसे भी लेना मंजूर कर लें। कुब्जा को सुन्दर बनाना हमारा काम है।"

प्रश्न : "लेकिन उसके लिए तो पैसे की जरूरत होगी न ?"

विनोबा : "नहीं, कुदाली की।"

प्रश्न : "लेकिन शुरू में कुछ दिन तो, कम-से-कम एक साल तो, नयी खेती करनेवालों की रोटी का इंतजाम हमें करना होगा। जमीन शुरू से ही फसल नहीं देती और लोग भूखे रहकर तो काम नहीं कर सकते।"

उत्तर : "आठ घंटे काम करने पर भी अगर मुझे भूखों रहना पड़े, तो मैं इस तरह भूखों मर जाना भी पसन्द करूँगा। लोगों को मेरा दाहकर्म करने का भी कष्ट नहीं उठाना पड़ेगा। खेती के गड्ढों में ही मैं गुप्त हो जाऊँगा।"

विहार के भाइयों ने भी खेती के संबंध में दिलचस्प प्रश्न पूछे :

प्रश्न : "जमीन का बँटवारा कर देने पर अधिक उत्पादन में सफलता मिल सकेगी ?"

उत्तर : "यह खयाल कुछ अधूरा है। यह नहीं हो सकता कि जमीन जैसी चीज थोड़े लोगों के हाथ में रखी जाय। लेकिन यह भी गलत है कि बिना बँटवारे के उत्पादन बढ़ नहीं सकता। हाँ, आप यह कह सकते है कि अपनी मालिकी की जमीन ज्यादा रहे बिना काम करनेवाले को उत्साह नहीं मालूम होगा। परन्तु अनुभव तो यह बताता है कि जिनके पास थोड़ी खेती है, वे अधिक-से-अधिक अच्छी खेती करते हैं। बड़ी खेती के खिलाफ छोटी खेतीवालों की यह दलील है। मेरा तो यह खयाल है कि खुली हवा और पानी की तरह जमीन का हकदार भी हरएक व्यक्ति है। जो माँगेगा, उसे सरकार कहेगी कि तेरी तकदीर में $\frac{?}{10}$ एकड़ जमीन है। आज के शहरों को हटाकर देहातों को ठीक बसाना होगा और सबको खेती करने के लिए कहना होगा।"

प्रश्न : "लेकिन जमीन कैसे दिलाइयेगा ?"

उत्तर : "कानून से। वह काम आसान है।"

प्रश्न : "अनुभव यह हुआ है कि कानून से यह चीज नहीं हो रही है। कानून बनाना ही कठिन हो रहा है।" प्रश्नकर्ता का इशारा यह था कि सत्ता प्राप्त करके मंत्रि-मंडल ढीले हो गये हैं।

उत्तर : "वह तो कुर्सी का गुण है। बिन्दु की व्याख्या करते समय प्रोफेसर कहता है कि उसकी न लंबाई है, न चौड़ाई।

लेकिन जब बिन्दु का दर्शन कराता है, तो पचास विद्यार्थियों को कैसे दीखेगा, इसका खयाल रखकर वह बिन्दु बनाता है। मैं जानता हूँ कि कानून बनाने में अनेक झगड़े हैं। इसका मुख्य सबब सुरक्षितता है। आज हमें सारी शक्ति फौज और सुरक्षा के लिए खर्च करनी पड़ती है। इसलिए दूसरे कामों के लिए साधन ही नहीं रहे। जब तक यह हल नहीं निकलता कि हमें उतनी सेना नहीं चाहिए, हम कम-से-कम सेना से काम चला लेंगे, तब तक शांति कायम नहीं हो सकती। और यह तब होगा, जब हिन्दुस्तान और पाकिस्तान आपस में यह तय करेंगे कि हमें लड़ना नहीं है।"

प्रश्न : "जिनके पास दस दस हजार एकड़ जमीन है, उनसे वह कैसे ली जाय ? उसको तकसीम कैसे किया जाय ?"

उत्तर : "कश्मीर ने क्या किया ? अगर वहाँ हो सकता है, तो यहाँ क्यों नहीं हो सकता ?"

इस तरह शिवरामपल्ली में एक सप्ताह तक सत्संग रहा। ज्ञान-यज्ञ होता रहा। देश के सुख-दुःख के संबंधित अनेक विषयों पर चर्चा हुई, संकल्प हुए और एक नयी प्रेरणा लेकर लोग अपने-अपने स्थानों को लौटे। विनोबाजी की तेलंगाना-यात्रा के संकल्प के कारण सारे सम्मेलन का ध्यान उसी ओर आकर्षित हो गया था। इसलिए लोग यद्यपि अपने-अपने स्थानों को लौट रहे थे, किन्तु उनका मन जैसे भीतर-ही-भीतर जा रहा था। कइयों के पाँव तो मजबूरी से बढ़ रहे थे, परंतु मन विनोबा के पास रुका हुआ था।

जहाँ तक जेल में जो कम्युनिस्ट बंद हैं, उनसे मिलने का सवाल है, सरकार ने विनोबाजी की इच्छानुसार उन लोगों के साथ बेरोक-टोक मिलने का प्रबन्ध भी करा दिया। सरकार ने

यह भी चाहा था कि अगर विनोबाजी इजाजत दें, तो हथियार-बंद पुलिस भी संरक्षण के लिए साथ दी जाय। परंतु ऐसे किसी प्रकार के मानवीय संरक्षण की कल्पना भी विनोबा को असह्य थी। उन्होंने एकदम इनकार कर दिया। वास्तव में जिस इरादे से वे निकल रहे थे, किसी सरकारी अधिकारी का उनके साथ रहना भी उचित नहीं था; ताकि जो कोई उनसे मिलना चाहे, नि:संकोच मिल सके।

श्री आर्यनायकम्‌जी ने सुझाया था कि तुनाई से लेकर बुनाई तक की प्रक्रियाओं का प्रदर्शन साथ रहे। शिवरामपल्ली तक की यात्रा मे इसकी आवश्यकता भी महसूस हुई थी। परंतु अब जिस परिस्थिति में से गुजरना था, यह सारा विचार स्थगित कर देना पड़ा। नित्य कताई रहेगी, और उसीमें समाधान मानना तय पाया।

सहयात्रियों में कौन साथ रहे, कौन न रहे, इसकी भी चर्चा हुई। वर्धा से शिवरामपल्ली तक तो काफी लोगों को विनोबा ने साथ रहने दिया था। उन सबकी उपस्थिति से लाभ भी बहुत हुआ था। परन्तु अब तो देश के एक त्रस्त और पीड़ित हिस्से की यात्रा थी और जान की जोखिम उठाकर जाना था। इसलिए एक ओर तो यात्रा मे आने के इच्छुक बढ़ गये थे और दूसरी ओर विनोबा ने उनकी संख्या एकदम कम कर दी थी। केवल चंद साथियों को ही इजाजत दी। जो लोग कम हुए, उनमें श्री दत्तोबा दास्ताने की कमी बहुत अखरनेवाली थी। श्री दत्तोबा और भाऊसाहब, दोनों विनोबा के शिष्यों में से थे। श्री भाऊसाहब तो बचपन मे नित हनुमानजी को मनाते रहे कि कब विनोबाजी के पास जा सकें। उनकी भक्ति के सामने पिताजी को विवश होना पड़ा। विनोबाजी के पास रहकर

उन्होंने जो शिक्षा-दीक्षा प्राप्त की, उसके परिणामस्वरूप गोपुरी का सरंजाम-कार्यालय आज उन्हींके मार्गदर्शन में चल रहा है, जहाँ से सारे देश को चरखे जाते हैं। दक्ष संस्था-संचालक के रूप में भाऊसाहब की ख्याति है।

दोनों वर्धा से साथ थे। पर अब श्री दत्तोबाजी के पिता श्री अण्णासाहेब दास्ताने, जो विनोबाजी के अनन्य भक्त थे, महाराष्ट्र में खादी-कार्य का श्रीगणेश किया। जमनालालजी, महादेव भाई, नरहरि भाई, गोपबंधु चौधरी, ऐसे जो इने-गिने परिवार सारे भारत में हैं, जिन्होंने बापू की कल्पना के अनुसार अपने बालकों को सरकारी विद्यालयों में न भेजकर घर पर या आश्रमों में पढ़ाना ही उचित समझा, उनमें से अण्णासाहब एक हैं। बचपन से ही दत्तोबा ने विनोबाजी का सत्संग पाया। कताई-बुनाई में प्राविण्य प्राप्त करने के अतिरिक्त मराठी, हिन्दी तथा अंग्रेजी में भी प्रशंसनीय योग्यता प्राप्त की। वर्धा से शिवराम-पल्ली तक के विनोबाजी के प्रवचनों को शिवरामपल्ली-सम्मेलन के अवसर पर ही पुस्तक-रूप में प्रकाशित कर देने का चमत्कार वे ही कर सके! इधर विनोबाजी के सह-यात्रियों पर होनेवाली कटौती और उधर ग्राम-सेवा-मंडल की ओर से विद्यालय के लिए उनकी माँग। इन दोनों कारणों से दत्तोबा को वर्धा लौटना पड़ा। पर उनकी स्वभाव-माधुरी और कार्य-दक्षता को सहयात्री भूल नहीं सकते थे। दोनों में से कम-से-कम एक याने भाऊ-साहब तो भी रह सकें, इसीमें सबने समाधान माना।

श्रीमती जानकीदेवी बजाज और रह गयीं, जो आना चाहती थीं और विनोबाजी शायद 'ना' भी नहीं करते। परंतु हैदराबाद से शिवरामपल्ली तक की यात्रा के दरमियान की दौड़ के परिणामस्वरूप वे बीमार पड़ गयी थीं। नहीं तो युवकों को

भी लजानेवाला उनका उत्साह उन्हें इस महान् ऐतिहासिक यात्रा में शरीक होने से वंचित न रख पाता। और विनोबाजी भी चाहे सबको 'ना' कहते, परन्तु उन्हें शायद ही रोकते। और फिर उनके रूप में एक तरह से विनोबाजी के महान् भक्त जमनालालजी की ही स्मृति साथ रहती। यह एक सहज संयोग था कि उनकी पुत्री श्री मदालसा बहन की उपस्थिति से वह सद्भाव सध सका।

सारांश, बहुत से मित्र जो आना चाहते थे और बहुत-सा सामान जो जरूरी था, सबको हैदराबाद ही में छोड़कर कूच की तैयारी हुई। हैदराबाद के मित्रों की सलाह से नलगुंडा जिले का कार्यक्रम भी बन गया और इस प्रकार यात्रा के द्वितीय और ऐतिहासिक पर्व की पूर्ण तैयारी हो गयी।

और फिर इस योजना के अनुसार ता० १४ को सवेरे विनोबाजी ने शिवरामपल्ली से कूच कर दिया। पहले दिन शाम को शिवरामपल्ली के कार्यकर्ता विनोबाजी से मिले और विदाई के उपलक्ष्य मे आशीर्वाद चाहा। सप्तपदेन के बजाय सप्त-दिवस का सत्संग हुआ था। माँगनेवालों का हक भी था। संस्था के संचालक श्री रामकृष्णजी धूत के लिए विनोबाजी इसके पहले ही 'अवधूत' की प्रसादी प्रदान कर चुके थे। श्री रामकृष्णजी को शिवरामपल्ली आये बहुत अरसा नहीं हुआ था। वे दो साल पहले ही यहाँ आये और वह भी विनोबाजी की सलाह के अनुसार। उनकी इस सेवा को इतने जल्द सम्मेलन जैसे आयोजन का मधुर फल प्राप्त हुआ था। "भक्त हृदय के बिना यह सम्भव नहीं" कहकर, "मैं उन्हें 'धूत' नहीं, 'अवधूत' कहता हूँ" ऐसा प्रेमोद्गार विनोबाजी ने निकाला था। अब उनकी संस्था की दृष्टि से दो शब्द कहे :

"एक सप्ताह मैं यहाँ रहा। मुझे काफी अच्छा लगा। संमेलन की स्मृति यहाँ कृति में दीख पड़नी चाहिए। लोगों को यह कहने का मौका नहीं मिलना चाहिए कि शिवरामपल्ली के सम्मेलन की स्मृति इतिहास में ही रह गयी। बल्कि यहाँ जो बीज बोया गया है, उसके फूल-फल, उसकी छाया लोगों को मिलनी चाहिए। बोधि-वृक्ष के समान यहाँ से सबको ज्ञान मिलना चाहिए।

"कम्युनिस्टों में या अन्य लोगों में, जो अहिंसा में नहीं मानते, जितना भाईचारा होता है, उससे ज्यादा भाईचारा हमारे कार्यकर्ताओं में आपस में दीख पड़ना चाहिए। हिंसा में माननेवाली जमातें भी आपस में प्रेम से रहती हैं, तो हमें तो दुश्मनों को भी प्रेम से जीतना चाहिए। हमको आपस में अभिन्नता का अनुभव होना चाहिए।"

१४ अप्रैल को सवेरे, शिवरामपल्ली-परिवार ने बहुत भक्ति-भाव से अपने इस महान् अतिथि को विदा किया। सीधे हैदराबाद ही जाना था, परन्तु बीच में हैदराबाद से दस मील गोलकोंडा के पास गोपुरी में विनोबाजी एक रोज के लिए रुके, और वहाँ चलनेवाले गो-सेवा-कार्य का निरीक्षण भी कर लिया। गो-सेवा-संघ की ओर से श्री लोचनदास भाई यहाँ कार्य कर रहे हैं। वर्धा में कुछ समय रहकर उन्होंने गो-सेवा के काम का अध्ययन किया है। कस्तूरबा ट्रस्ट की ओर से आज यहाँ एक बालवाड़ी का भी उद्‌घाटन किया गया।

हैदराबाद के बहुत-से नागरिक तथा सरकार के प्रतिनिधि भी यहाँ आज उपस्थित थे। हैदराबाद शहर को छोड़कर इस जंगल में आ बसने के लिए शहरवाले यहाँ के कार्यकर्ताओं को दोष भी देते थे। इस खयाल से कि शायद काम उतना न हो पाये, जितना शहर में होता। विनोबा ने अपने प्रवचन में

भाया कि शहर मे तो सेवा करनेवाले अनेक हैं। जरूरत गाँवों की सेवा की ही ज्यादा है। जो लोग कहते हैं कि यहाँ जगल मे आकर क्यो पडे हैं, उनके लिए विनोबा ने कहा कि जगल तो शहर में है, क्योकि जगल वहीं होता है जहाँ जगली लोग रहते हैं, जहाँ मनुष्य एक-दूसरे को पहचानते नहीं। जानवर की तरह एक दूसरे को खाने को दौडते हैं वह जगल नहीं तो क्या है? जो सेवक देहातों मे जाकर बसते हैं, वे तो भगवान् के उन अत्यत प्रिय भक्तो की ही सेवा करते हैं, जो देहात मे रहते हैं और जिनकी ओर किसीका ध्यान नहीं है।

कल अप्रैल का पद्रह तारीख है। कल तेलगाना की यात्रा के लिए विनोबा कूच करेंगे। यह सहज सयोग है कि कल राम-नवमी का पर्व भी है। रामनवमी के पावन स्मरण मे वनगमन का सकेत तो निहित ही है। और वनगमन का उत्साह जितना राम को था, उससे कम शाति सेना के इस सेनानी को नहीं था। उस प्रसग का वर्णन गुसाँईजी न ठीक ही किया है कि:

> नव गयदु रघुबीर मनु राजु अलान समान।
> छूट जानि बन गवनु सुनि उर अनदु अधिकान॥

युवको को त्याग और सेवा की प्रेरणा देते समय विनोबा अक्सर इन पक्तियों को दोहराते हुए अघाते नहीं। आज जब वे स्वय एक महान् मिशन पर निकल रहे हैं और जिसमे जगल और पहाड़ की यात्रा ही अधिक होनेवाली है, उपर्युक्त उक्ति उन पर यथार्थ घट रही है।

गोपुरी से विदा करनेवालो ने इस अनोखे यात्री के लिए अपनी भावनाएँ भी ऋषि की भावना मे मिलाकर कहा:

शुभास्ते पथान सतु।

●